माओ त्से तुंग

चीनी जनता के बीच

चीनी जनता के बीच

在中國人民的週圍

डॉ जगदीश चन्द्र जैन
प्रो. पीकिंग विश्व विद्यालय

१९५४
पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस लिमिटेड
बम्बई—४

समर्पित

उनको

जिन्होंने पूर्व काल में दुर्गम पथों को पार करते हुए, अपनी जानें जोखिम में डालकर भारत और चीन के बीच मित्रतापूर्ण सम्बंध स्थापित किये थे,

जो आज इन सम्बंधों को सुरक्षित रखने के लिये उद्योग कर रहे हैं और भविष्य में करते रहेंगे ।

विषय सूची

पृष्ठ

प्राक्कथन

पुरातत्व सम्बंधी खोजों से पता चलता है कि चीन में बौद्ध धर्म के प्रवेश से पहले ही भारत और चीन के व्यापारिक सम्बंध स्थापित होचुके थे। प्राचीन संस्कृत साहित्य में 'चीनांशुक' और 'चीन पट्ट' (रेशम) का उल्लेख भी इस कथन का प्रमाण है। हान् राजाओं के काल (६५ ई०) तक बौद्ध भिक्षुक चीन पहुंच चुके थे। हान् सम्राट मिंग ति (५८-७५ ई.) बौद्ध धर्म का प्रतिष्ठाता था, जिसने अपने प्रतिनिधियों को भारत भेजकर काश्यप, मातंग और धर्मरत्न नामक बौद्ध भिक्षुओं को अपनी राजधानी ल यांग में निमंत्रित किया था। अनेक पोथी-पुस्तकों के साथ श्वेत अश्वों पर आरूढ़ होकर, जब ये भारतीय विद्वान चीन पहुंचे तो उनका बड़ी धूमधाम से स्वागत किया गया और उनकी स्मृति में 'श्वेताश्व' नामक बौद्ध विहार का निर्माण हुआ था।

आगे चलकर जैसे-जैसे चीन में बौद्ध धर्म की जिज्ञासा बढ़ी, भारत के अनेक बौद्ध साधु चीन पहुंचने लगे। सन् २६६ में, धर्मरक्ष ल यांग गये और २९ वर्षों तक बौद्ध ग्रन्थों का चीनी में अनुवाद करते रहे थे। सन् ३८५ में, बौद्ध दर्शन के प्रकाण्ड पंडित कुमारजीव ने वहां १६ वर्षों तक अनेक ग्रन्थों का अनुवाद करते हुए, बौद्ध धर्म का प्रचार किया और अनेक शिष्य बनाये थे।

परन्तु, बौद्ध ग्रन्थों के अनुवादों मात्र से चीनी विद्वानों की जिज्ञासा शान्त न होपाती थी। ऐसी स्थिति में, भारत पहुंचकर बौद्ध धर्म का अध्ययन और बौद्ध तीर्थ स्थानों की यात्रा करने के लिये अनेक चीनी लालायित होउठे थे। सन् ३९९ में, प्रसिद्ध चीनी यात्री फा श्येन् ने बौद्ध सूत्रों को संग्रहीत करने के लिये अनेक विघ्न-बाधायें सहन करते हुए, मध्य एशिया के रास्ते भारत की यात्रा की थी। फा श्येन् ने तीन वर्षों तक पाटलिपुत्र (पटना) में रहकर [illegible] विनयपिटक और संस्कृत का अध्ययन किया था। अनेक तीर्थस्थानों की [illegible] करते हुए, १५ वर्षों बाद बहुत सी पोथी-पुस्तकें अपने साथ ले, [illegible] वह अपने देश लौट गये थे। अपनी भारत-यात्रा के सम्बंध में फा श्येन् ने [illegible]

था : " जब मैं अपनी यात्रा का सिंहावलोकन करता हूँ, तो मेरा हृदय बरबस ही चंचल हो उठता है और मुझे पसीना आने लगता है। मैंने अपनी जरा भी परवाह न करके जिन खतरों का सामना किया और भयानक मार्गों को पार किया, वह सब इसीलिये कि मेरे सामने एक निश्चित उद्देश्य था। अपनी सरलता और सचाई द्वारा, मैं इसे पूर्ण करने के लिये कटिबद्ध था। मैं ऐसे-ऐसे स्थानों पर जा पहुंचा, जहां मृत्यु अनिवार्य थी। यह इसीलिये कि यदि मैं अपनी कामनाओं का एक-हजारवाँ हिस्सा भी पूरा कर सकूँ, तो अपना अहोभाग्य समझूंगा।"

चीन में धीरे-धीरे बौद्ध धर्म का प्रचार बढ़ता गया। ५ वीं शताब्दी तक, वह एक प्रकार से विदेशी धर्म नहीं रह गया था। पांचवीं-छठी शताब्दी में धर्मरुचि, रत्नमति और बोधिरुचि नामक विद्वानों ने चीन में रहकर अनेक बौद्ध ग्रन्थों का चीनी भाषा में अनुवाद किया था। बौद्ध धर्म का प्रसिद्ध पंडित परमार्थ भी इन दिनों वहां गया था। सन् ५००–५१५ में, वै की राजधानी ल यांग में ३,००० बौद्ध भिक्षुक निवास करते थे, जिनमें ७० बौद्ध धर्म के प्रकाण्ड पंडित थे। ल्यू सुंग शासकों के काल में, हजारों बौद्ध पगोड़ों, मंदिरों और मूर्तियों का निर्माण हुआ था। 'चीन के अशोक' कहे जानेवाले, लयांग के प्रथम सम्राट वू (५०२–५४९ ई.) के प्रयत्न से भी, इस काल में बौद्ध धर्म का काफ़ी प्रचार हुआ था।

थांग राजाओं का काल (६१८–७०६ ई.) बौद्ध धर्म की उन्नति के लिये प्रसिद्ध है। इन्हीं दिनों चीन के दूसरे प्रसिद्ध यात्री ह्वेन् वांग ने सन् ६२९ में २५,००० मील की यात्रा २ वर्षों और ४ महीनों में करके, भारत भूमि में पैर रखा था। ह्वेन् वांग ने ५ वर्षों तक नालन्दा विश्वविद्यालय में रहकर बौद्ध धर्म के प्रसिद्ध विद्वान आचार्य शीलभद्र से विज्ञानवाद का अध्ययन किया था। ह्वेन् वांग का भारतीय नाम 'मोक्षाचार्य' था। भारत में १६ वर्ष व्यतीत करने के पश्चात, जब 'मोक्षाचार्य' ने प्रस्थान किया तो वह १२४ महायान बौद्ध धर्म के ग्रन्थ तथा ५२० अन्य ग्रन्थों को २२ टट्टुओं पर लादकर ले गये थे। दुर्भाग्य से, सिन्धु नदी पार करते समय इनमें से बहुत से ग्रन्थ नदी के गर्भ में विलीन होगये थे।

स्वदेश वापिस पहुंचने पर, चीन की जनता ने 'मोक्षाचार्य' का बड़ी से स्वागत किया था। वह जब तक जीवित रहे, बौद्ध ग्रन्थों का

अनुवाद तथा धर्म का प्रचार करने में अपना सारा समय व्यतीत करते रहे थे। अपनी सहृदयता और विद्वत्ता के कारण, वे 'वर्तमान शाक्यमुनि' के नाम से प्रसिद्ध होगये थे। भारत और चीन की पारस्परिक मित्रता के एक महान् स्तंभ, श्वेन् वांग का नाम आज भी चीन में बड़े आदर के साथ लिया जाता है और उनके विषय में अनेक किंवदन्तियां प्रचलित हैं।

बौद्ध धर्म के साथ भारतीय साहित्य, कला और ज्ञान-विज्ञान का भी चीन में प्रवेश हुआ, जिससे चीनी संस्कृति को एक नया बल प्राप्त हुआ था। पुनर्जन्म, स्वर्ग, नरक और देवी-देवता चीनी धर्मों के अंग बन गये। ताव् धर्म के अनुयायियों ने, बौद्ध सूत्रों की भांति, अपने धार्मिक उपदेशों को भी सूत्र रूप में ही संकलित किया। चीन में छान् (ध्यान), फा श्यांग (धर्मलक्षण), ल्यूवू (विनय) आदि मतों का प्रादुर्भाव हुआ। ख़ासकर सुंग काल में, कुछ प्रसिद्ध दार्शनिकों का जन्म हुआ था। बौद्ध धर्म द्वारा चीनी साहित्य और चीनी भाषा के प्रभावित होने के साथ-साथ, उससे सम्बंध रखनेवाले शब्दों का भी चीन में प्रवेश हुआ था।

चीन में ब्लॉक की छपाई का आविष्कार होने से, सन् ८६८ में 'बौद्ध सूत्र'--संसार की सर्व प्रथम छपी हुई पुस्तक--छापी गई, जिससे बौद्ध धर्म के प्रचार में सहायता मिली थी। क्रमशः बौद्ध धर्म राजधर्म तक सीमित न रहकर, जनता में फैलने लगा था। कहा जाता है कि सन् ८४५ की जन-गणना के अनुसार, चीन में लगभग ४,६०० बौद्ध मंदिर, ४०,००० बौद्ध स्तूप और २,६०,५०० भिक्षु-भिक्षुणियां थे। बौद्ध मंदिर लोहे, कांसे, चांदी, सोने, रत्नों आदि की बनी हुई अनगिनत क़ीमती मूर्तियों से मालामाल थे। आगे चलकर, उत्तर-पश्चिमी चीन में बौद्ध धर्म का और अधिक प्रचार हुआ। घर-घर शाक्यमुनि (ष्ट जा मो नि), अमिताभ (अमि तोफ़ो) और दया की देवी अवलोकितेश्वर (क्वान् यिन्) की पूजा होने लगी, मंदिरों में धूप चढ़ाई जाने लगी, शान्ति-स्तोत्र पढ़े जाने लगे, जीव हिंसा के विरुद्ध घोषणायें की गई, शाकाहारी भोजन का प्रचार हुआ और शवदाह की भारतीय प्रथा चल पड़ी थी।

चीनी चित्रकला पर भी बौद्ध धर्म का प्रभाव पड़ा था। पहले ख़ासकर राज दरबार, प्राकृतिक दृश्य तथा शृंगार आदि का ही चित्रण किया जाता था। इनकी जगह बुद्ध, बोधिसत्व, लोहान् (अर्हत्) देवी-देवताओं तथा उपासकों के चित्र भी निर्मित किये जाने लगे। तुन् ह्वांग और ता थुंग आदि की गुफ़ाओं

था : " जब मैं अपनी यात्रा का सिंहावलोकन करता हूँ, तो मेरा हृदय बरबस ही चंचल हो उठता है और मुझे पसीना आने लगता है। मैंने अपनी जरा भी परवाह न करके जिन खतरों का सामना किया और भयानक मार्गों को पार किया, वह सब इसीलिये कि मेरे सामने एक निश्चित उद्देश्य था। अपनी सरलता और सचाई द्वारा, मैं इसे पूर्ण करने के लिये कटिबद्ध था। मैं ऐसे-ऐसे स्थानों पर जा पहुंचा, जहां मृत्यु अनिवार्य थी। यह इसीलिये कि यदि मैं अपनी कामनाओं का एक-हजारवाँ हिस्सा भी पूरा कर सकूँ, तो अपना अहोभाग्य समझूंगा।"

चीन में धीरे-धीरे बौद्ध धर्म का प्रचार बढ़ता गया। ५ वीं शताब्दी तक, वह एक प्रकार से विदेशी धर्म नहीं रह गया था। पांचवीं-छठी शताब्दी में धर्मरुचि, रत्नमति और बोधिरुचि नामक विद्वानों ने चीन में रहकर अनेक बौद्ध ग्रन्थों का चीनी भाषा में अनुवाद किया था। बौद्ध धर्म का प्रसिद्ध पंडित परमार्थ भी इन दिनों वहां गया था। सन् ५००–५१५ में, वे की राजधानी ल यांग में ३,००० बौद्ध भिक्षुक निवास करते थे, जिनमें ७० बौद्ध धर्म के प्रकाण्ड पंडित थे। ल्यू सुंग शासकों के काल में, हजारों बौद्ध पगोडों, मंदिरों और मूर्तियों का निर्माण हुआ था। 'चीन के अशोक' कहे जानेवाले, लयांग के प्रथम सम्राट वू (५०२–५४९ ई.) के प्रयत्न से भी, इस काल में बौद्ध धर्म का काफ़ी प्रचार हुआ था।

थांग राजाओं का काल (६१८–७०६ ई.) बौद्ध धर्म की उन्नति के लिये प्रसिद्ध है। इन्हीं दिनों चीन के दूसरे प्रसिद्ध यात्री ह्वेन् सांग ने सन् ६२९ में २५,००० मील की यात्रा २ वर्षों और ४ महीनों में करके, भारत भूमि में पैर रखा था। ह्वेन् सांग ने ५ वर्षों तक नालन्दा विश्वविद्यालय में रहकर बौद्ध धर्म के प्रसिद्ध विद्वान आचार्य शीलभद्र से विज्ञानवाद का अध्ययन किया था। ह्वेन् सांग का भारतीय नाम 'मोक्षाचार्य' था। भारत में १६ वर्ष व्यतीत करने के पश्चात, जब 'मोक्षाचार्य' ने प्रस्थान किया तो वह १२४ महायान बौद्ध धर्म के ग्रन्थ तथा ५२० अन्य ग्रन्थों को २२ टट्टुओं पर लादकर ले गये थे। दुर्भाग्य से, सिन्धु नदी पार करते समय इनमें से बहुत से ग्रन्थ नदी के गर्भ में विलीन होगये थे।

स्वदेश वापिस पहुंचने पर, चीन की जनता ने 'मोक्षाचार्य' का बड़ी धूमधाम से स्वागत किया था। वह जब तक जीवित रहे, बौद्ध ग्रन्थों का

अनुवाद तथा धर्म का प्रचार करने में अपना सारा समय व्यतीत करते रहे थे। अपनी सहृदयता और विद्वत्ता के कारण, वे 'वर्तमान शाक्यमुनि' के नाम से प्रसिद्ध होगये थे। भारत और चीन की पारस्परिक मित्रता के एव महान् स्तंभ, श्वेन् वांग का नाम आज भी चीन में बड़े आदर के साथ लिय जाता है और उनके विषय में अनेक किंवदन्तियां प्रचलित हैं।

बौद्ध धर्म के साथ भारतीय साहित्य, कला और ज्ञान-विज्ञान का भी चीन में प्रवेश हुआ, जिससे चीनी संस्कृति को एक नया बल प्राप्त हुआ था। पुनर्जन्म, स्वर्ग, नरक और देवी-देवता चीनी धर्मों के अंग बन गये। ताव् धर्म के अनुयायियों ने, बौद्ध सूत्रों की भांति, अपने धार्मिक उपदेशों को भी सूत्र रूप में ही संकलित किया। चीन में छान् (ध्यान), फा श्यांग (धर्मलक्षण), ल्यूवू (विनय) आदि मतों का प्रादुर्भाव हुआ। खासकर सुंग काल में, कुछ प्रसिद्ध दार्शनिकों का जन्म हुआ था। बौद्ध धर्म द्वारा चीनी साहित्य और चीनी भाषा के प्रभावित होने के साथ-साथ, उससे सम्बंध रखनेवाले शब्दों का भी चीन में प्रवेश हुआ था।

चीन में ब्लॉक की छपाई का आविष्कार होने से, सन् ८६८ में 'बौद्ध सूत्र'--संसार की सर्व प्रथम छपी हुई पुस्तक--छापी गई, जिससे बौद्ध धर्म के प्रचार में सहायता मिली थी। क्रमशः बौद्ध धर्म राजधर्म तक सीमित न रहकर, जनता में फैलने लगा था। कहा जाता है कि सन् ८४५ की जन-गणना के अनुसार, चीन में लगभग ४,६०० बौद्ध मंदिर, ४०,००० बौद्ध स्तूप और २,६०,५०० भिक्षु-भिक्षुणियां थे। बौद्ध मंदिर लोहे, कांसे, चांदी, सोने, रत्नों आदि की बनी हुई अनगिनत क़ीमती मूर्तियों से मालामाल थे। आगे चलकर, उत्तर-पश्चिमी चीन में बौद्ध धर्म का और अधिक प्रचार हुआ। घर-घर शाक्यमुनि (ष्ट जा मो नि), अमिताभ (अमि तोफ़ो) और दया की देवी अवलोकितेश्वर (क्वान् यिन्) की पूजा होने लगी, मंदिरों में धूप चढ़ाई जाने लगी, शान्ति-स्तोत्र पढ़े जाने लगे, जीव हिंसा के विरुद्ध घोषणायें की गईं, शाकाहारी भोजन का प्रचार हुआ और शवदाह की भारतीय प्रथा चल पड़ी थी।

चीनी चित्रकला पर भी बौद्ध धर्म का प्रभाव पड़ा था। पहले खासकर राज दरबार, प्राकृतिक दृश्य तथा शृंगार आदि का ही चित्रण किया जाता था। इनकी जगह बुद्ध, बोधिसत्व, लोहान् (अर्हत्) देवी-देवताओं तथा उपासकों के चित्र भी निर्मित किये जाने लगे। तुन् ह्वांग और ता थुंग आदि की गुफ़ाओं

में बुद्ध के जीवन से सम्बंधित अनुपम कलामय चित्र इसके प्रमाण हैं। चीन में तुन् हांग बौद्ध धर्म का एक मुख्य केन्द्र था। ५ वीं से ८ वीं शताब्दी तक, यहां अनेक बौद्ध गुफ़ायें निर्मित की गई थीं, जिन्हें सहस्र बुद्ध गुफ़ायें कहा जाता है।

चित्र-विद्या के समान, चीनी शिल्पकला, संगीत, गणित, ज्योतिष और आयुर्वेद पर भी भारतीय विद्याओं का प्रभाव पड़े बिना न रहा। अनेक भारतीय लोक कथायें चीनी कथाओं का अंग बन गई। चीनी लोग बौद्ध फू सा (बुद्ध) की जन्मभूमि, भारत की यात्रा करने के लिये लालायित रहने लगे थे।

भारतीय संस्कृति पर भी चीनी संस्कृति का प्रभाव पड़ा है। चीनांशुक और चीन पट्ट का उल्लेख पहिले किया जाचुका है। संस्कृत में आड़ू को चिनानि और नाशपाती को चीन राजपुत्र कहा जाता है। ये दोनों फल आजकल भी चीन में बहुत प्रसिद्ध हैं। बहुत संभव है कि ये चीन से ही भारत में आये हों। लीची भी चीन का ही एक फल है, जिसे चीन में ली चृ कहा जाता है। मूंगफली हिन्दी में चीनिया बादाम के नाम से प्रसिद्ध है। इसी प्रकार, अन्य क्षेत्रों पर भी चीनी संस्कृति का प्रभाव पड़ना लाज़िमी है, जिसकी खोज की आवश्यकता है। भारत का बहुत सा बौद्ध साहित्य, जो भारत में अनुपलब्ध है, का चीनी रूपान्तर आज भी चीन में सुरक्षित है। उसके अध्ययन से भारतीय इतिहास की तमाम खोई हुई कड़ियों को जोड़ा जा सकता है।

ल्याव् और सुंग के शासन-काल में, सन् ९७२ से १०५३ तक संस्कृत ग्रन्थों का चीनी में अनुवाद करने के लिये भारत से आख़िरी बार २१ विद्वान बुलाये गये थे। इसके बाद, चीन और भारत के विद्वानों का आना-जाना एक प्रकार से बन्द ही होगया, यद्यपि इसके बाद भी मिंग राजाओं के काल में ख़ासकर दक्षिणी भारत के साथ चीन का व्यापारिक सम्बंध बना रहा था। सन् १४०५ से १४३२ के बीच, छेंग ह अनेक बार दक्षिणी समुद्र की यात्रा कर कोचीन और कालीकट तक पहुंचा था। कालीकट के राजा ने भी अनेक बार अपने दूत चीन भेजे, जिन्होंने आख़िरी बार सन् १४३३ में चीन की यात्रा की थी।

इस समय पश्चिम की साम्राज्यवादी ताक़तों ने एशिया को अपना उपनिवेश बनाकर कब्ज़ा करना आरंभ कर दिया था, जिससे ४०० वर्षों तक

भारत और चीन के पारस्परिक सांस्कृतिक सम्बंध प्रायः विछिन्न ही रहे; यद्यपि दोनों की पारस्परिक सहानुभूति और शुभेच्छाओं में कोई भी परिवर्तन नहीं आया।

सन् १९२४ में विश्व कवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने चीन की यात्रा की थी। सदियों बाद अपने भारतीय मित्र से मिलकर, चीनी जनता ने हार्दिक प्रसन्नता व्यक्त की और अनेक उपहारों आदि से उनका स्वागत किया था। कुछ समय बाद चीन पर जापानी आक्रमण होने के पश्चात, पंडित जवाहर लाल नेहरू के प्रस्ताव पर, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने सन् १९३८ में जापानी माल के बहिष्कार की घोषणा की और चीनी जनता के प्रति सद्भावना से एक मेडिकल मिशन भेजा था। डा. द्वारकानाथ कोटणीस उस मिशन के मुख्य सदस्यों में थे, जिन्होंने युद्ध में घायल हुए व्यक्तियों की चिकित्सा करते हुए चीन की भूमि में ही अपने प्राण दिये थे और अपने बलिदान से भारत और चीन की मित्रता को अखण्ड बना दिया है। इसके बाद सन् १९३९ में, पंडित जवाहरलाल नेहरू ने चीन की यात्रा करके दोनों राष्ट्रों के बीच सम्पर्क तथा सौहार्द बनाये रखा था।

हमारे दोनों महान् राष्ट्रों के पुरातन सम्बंधों की राह में विदेशी साम्राज्यवाद ही एक रोड़ा बना हुआ था। इसीलिये, जब सन् १९४७ में अंग्रेजी साम्राज्यवाद ने भारत में जनता के आन्दोलन से घबराकर, बड़ी चतुराई से कांग्रेस के हाथों में सत्ता हस्तातंरित की और उधर सन् १९४९ में, चीनी जनता ने अपने को पूरी तौर से मुक्त कर लिया तो दो महान् पड़ोसी मित्रों में पुनः सांस्कृतिक आदान-प्रदान आरंभ होगया। सितम्बर सन् १९५१ में पंडित सुंदरलाल के नेतृत्व में, भारत के प्रथम सद्भावना प्रतिनिधि-मंडल ने चीन के लिये प्रस्थान किया। इसी समय तिंग शी लिन् के नेतृत्व में, चीनी सरकार द्वारा प्रेषित सांस्कृतिक प्रतिनिधि-मंडल भारत आया था। मई सन् १९५२ में श्रीमती विजयलक्ष्मी पंडित के नेतृत्व में, भारत सरकार ने सांस्कृतिक-प्रतिनिधि-मंडल चीन भेजा था। अक्तूबर सन् १९५२ में, पीकिंग में होनेवाली एशियाई और प्रशान्त के देशों की शान्ति-परिषद् के सम्मेलन में उपस्थित होकर, भारत के अनेक प्रतिनिधियों ने शान्ति के लिये आवाज़ बुलन्द की है।

चीन की मुक्ति के पश्चात उसकी सांस्कृतिक, राजनीतिक और आर्थिक गतिविधियों को जानने के लिये भारतीय जनता की भूख बहुत बढ़ गई है। यही कारण है कि भारत में चीन सम्बंधी साहित्य काफ़ी परिमाण में प्रकाशित होरहा है। बनारस से प्रकाशित होनेवाले, **नया चीन** नामक हिन्दी मासिक में तो चीन सम्बंधी लेख ही रहते हैं। हिन्दी, अंग्रेज़ी तथा अनेक प्रांतीय भाषाओं में तमाम मौलिक पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं। शान्ति निकेतन की विश्वभारती तथा कलकत्ता, इलाहाबाद और बनारस की युनिवर्सिटियों में चीनी भाषा की शिक्षा भी दी जाती है।

भारतीय जनता की भांति, चीनी जनता भी भारत के सम्बंध में ज्ञान प्राप्त करने को उत्कंठित है। आजकल चीन के विद्यार्थियों में भारत के प्रगतिशील साहित्य का अध्ययन करने की इच्छा दिन पर दिन बढ़ती जारही है। उर्दू के प्रगतिशील लेखक कृश्न चन्दर की कहानियों का संग्रह **ह्वो येन् ख्वू ह्वा** (आग की ज्वाला और फूल) नाम से अभी हाल में चीनी में प्रकाशित हुआ है और अधिक भारतीय रचनाओं के अनुवादों की योजना बनाई गई है।

भारत और चीन संसार के दो महान् राष्ट्र हैं। इन दोनों राष्ट्रों की अटूट मैत्री से विश्व की शान्ति सुरक्षित रह सकती है। दोनों ही सदा से शान्तिप्रिय देश रहे हैं और हमेशा युद्ध तथा बर्बरता का विरोध करते रहे हैं। आज भी वे 'एशिया के ख़िलाफ़ एशिया' की अमरीकी साम्राज्यवादी नीति के विरुद्ध अपनी आवाज़ बुलन्द कर रहे हैं। भारत की जनता का दृढ़ विश्वास है कि अपने अनवरत संघर्षों में साम्राज्यवादी और सामंतवादी शक्तियों के विरुद्ध मोरचा लेकर, चीनी जनता ने जो ऐतिहासिक क्रान्ति की है उसके प्रवाह को दुनिया की कोई भी ताक़त नहीं उलट सकती। भारत भी साम्राज्यवादी और सामंती आर्थिक शिकंजे से जैसे-जैसे अपने को मुक्त करता जायेगा, अपने ही पैरों पर खड़ा होता जायेगा, वैसे ही वैसे हम दोनों के सम्बंध दृढ़तर होते जायेंगे।

पं. नेहरू ने चीनी जनता के प्रति अपनी सद्भावना व्यक्त करते हुए, कहा है: "पूर्वी एशिया को समझने का मौलिक आधार यह है कि नये चीन को समझा जाय। यह बड़े सन्तोष की बात है कि ३०-४० वर्षों के लम्बे

गृह-युद्ध और सरदारों के शासन के बाद, पहली बार चीन में एक शक्तिशाली केन्द्रीय सरकार स्थापित हुई है जिसने अमन-चैन क़ायम किया है। चीन अब एक ऐसा राष्ट्र है जिसे अपनी शक्ति और राष्ट्रीयता पर गर्व है। चीनी जनता में धैर्यपूर्वक कड़ा परिश्रम करने की आश्चर्यजनक क्षमता है, उनकी राजनीति जो भी हो। आज चीन अपनी भौगोलिक सीमाओं में एक शक्तिशाली महान् राष्ट्र है और उसकी शक्ति दिन पर दिन बढ़ती ही जायेगी।"

जब मुझे पीकिंग विश्वविद्यालय के पौर्वात्य भाषा और साहित्य-विभाग में अध्यापन का आमंत्रण मिला तो मुझे अत्यन्त ही प्रसन्नता हुई थी। मैंने सोचा था कि नये चीन को अध्ययन करने का यह स्वर्ण अवसर न खोना चाहिये। अपने राम नारायण रुइया कालिज, बम्बई से कुछ समय के लिये अवकाश प्राप्त कर, मैं अपनी पुत्री चक्रेश के साथ चीन के लिये रवाना होगया था।

वह दिन मुझे सदा याद रहेगा, जब ब्रिटिश सीमा को लांघकर पहले-पहल चीन की भूमि के दर्शन किये थे। सीधे-सादे चीनी नर-नारियों के हंसते-मुस्कराते हुए, जिज्ञासापूर्ण चेहरे कभी न भूले जा सकेंगे! रह-रहकर मन में विचार आता था: 'क्या यह वही जन समूह है, जो सदियों के शोषण और उत्पीड़न से मुक्त होगया है? क्या इसी जनता ने अमरीकी अस्त्र-शस्त्रों से लैस च्यांग काई शेक की सेनाओं के छक्के छुड़ाये हैं?'

कैण्टन पहुँचने पर, पता लगा कि पीकिंग विश्वविद्यालय के पौर्वात्य भाषा और साहित्य-विभाग के प्रमुख डा. चि श्येन् लिन् हम लोगों को लेजाने के लिये आये थे। विश्वविद्यालय के प्रेसीडेण्ट और वाइस प्रेसीडेण्ट का जो पत्र वे लेकर आये थे, वह अपने देश के प्रति चीनी जनता की भावना को व्यक्त करता है:

यह जानकर हम बहुत प्रसन्न हैं कि आप कैण्टन आगये हैं। आपका स्वागत करने के लिये, हम अपनी ओर से पौर्वात्य भाषा और साहित्य-विभाग के प्रमुख डा. चि श्येन् लिन् को भेज रहे हैं।

चीन और भारत दोनों पड़ोसी देश हैं। गत कई हज़ार वर्षों से दोनों देश सदा शान्तिपूर्वक रहे हैं। यह तो ठीक नहीं कहा जा सकता कि कितने चीनी विद्वानों ने भारत की यात्रा की और कितने भारतीय विद्वान चीन आये थे, लेकिन इससे दोनों देशों के सांस्कृतिक आदान-प्रदान में उन्नति हुई और दोनों के मित्रतापूर्ण सम्बंध दृढ़ हुए हैं।

नये चीन का जन्म होने के पश्चात, हमारी मित्रता एक नूतन रूप लेरही है। हम जानते हैं कि आपको नया चीन बहुत प्रिय है। आप एक भारतीय विद्वान के रूप में हमारे देश के नवयुवकों को शिक्षा देने आरहे हैं। यह चीन और भारत के पारस्परिक सांस्कृतिक आदान-प्रदान के इतिहास में बहुत महत्वपूर्ण घटना है। हमें निश्चय है कि आपको चीन के नवयुवकों का प्रेम प्राप्त होगा। हम आपका हार्दिक स्वागत करते हैं।

आशा है आप स्वस्थ होंगे।

आपके शुभचिन्तक

(प्रेसीडेण्ट) मा यिन् छू

६ अप्रैल, ५२ (वाइस प्रेसीडेण्ट) थांग युंग थुंग

चीनी मित्रों के हार्दिक प्रेम और सत्कार के प्रति किन शब्दों में कृतज्ञता प्रकाशित करूं? उनके इस भार से उऋण होने के लिये मेरे पास कुछ भी नहीं है, सिवाय इसके कि मैं यह पुस्तक लिखकर दोनों देशों की जनता के बीच की ऐतिहासिक मित्रता को अधिक दृढ़ बनाने की कोशिश करूं और इसी उद्देश्य के लिये सक्रिय रूप से काम करता रहूं।

पीकिंग के चीन-भारत मित्र-मण्डल के अध्यक्ष, तिंग शी लिन् के सौजन्य से मुझे पुस्तक सम्बंधी अनेकों प्रकार की सामग्री प्राप्त हुई है। प्रोफेसर चिन् ख मु ने इस पुस्तक को आद्योपान्त पढ़कर सुझाव दिये हैं। मेरे मित्र यिन् हुंग ग्वेन् ने किसी प्रकार समय निकालकर पुस्तक को टाइप करने की कृपा की है। मेरी पुत्री चक्रेश का इस पुस्तक के लिखे जाने में विशेष सहयोग रहा है। वह हमेशा मेरे साथ रही है। उसकी आलोचना का मैंने पूरा लाभ उठाया है। इस पुस्तक की सज्जा और चीनी अक्षरों में शीर्षक तैयार करने में तो उसने विशेष उत्साह से काम किया है।

मैं इन सबका हृदय से आभारी हूं।

पीकिंग विश्वविद्यालय,
अन्तर्राष्ट्रीय दिवस,
१ ली मई '५३.

जगदीश चन्द्र जैन
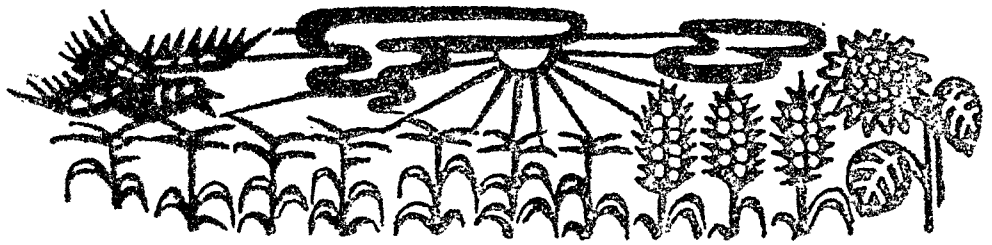
चीन की ओर

'एस. एस. कैण्टन' एक विशाल भवन के समान प्रतीत होता था। यहां यात्रियों की सुख-सुविधा के सब साधन मौजूद थे—सिनेमा, रेडियो, लाइब्रेरी, 'स्विमिंग पूल,' बच्चों की 'नर्सरी,' विविध प्रकार के मनोरंजक खेल आदि। घंटी बजते ही विविध वेशभूषाओं से सज्जित यात्री भोजन-गृह में प्रवेश करते; संभ्रान्त महिलायें भिन्न-भिन्न प्रकार से अपने केशों और विविध वर्णों के वस्त्रों से अपने शरीरों को सजा कर, बड़े गर्व से प्रविष्ट होतीं। नये-नये व्यंजनों का 'मेनु' प्रति दिन कार्डों पर छपता। योरुपियन पोशाकें पहिने, बैरा लोग मशीनों की भांति काम करने लगते। छुरी-कांटों की आवाज से भोजन-गृह गूंज उठता। भोजन के उपरान्त चाय, कॉफ़ी और आइसक्रीम की बारी आती। बियर और ह्विस्की के रेस्तोरांओं के द्वार सदा ही खुले रहते। रात्रि के समय लॉटरी, नृत्य, सिनेमा आदि का कार्यक्रम चलता।

वातावरण बदल गया था। नवोदित सूर्य अपनी लालिमा के साथ ऊपर उठता हुआ, आकाश-मंडल को रक्तिम किरणों से आलोकित कर रहा था। विशालकाय एस. एस. कैण्टन समुद्र की उत्ताल तरंगों को चीरता हुआ, उनके साथ अठखेलियाँ करता हुआ चला जा रहा था। तरंगराशि नाद करती हुई, दूर से आकर जहाज से टकराती और जब जहाज जलतरंगों को काटता हुआ दौड़ता तो दोनों ओर फेन ही फेन दिखाई देने लगता, जो शीघ्र ही हरे रंगों में शीर्ण-विशीर्ण हो जाता। संध्या समय, पश्चिम में विविध वर्णों के मेघ नानारूप धारण करते हुए बड़े मनमोहक प्रतीत होते। रात्रि के समय, जहाज के आन्दोलित होने से अन्तरिक्ष की तारक-पंक्तियां भी आन्दोलित होती हुईं दिखाई देतीं; जान पड़ता कि हम लोग किसी विशाल झूले में झूलते हुए जा रहे हैं।

जहाज़ पर काफ़ी चहल-पहल थी। नये यात्री इधर-उधर घूम कर, प्रत्येक वस्तु को बड़े ध्यानपूर्वक देख रहे थे। संकुचित राष्ट्रीयता अन्तर्राष्ट्रीयता में परिवर्तित हो गई थी। विभिन्न वस्त्र धारण किये, भिन्न-भिन्न वर्णों और आकृतियों के स्त्री-पुरुष—चीनी, बरमी, मलायाई, अफ्रीकी, हिन्दुस्तानी, योरुपियन, अमरीकन जहाँ-तहां दिखाई दे रहे थे। जहां गर्व से चलनेवाली योरुपियन महिलायें अपने प्रियतमों की बांहों में बांहें डाले स्वच्छन्दतापूर्वक घूम रही थीं, वहीं बोराह् जाति की परदानशीन महिलायें भी थीं, जो पर-पुरुष की छाया मात्र से परदे की ओट हो जातीं थीं। दम्पति अपने बाल-बच्चों के साथ क्रीड़ा कर रहे थे, कुछ स्विमिंग पूल में स्नान कर रहे थे। एक ओर 'लाइफ जाकिटें' पहिना कर, नये यात्रियों से परेड कराई जा रही थी। कोई चहलक़दमी कर रहा था। कोई समुद्र की तरंगों का बड़े ध्यान से निरीक्षण कर रहा था। अथाह जलराशि के सिवाय और कुछ दृष्टिगोचर न होता। रात्रि के समय, 'लाइट हाउस' का टिमटिमाता हुआ प्रकाश बड़ा मनोरम जान पड़ता। कभी-कभी अंधेरे में, पास से गुज़रने वाला कोई अपरिचित जहाज विद्युत-प्रकाश के इशारों द्वारा बातचीत करता हुआ यात्रियों का ध्यान आकर्षित करता।

लंका की राजधानी कोलम्बो में प्रवेश करते ही, अथाह जलराशि पर क्रीड़ा करते हुए असंख्य जलपोत दृष्टिगोचर होने लगे। बहुत से 'कारगो' खड़े हुए थे। कच्चा माल ढोकर, अपने देश में ले जाने और वहां से पक्का माल लाने के लिये ही अंग्रेजों ने एशिया के बन्दरगाहों को समृद्ध बनाया था। नगर में प्रवेश करने पर लुंगी लगाये, गंजी पहने, दुबले-पतले और कृष्ण वर्ण के स्त्री-पुरुष दिखाई दिये। सड़क के किनारे पैदल-रिक्शा-कुली अपने रिक्शों को लिये, सतृष्ण नयनों से यात्रियों को निहार रहे थे। क्षण भर में, 'टैक्सी' के दलालों और मार्ग-दर्शकों की भीड़ लग गई। सड़कों के किनारे लेटे हुए, विकलांग भिखारी अपना पेट दिखा कर भीख मांग रहे थे। भिखारी बालक अंग्रेज़ी में बोल कर याचना कर रहे थे।

लंका में बौद्ध मंदिरों की भरमार है। भारत के शिव और हनुमान के मंदिरों की भांति, यहां के छोटे-मोटे बौद्ध मंदिर भी पीपल के वृक्षों के नीचे बने हैं। जिस धर्म का भारत में आविर्भाव हुआ और जो वहीं फूला-फला, उसका अपनी जन्मभूमि में नाम-निशान भी बाक़ी न रहा, इसे भारत के जाति और वर्णवाद की घोर विडम्बना ही समझनी चाहिये।

सुमात्रा और वाली द्वीपों को पार करते हुए, हम मलाया की ओर बढ़ रहे थे। पीनांग (सुपारी), कुआला लुम्पुर (नदियों का मुहाना), पोर्ट डिक्सन और मलाका यहां के प्रसिद्ध स्थान हैं। मलाया में रवर, टीन, सुपारी, नारियल रांगे और सावुदाने का बड़ा व्यापार होता है। रवर और टीन का व्यापार अधिकांश अंग्रेज़ों और अमरीकियों के हाथों में है। चेट्टियरों की नारियल-रियासत प्रसिद्ध है। यह देश अपनी पहाड़ियों और घाटियों के कारण दुनिया का एक रमणीय स्थान माना जाता है। पीनांग की सड़कें स्वच्छ व सुन्दर हैं; बाज़ार सुव्यवस्थित ढंग से बने हुए हैं। चीनी अक्षरों में लिखे हुए दूकानों के बोर्ड ऐसे मालूम होते हैं जैसे चित्रकला की कोई प्रदर्शिनी दिखाई जा रही हो। रंग-बिरंगी सारंगें (साड़ीनुमा लुंगियां), लंवी जाकिटें और ओढ़नियों से सुसज्जित मलायाई रमणियाँ तथा विविध वर्णों की पोशाकें पहिने चीनी युवतियाँ घूम रही हैं। सड़कों के दोनों ओर आधुनिक ढंग के आलीशान बंगले बने हैं, जिनके आसपास बाग़-बगीचे लगे हुए हैं। ग्रीष्म ऋतु में भी रंग-बिरंगे पुष्प खिल रहे हैं और चारों ओर हरियाली ही हरियाली नज़र आ रही है।

बोटैनिकल गार्डन, माउण्ट प्लेज़र, पीनांग हिल आदि यहां के दर्शनीय स्थान हैं। माउण्ट प्लेज़र मनोरम वृक्षावलियों और झाड़ियों से घिरा हुआ है। पीनांग हिल २,५०० फीट ऊंची है। दो डिब्बों वाली छोटी सी रेलगाड़ी में बैठ कर इस पर पहुँचते हैं। पहाड़ी के ऊपर धनिकों और अफ़सरों के बंगले, पुलिस स्टेशन, तारघर, डाकखाना, होटल आदि हैं। यहां से नीचे की ओर दृष्टिपात करने से, छोटे पौधों के समान दिखाई देने वाले नारियल के वृक्ष कितने मनोरम जान पड़ते हैं! पीनांग में अनेक बौद्ध मंदिर हैं। मंदिरों में बुद्ध की मूर्ति के पास ही दाताओं की तख़्तियाँ टँगी हुई हैं। बड़े दाताओं की तसवीरें सजा कर लगाई गई हैं। यहां आयर इतम (काला पानी) नाम का प्रसिद्ध बौद्ध मंदिर है, जो तिब्बत और मध्य चीन के बाहर अपने ढंग का अद्भुत है। बुद्ध के अतिरिक्त, उनके शिष्य-परिवार तथा अन्य देवी-देवताओं की विशालकाय पुरुषाकार, मूंछ-दाढ़ी वाली मूर्तियां बनी हुई हैं। नगर से ९–१० मील की दूरी पर, एक प्राचीन सर्प मन्दिर है। पीनांग की दूसरी उल्लेखनीय वस्तु है यहां के मनोरंजक मेले, जिन्हें 'एम्यूज़मेण्ट पार्क' कहते हैं। ये मेले रात्रि के समय भरते हैं, जिनमें मलायाई और चीनी नर-नारी वेष-भूषा से सज्जित हो आमोद-प्रमोद के लिये एकत्रित होते हैं। इन मेलों में चीनी ऑपेरा, मलायाई नृत्य, 'मैरी गो राउण्ड' तथा विविध प्रकार के मनोरंजक

खेलों का प्रदर्शन किया जाता है। चीनी ऑपेरा देखनेवालों का जमघट लगा हुआ है। लॉटरी लगाई जा रही है। सुरापान हो रहा है।

श्रमजीवियों के मकान दूर से पहचाने जा सकते हैं, जो प्रायः लकड़ी के बने हुए हैं। कुछ लोग झोपड़ियों में भी रहते हैं। चावल के खेत दिखाई पड़ रहे हैं, जिनकी कटाई वगैरह पुराने तरीकों से होती है। धान काटकर, सड़क के किनारे धूप में सुखा दी गई है। मलाया का अधिकांश चावल श्याम से और गेहूं आस्ट्रेलिया से आता है। यदि यहाँ चावल की खेती होने लगे तो, सोचिये फिर रबर और टीन के अरबपति व्यापारियों का पेट कहां से भरे !

फरवरी सन् १९४२ में बम गिराकर, जापानियों ने क्षणभर में पीनांग पर कब्ज़ा कर लिया था। बमबारी के ध्वंसावशेष अभी तक मौजूद हैं। जापानियों का राज्य लगभग साढ़े तीन वर्षों तक रहा था। इस बीच में, उन्होंने अनेक शर्मनाक और वीभत्स कृत्यों द्वारा मलायावासियों को कष्ट पहुंचाया था। दुर्भाग्य से यही कार्य आज ब्रिटिश शासक कर रहे हैं। मलाया के वीर लड़ाकुओं को 'आतंकवादी', 'लुटेरे' और 'हत्यारे' बताकर, हज़ारों स्त्री-पुरुषों को 'कन्सण्ट्रेशन कैम्पों' में डाल, २२ घंटों का करफ़्यू लगा, विषाक्त गैसों द्वारा खेती-बारी नष्ट कर तथा शिरच्छेद करने वालों के लिये पारितोषिकों की घोषणा कर जनरल टैम्पलर मलायाई, चीनी और भारतीय जनता का क्रूर दमन करने पर तुला हुआ है। सड़कों पर बंदूकधारी पुलिस घूम रही है तथा योरुपियनों के बंगले और स्नानगृह तक पुलिस द्वारा सुरक्षित बना दिये गये हैं !

सिंगापुर पूर्व में व्यापार का बहुत बड़ा केन्द्र है। कई मीलों के घेरे में जहाज़ों की गोदियां बनी हुई हैं। जावा, सुमात्रा, बैंकाक आदि के लिये यहां से जहाज छूटते हैं। बोर्निओ, जावा, आस्ट्रेलिया, श्याम, भारत, मिश्र, ब्रिटेन आदि के लिये हवाई जहाज़ जाते हैं। रंग-बिरंगे पुष्प और हरियाली यहां भी दिखाई देती है। 'नई दुनिया' और 'बड़ी दुनिया' नामक मनोरंजक मेले भी लगते हैं। अमरीकी फिल्मों के विज्ञापन लगे हुए हैं। दर्शकों को आकर्षित करने के लिए, दूकानों पर भड़कीली पोशाकें पहिने चीनी युवतियाँ बैठी हुई हैं। ऊपर-ऊपर से आकर्षक प्रतीत होने वाला, यह समाज अन्दर से खोखला हो रहा है। इसीलिये युवतियों के अपहरण, हत्या, चोरी, ठगी आदि के समाचारों से यहां के पत्र रंगे रहते हैं। योरुपियनों के आलीशान बंगलों के सामने टूटी-फूटी झोपड़ियों में रहनेवाले अर्धनग्न हज़ारों मलायाई, चीनी और भारतीय श्रमजीवियों का जीवन इसका साक्षी है। चुंगी की जांच-पड़ताल बहुत सख़्ती से

की जाती है। १२ वर्ष से अधिक उम्रवाले व्यक्तियों को 'आइडेण्टिटी कार्ड' (शिनाख़्त-पत्र) रखना आवश्यक है। अंग्रेज़ी स्कूलों में मातृभाषा में बोलने पर विद्यार्थियों को जुर्माना देना पड़ता है !

सिंगापुर से हाँगकाँग जाने वाले यात्रियों के नये-नये चेहरे दिखाई देने लगे हैं। प्रातःकाल लाइट हाउसों का तीक्ष्ण प्रकाश एक वृत्त में घूम कर, दूर-दूर तक अपना प्रकाश फैला रहा है। जहाज़ की गति मन्द हो गई है। दोनों ओर सुन्दर प्राकृतिक दृश्य नज़र आने लगे हैं। मेघों और कुहरे ने, जान पड़ता है, पहाड़ियों को अपनी गोद में उठा लिया है। पहाड़ियों पर बीच-बीच में बने हुए, फ़ौजी बंगले दिखाई दे जाते हैं। हाँगकाँग (सुगंधि का बन्दरगाह) बहुत बड़ा बन्दरगाह है और सिंगापुर की तरह, व्यापार के लिये स्वतंत्र है। इसलिये यहां शराबों, तम्बाकू और दवाओं आदि के सिवाय अन्य किसी माल पर चुंगी नहीं ली जाती। एक से एक बढ़ कर रैस्तोरॉ बने हैं, जिनमें रात्रि के समय नाच-गान की धूम मच जाती है। बड़ी-बड़ी दूकानों की संख्या काफ़ी है, जिनकी तुलना बम्बई-कलकत्ते की दूकानों से की जा सकती है। बड़ी-बड़ी दूकानों पर भी मोलभाव होता है। यदि आप मोल करना जानते हों तो १२५ डालर की चीज़ ८० डालर में मिल सकती है। बाज़ारों और सड़कों पर काफ़ी भीड़ है। भीख मांगने वालीं अपने बच्चों को गोदों में लिये बैठी हुई हैं। गलियों में खड़ी हुई वेश्यायें अश्लील चेष्टाओं द्वारा ग्राहकों को बुला रही हैं। विद्युत-प्रकाश से सारा नगर जगमगा उठा है। विविध वर्णों के प्रकाश द्वारा, विज्ञापनों का प्रदर्शन किया गया है। पीक हिल पर खड़े होकर देखने पर, नीचे का दृश्य अत्यंत मनोरम जान पड़ता है।

हाँगकाँग की आबादी २० लाख है, जिसमें १९ लाख चीनी और कुल दस हज़ार ब्रिटिश हैं। मंचु (छिङ्) राजाओं के भ्रष्टाचार के कारण, सन् १८४१ में अफीम-युद्ध हार जाने से, चीन को नानकिंग की शर्मनाक संधि करनी पड़ी थी, जिसके अनुसार चीनी सरकार को ब्रिटेन के युद्ध का सारा व्यय उठाना पड़ा था। इसी संधि के अनुसार, हाँगकाँग चीनियों के हाथ से निकल कर अंग्रेज़ों के कब्ज़े में पहुँच गया था। चीन में विदेशी माल आना शुरू हो गया था। धीरे-धीरे अन्य विदेशियों को भी चीन में व्यापार करने के अधिकार मिल गये थे। चीन अर्ध-उपनिवेश बन गया था। अफ़ीम का आना बदस्तूर ज़ारी था।

नये चीन की सीमा में
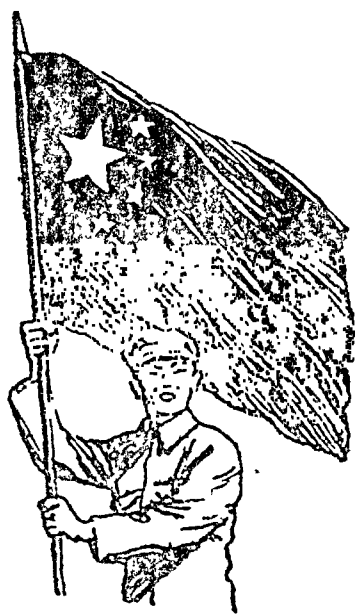
नये चीन की सीमा में प्रवेश करने के लिये, हाँगकाँग से शन् चुन् जान पड़ता है। दोनों ओर स्थूलकाय पहाड़ियां मस्तक उठाये खड़ी हैं। एक ओर ब्रिटिश सेना का पहरा है और कुछ ही गज़ की दूरी पर, एक फाटक के पास खाकी वर्दी में छोटे क़द वाले चीनी सिपाही खड़े हैं। अनेक चीनी मुसाफ़िर एक सीमा से दूसरी सीमा में दाख़िल हो रहे हैं। पुरुष अपनी बँहगियों में सामान लिये और स्त्रियां अपने शिशुओं को पीठ पर लादे चली जा रही हैं।

मुसाफ़िरखाने में पहुँचते-पहुँचते वातावरण बदल गया। हाँगकाँग जैसी तड़क-भड़क या शान-शौकत न जाने कहां गई। बांस और खपरैल के बनाये हुए, पुराने ढंग के एक लम्बे से गोदाम में कुछ कुरसियाँ और तिपाइयाँ पड़ी हुई हैं। इधर-उधर बहुत से सामान का ढेर लगा है। जगह-जगह पीकदान रखे हुए हैं। माओ त्से तुंग (माव् च् तुङ्) का एक चित्र टंगा है और उसके आसपास लाल ध्वजाओं पर चीनी अक्षरों में कुछ लिखा हुआ है। कोने में साधारण सा एक होटल है, जहां 'चापस्टिकों' (भोजन करने की लम्बी डंडियों) से लोग खाना खा रहे हैं। बम्बई से चीन रवाना होने के पहले ही, हमने शाकाहारी भोजन का पर्यायवाची शब्द 'छू सू' याद कर लिया था, इसलिये अपने आपको शाकाहारी घोषित करने में हमें विशेष दिक़्क़त न हुई। परन्तु, चापस्टिकों से भोजन करना अभी नहीं सीखा था। ऐसी हालत में जब उलटी चापस्टिक पकड़ कर, मैंने भोजन करने की कोशिश की, तो आसपास के लोगों का हास्यभाजन ही बनना पड़ा। चीन में हर मौसिम में बिना दूध और शक्कर के उबली हुई चाय या

उबला हुआ पानी पीते हैं। इसलिये ठंडे पानी के अभाव में, हमें लैमन पीकर अपनी तृषा शान्त करनी पड़ी।

ठीक डेढ़ बजे दोपहर को प्रयाण-गीत के साथ, गाड़ी कैण्टन (क्वाङ् चौ) के लिये रवाना हो गई। चीन की रेलगाड़ियां काफ़ी आरामदेह हैं; भीड़-भड़क्का उनमें नहीं होता। डिब्बों में गार्ड रहता है, जो मुसाफ़िरों की तकलीफ़ों आदि का ध्यान रखता है। रेलों में केवल दो प्रकार की सीटें होती हैं—एक गद्देदार और दूसरी बिना गद्दों की। अन्य कोई वर्गीकरण नहीं है। स्त्रियों और बच्चों का डिब्बा अलग रहता है। इस डिब्बे की पहचान के लिये, स्त्री और बच्चे का चित्र एक बोर्ड पर लगा कर प्लेटफ़ार्म पर रख दिया जाता है। सीटों के सामने लगी हुई मेज़ों पर चाय के प्याले रख दिये जाते हैं और एक बार कूपन ख़रीद लेने पर, आप चाहे जितनी बार चाय का उबला हुआ पानी पी सकते हैं। भोजन के डिब्बे में किसी क्लास का भी यात्री भोजन करने के लिये जा सकता है। स्टेशनों पर शोर-गुल नहीं सुनाई देता। सामान बेचने वाले एक स्थान पर खड़े रहते हैं, जिनको कुछ ख़रीदना हो उनके पास जा कर ख़रीदें। श्वास-वायु से खाद्य पदार्थों की रक्षा करने के लिये, इन लोगों के मुंह पर मुंहपट्टी बंधी रहती है। दो-दो घंटे बाद, कृमिनाशक औषधि छिड़क कर, डिब्बों की सफ़ाई होती रहती है और थोड़ी-थोड़ी देर बाद, डॉक्टर और नर्स चक्कर लगाते रहते हैं। रेल के लाउड स्पीकर से समाचार, स्टेशनों के नाम, स्टेशन पर गाड़ी के पहुँचने का समय, सफ़ाई आदि सम्बंधी आवश्यक घोषणायें और चीनी गाने सुनाई पड़ते रहते हैं।

दक्षिणी चीन पहाड़ी इलाक़ा है, लेकिन जंगल प्रायः हिन्दुस्तान जैसा मालूम होता है। चावल यहां बहुतायत से पैदा होता है। खेती के तरीक़े अभी भी पुराने हैं,—वही हल और वही बैल, भैंसे, गधे और ख़च्चर। चीनी किसानों ने बड़ी-बड़ी पहाड़ियों को बीच-बीच में समतल बनाकर और दो पहाड़ियों के बीच की घाटी को ठीक करके, उसे खेती के काम में लिया है। कहीं भी फ़ालतू पड़ी हुई ज़मीन नज़र नहीं आती। किसान दोपहर में सिर पर बांस के टोप लगाये हल चलाते हैं; किसान औरतें अपने शिशुओं को पीठ पर लादे हुये खेतों में काम करती हैं। गांवों में लकड़ी या झोंपड़ी के घर दिखाई देते हैं; तालाबों में बांस गाड़ कर भी घर बनाये गये हैं। चीनी महिलायें

पशुओं की रस्सी पकड़े हुये उन्हें चराती हैं। खेतों में टमाटर, अरवी, आलू वग़ैरह साग-भाजी बोई जाती हैं।

कैण्टन दक्षिणी चीन का सुप्रसिद्ध नगर है। रहन-सहन आदि में पूरा एशियाई वातावरण है। बम्बई, कोलम्बो, पीनांग या हाँगकांग जैसी यहां पश्चिमी वेशभूषा या तड़क-भड़क नहीं है। प्रायः सभी नगरवासी चीन के कृषकों की नीली-काली साधारण पोशाकों में नज़र आ रहे हैं। स्त्री-पुरुषों की पोशाकों में अन्तर नहीं है। रिक्शा-कुली काले रंग के रुई के कोट-पैण्ट पहिने खड़े हैं। फेरीवाले दो लकड़ी के टुकड़ों को बजा कर आवाज़ें करते हुए, अपनी बँहगियों में विविध प्रकार का मांस बेचते हुये फिर रहे हैं; चीनी महिलायें आवाज़ें लगा कर अण्डे बेच रही हैं। छोटे-मोटे दूकानदार बँहगियों में मांस, मछली, गंडेरी, मूंगफली आदि लिये बैठे हैं, परंतु, सब चीज़ों पर दामों की तख़्तियां लगी हुई हैं, इसलिये मोलभाव करने की ज़रूरत नहीं। सरकारी स्टोरों में उचित दामों पर चीज़ें मिलती हैं।

कैण्टन में अनेक दर्शनीय स्थान हैं। अजायबघर में बुद्ध की मूर्ति आदि प्राचीन वस्तुओं का संग्रह है। चित्रकारी द्वारा चीन का प्राचीन इतिहास चित्रित किया गया है। इसमें सन् १८४० के अफ़ीम-युद्ध के भी अनेक सुन्दर दृश्य अंकित हैं। एक पहाड़ी पर चीनी जनता को विदेशी आक्रमण के विरुद्ध संगठित करने वाले चीन के सर्व प्रथम नेता डॉ. सनयात सेन (सुन् चुङ् पान्) का स्मारक बना हुआ है। क्वान् यिन् पहाड़ी को काट कर बनाये हुए स्टेडियम को मज़दूर, विद्यार्थी, प्रोफेसर, स्त्री-पुरुष सब ने मिल कर आठ मास में बिना पैसे खर्च किये तैयार किया था; इसमें एक लाख आदमी बैठ सकते हैं। ह्वांग ह्वा कांग में ७२ शहीदों का एक सुन्दर स्मारक बना हुआ है। सन् १९११ में मँचु राज्य के विरुद्ध सनयात सेन के नेतृत्व में होने वाली क्रांति में यहां अनेक मज़दूर और विद्यार्थी काम आये थे। नगर की दूसरी ओर ११ मंजिल का एक बुद्ध-पगोडा है, जिसमें बुद्ध की अनेक मूर्तियाँ हैं। भक्त गण चन्दन आदि जला कर, पूजा उपासना कर रहे हैं। एक मसजिद में मुसलमानों का स्कूल है। कुछ विद्यार्थियों की बांहों में चांद और सितारे के इस्लामी चिह्न लगे हुए हैं। स्कूलों में कुरान पढ़ाई जाती है। मालूम हुआ कि चीन में सबको अपने धर्म-पालन की स्वतंत्रता है, इसलिये चीनी सरकार इन बातों में हस्तक्षेप नहीं करती।

यहां पर पर्ल नदी घूम-घूम कर नगर में वहती है। नदी के ऊपर लगभग २० हज़ार नाविक निवास करते हैं। ये लोग छिन् राजाओं (२२१-२०७ ई. पू.) के काल से यहाँ रह रहे हैं, जब कि क्वांग तुंग पर शत्रु का अधिकार हो गया था। उस समय हज़ारों नगरवासी शत्रुसेना के डर के मारे, नदी पर आकर निवास करने लगे थे, तबसे यहीं रहते हैं। मिंग राजाओं के काल में, इन्हें नगर में रहने की और ज़मीन-जायदाद ख़रीदने की मनाई कर दी गई थी। ये लोग केवल मछलियों का व्यापार कर सकते थे। आगे चल कर, मंचु (छिङ्) राजाओं के समय में इन लोगों को लिखने-पढ़ने, जूते पहिनने और सड़कों पर घूमने फिरने का निषेध कर दिया गया। इन्हें अपनी चाँद पर क्रास का एक चिन्ह बनवाना पड़ता था, जिससे ये दूर से पहचाने जा सकें। क्वोमिंतांग के ज़माने में भी, इन लोगों को पठन-पाठन की सुविधायें नहीं दी गई थीं। क्वो मिंतांग सरकार इनसे मनमाना टैक्स वसूल करती और सेना में भरती कर, इन्हें युद्ध के काम में लेती। परन्तु, नये चीन की सरकार धीरे-धीरे इन नाविकों को शिक्षित बनाकर, इनके सुधार के लिये प्रयत्न कर रही है। इन लोगों के लिये नावों पर और शहर में स्कूल खोले गये हैं, जिनमें अनेक बालक शिक्षा पा रहे हैं। इनके स्थानों की सफ़ाई आदि का यथोचित प्रबन्ध है तथा प्रौढ़ लोगों के लिये नावों पर ही आमोद-गृहों की व्यवस्था है। नदी के दो घाटों के मध्य में अनेक इमारतें बनी हुई हैं। इसे शमीन कहते हैं। पहले यहां योरुपियन लोग रहते थे, जहां चीनियों का प्रवेश वर्जित था। शहर के पूर्वी और पश्चिमी भागों को संयुक्त करने के लिये, नदी में लकड़ी का बड़ा पुल बनाया गया है। इस पुल को भागती हुई क्वोमिंतांग की सेना ने ध्वस्त कर दिया था। लेकिन, कुछ महीने वाद ही चीन की मेहनतकश जनता ने इसे दुरुस्त कर लिया है।

सोलह-सत्रह वर्षों से कैण्टन में रहने वाले एक भारतीय मुसलमान सज्जन ने हमें बताया कि मुक्ति के पहले गाड़ियों सामान विदेशों से आता था, फिर भी पूरा नहीं पड़ता था। उस समय भिखारियों के झुण्ड नज़र आते थे; कुली-मज़दूर तक माँगने का पेशा करते थे। कितनी ही महिलाओं को वेश्यावृत्ति करने के लिये वाध्य होना पड़ता था। परन्तु अब, नगर में एक भी वेश्या नहीं रही है। वेश्या अथवा वेश्यागामियों को सरकार की ओर से कोई दण्ड न देकर उन्हें यथासंभव समझाया-बुझाया जाता है। उनके मकान पर पोस्टर आदि लगा कर, उन्हें शरमिंदा किया जाता है। यदि कोई फिर भी न सुने, तो उसे

पुलिस के थाने में रख दिया जाता है और उसकी पत्नी को उसे छुड़ाने के लिये वहां भेजा जाता है। इस प्रकार, चीन में अत्यन्त मनोवैज्ञानिक तरीक़ों से वेश्यावृत्ति को समाप्त किया गया है। चीनी सरकार विदेशी गुप्तचरों और उनके एजेण्टों आदि से काफ़ी सतर्क रहती है। इसीलिए, स्टेशन आदि पर मुसाफ़िरों की सख़्त निगरानी रखी जाती है। भ्रष्टाचार, रिश्वतख़ोरी और अपव्यय-विरोधी आन्दोलन के कारण भी पुलिस बहुत सावधान हो गई है।

कैण्टन से हैंको (हान खौ) के रास्ते में बड़ी-बड़ी ऊँची पहाड़ियां दिखाई देने लगीं हैं। पहाड़ियों के बीच नदी गोलाकार बह रही है। रेलगाड़ी नदी के किनारे-किनारे सरक रही है। कितना सुन्दर प्राकृतिक दृश्य है! खेत पानी से भरे हुए हैं, पहाड़ियों के ऊपर खेती बोई गई है। कोट-पैण्ट पहिने चीनी किसान खेतों में हल चला रहे हैं और स्त्रियां लम्बे फावड़ों से खुदाई कर रही हैं। बैलगाड़ी आदि के अभाव में, किसान अपनी बँहगियों या एक पहिये की छोटी गाड़ी द्वारा सामान ढो रहे हैं। गांवों की झोपड़ियां, गारे की कच्ची दीवारों के मकान, फूस की छतें, पोखरों आदि के दृश्य बरबस हिन्दुस्तान की याद दिला रहे हैं। दीवारों पर चीनी भाषा के इश्तिहार लगे हुए हैं। बीच-बीच में जनसेना के सिपाही गश्त लगाते हुए या खेतों में काम करते हुए दिखाई पड़ रहे हैं।

चीन की सबसे बड़ी नदी यांगत्से (याङ् च्) का पुल अभी तक नहीं बंध पाया है। इसलिये हैंको से पहले वू छांग स्टेशन पर उतर कर, हमें इसे पार करना पड़ा। यह नदी छिङ् हाय् से निकल तीन हज़ार मील बहकर, चीन समुद्र में जा मिली है। यह एक अत्यंत उपजाऊ नदी है और इसके किनारे चावल बहुतायत से पैदा होता है। यांगत्से समुद्र के समान विशाल मालूम देती है। २० अप्रैल, १९४९ को माओ त्से तुंग का आदेश पाकर, चीन की जनसेना के सिपाहियों ने इस नदी के विशाल पाट को नाव और बाँसों की सहायता से पार कर च्यांगकाई शेक की सेना को चकमा दिया था। सन् १९३१ में, इस नदी में बाढ़ आने के कारण लाखों स्त्री-पुरुषों को अपनी जानों से हाथ धोना पड़ा था। परन्तु, चीन की मुक्ति के बाद इसका बांध बन जाने से बाढ़ें भूतकाल की चीज़ें बन गई हैं। कैण्टन की अपेक्षा हैंको में अधिक रौनक है; बाज़ार भी काफ़ी बड़े हैं। भांति-भांति की चापस्टिकें तथा चीनी फाउण्टेन पैन दूकानों पर बिक रहे हैं। बहुत सी 'क्यूरियों' की दूकानें हैं, जिनमें तरह-तरह की चीनी कला की प्राचीन और अद्भुत चीज़ें रखी हुई हैं।

कैन्टन से हैंको पहुँचने में ३६ घंटे लगते हैं। इतना ही सफ़र आगे रह जाता है। जैसे-जैसे हम दक्षिणी चीन से उत्तरी चीन की ओर बढ़े, आबहवा तथा लोगों के डीलडौल और उनकी भाषा आदि में अन्तर मालूम पड़ने लगा। उत्तर के निवासी दक्षिणवालों की अपेक्षा शरीर में अधिक मज़बूत दिखाई पड़े। उत्तरी चीन गेहूं के लिये प्रसिद्ध है। मीलों तक लहलहाती हुई, गेहुओं की अपार हरितराशि समुद्र की अनन्त जलराशि के समान दृष्टिगोचर हो रही थी। हम लोग माओ त्से तुंग के प्रदेश छांग शा स्टेशन से होकर गुज़रे। यह स्थान हूनान प्रान्त में है और माओ त्से तुंग तथा कम्युनिस्ट पार्टी का ख़ास कार्य-क्षेत्र रहा है। रेल ह्वांग हो (पीली नदी) के पुल पर से गुज़र रही है। पहले इस पुल को पार करने में बहुत समय लगता था। लेकिन, अब केवल पाँच मिनटों में रेल उस पार पहुँच जाती है। नदी की मिट्टी पीली होने से, उसका पानी भी पीला हो गया है। चीन की यह नदी भूतकाल में बाढ़ों और अकालों के लिये प्रसिद्ध थी। इसके किनारे कुछ लोग पहाड़ियों में घर बना कर रहते हैं। जगह-जगह पुरुष-प्रमाण घर बने हुए हैं, जिनमें मुड़ कर प्रवेश करना पड़ता है। आदिम काल में गुहा-मानव इसी प्रकार की या इससे मिलती-जुलती गुफाओं में निवास किया करता था।

रेलगाड़ी नये चीन की राजधानी की ओर द्रुतगति से दौड़ रही है। जनसेना का सिपाही रेल का पहरा दे रहा है। लाउड-स्पीकर से गीत की पंक्तियाँ सुनाई दे रही हैं—

> "पूर्व दिशा लाल हो गयी है, सूर्य उदित हो रहा है। चीन में माओ त्से तुंग पैदा हो गये हैं। वे जनता के कल्याण के लिये कार्य करते हैं। वे जनता के महान् रक्षक हैं। अध्यक्ष माओ जनता को प्यार करते हैं। वे हमारे पथ-प्रदर्शक हैं। नये चीन का निर्माण करने के लिये, वे हमें आगे बढ़ा रहे हैं। कम्युनिस्ट पार्टी सूर्य के समान है। जहां कहीं यह प्रकाशित होने लगती है, वहीं सर्वत्र प्रकाश फैल जाता है। कम्युनिस्ट पार्टी का अनुकरण कर, हम सदा के लिये मुक्त हो जायेंगे।"

पीकिंग का स्टेशन 'हिन्दी-चीनी भाई-भाई' के नारों से गूंज रहा है।
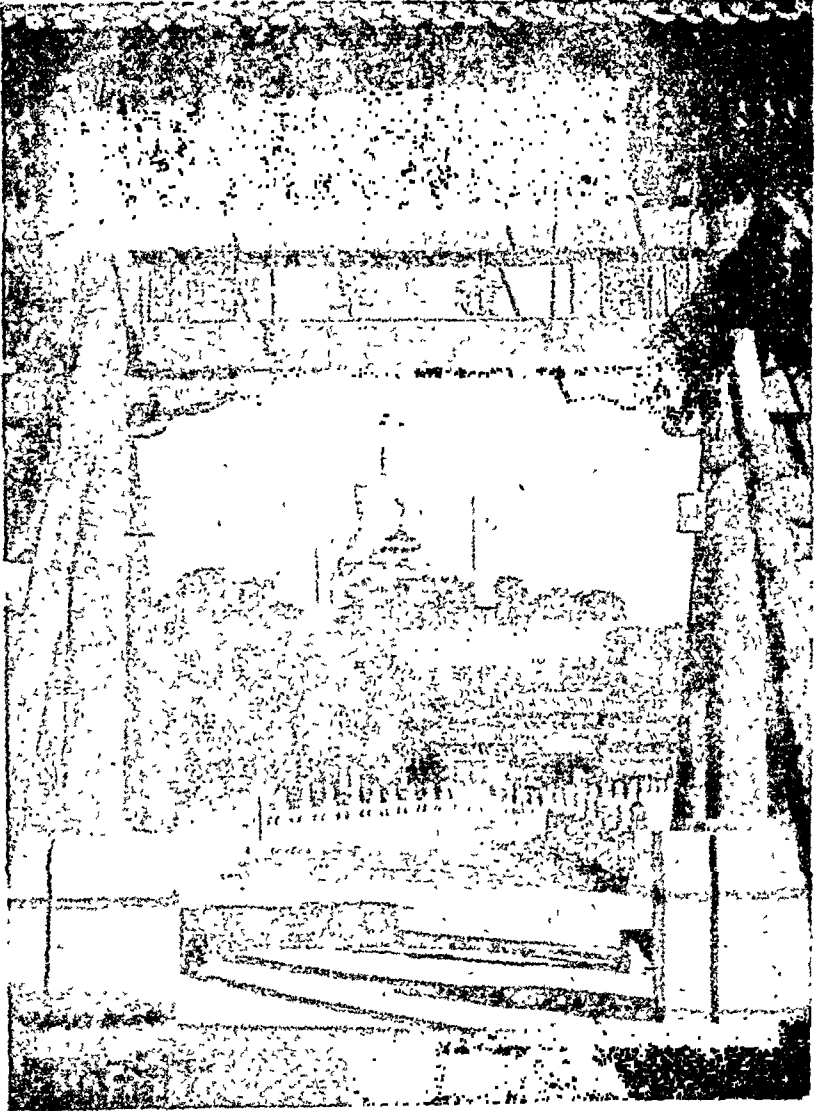
पीकिंग-द्वार

पीकिंग नगर

पुरातत्त्व और मानव-विकास के अध्ययन के लिये, चीन एक महत्वपूर्ण सह प्रदेश है। सन् १९५१ में विज्ञान की चीनी एकेडमी द्वारा चीन के अनेक स्थानों की खुदाई में प्रस्तर युग की अनेक महत्वशाली बातों का पता लगा है। शे चुआन (स्स् छ्वान्) प्रान्त के च् याङ् (त्से याङ्) नामक स्थान में एक लड़की की सुरक्षित खोपड़ी मिली है, जिससे मानव जीवन के प्रागैतिहासिक काल पर प्रकाश पड़ता है। यहां पौधों तथा हरिण और हाथी आदि जानवरों के कुछ 'फॉसिल' भी उपलब्ध हुए हैं। इसी प्रकार, शान्तुंग (षान् तुङ्) प्रान्त के गांव में एक सरीसृप (२ फ़ीट से ८० फीट तक लम्बा एक सर्पविशेष) का अस्थिपंजर और २६ अण्डों के फॉसिल मिले हैं, जो इस विपय के अध्ययन के लिये सर्वोत्तम साधन हैं। इस गांव के आसपास अन्य छोटे जानवरों के साबुत कंकाल भी पाये गये हैं। सिंक्यांग (शिन् च्याङ्) प्रान्त की राजधानी तिहुआ (ती ह्वा) में उरुमची नदी के पास, मैमल (स्तन्यपायी जीव समूह) के समान सरीसृप की खोपड़ी पाई गई है, जिससे सरीसृप से लगा कर मैमल तक के विकास पर महत्वपूर्ण प्रकाश पड़ता है।

पीकिंग (पेचिङ्) भी एक अत्यंत प्राचीन स्थान है, जो आदिमकालीन सभ्यता का केन्द्र रहा है। वानर-मानव के फॉसिल के लिये, संसार का यह अनुपम खज़ाना है और प्राचीन प्रस्तर युग के अध्ययन के लिये यहां सर्वोत्तम सामग्री उपलब्ध है।

यह ५ लाख वर्ष पुराने 'पीकिंग मैन' की जन्मभूमि है। पीकिंग के दक्षिण-पश्चिम में तीस मील दूर चौ खौ त्येन् नामक गुफा में सन् १९२६ में इस आदि मानव का पता लगा था। उस समय इस मानव के दो दांतों ने वैज्ञानिक संसार में हलचल मचा दी थी। कुछ समय पश्चात्, तीसरा दांत मिला और उसके बाद बहुत से दांत, जबड़े और दो साबुत खोपड़ियों के कुछ अंश उपलब्ध हुए। आग जलाने के पत्थर के औज़ार तथा जली हुई लकड़ियों और हड्डियों के टुकड़े आदि भी इसी गुफा में पाये गये हैं। इन सबसे 'पीकिंग मैन' की प्राचीनता असंदिग्ध रूप से सिद्ध हो चुकी है।

सन् १९३४ ई. पू. में, पीकिंग के आसपास छि राजवंश का एक नगर बसाया गया था। पीकिंग का प्राचीन नाम येन् चिंग है। जब मिंग राजाओं ने इसे अपनी राजधानी बनाया तो इसे पीपिंग (उत्तरीय शान्ति) कहा जाने लगा था। १ अक्तूबर, १९४९ को पीकिंग (उत्तरीय राजधानी,-बाद का नाम) में जनवादी सरकार की घोषणा की गई थी।

पीकिंग एक नियोजित ढंग पर बना हुआ सुन्दर नगर है। यहां चीन की प्राचीन शिल्पकला के द्योतक एक से एक बढ़ कर प्रासाद, मंदिर, उद्यान, बाग़-बग़ीचे, सरोवर आदि देखने लायक हैं, जिन्हें चीन के कुशल कारीगरों ने निर्मित किया था। ये स्थान ग्वान् (मंगोल), मिंग और मंचु राजाओं के काल में उनके आमोद-प्रमोद के लिये बनाये गये थे।

पीकिंग का शाही महल (कु कुङ्), जिसे 'निषिद्ध नगर' भी कहा जाता है, सन् १४२० में बनकर समाप्त हुआ था। इसका क्षेत्रफल १८२ एकड़ है और यह कई मीलों में फैला हुआ है। शाही महल के चारों ओर एक दीवार और एक खाई बनी हुई है। अन्दर प्रवेश करने के लिये दक्षिण, उत्तर, पूर्व और पश्चिम में चार द्वार हैं। सम्राट या सम्राज्ञी के महल से बाहर जाने के समय ८१ बार और अन्दर आने के समय ४१ बार पटह द्वारा घोषणा की जाती थी। महल के अन्दर राजाओं के उठने-बैठने, खाने-पीने, सोने, विवाह-शादी करने, कोर्ट-कचहरी करने, अभ्यागतों का स्वागत करने, नाटक देखने, देवी-देवताओं की पूजा-उपासना करने आदि के लिये अनेक भवन तथा आराम-गृह, उद्यान-गृह, पहाड़ियां, सरोवर, मंदिर आदि निर्मित हैं। पहले इस महल में राजा के नौकरों–चाकरों के सिवाय अन्य कोई व्यक्ति प्रवेश नहीं पा सकता था, परन्तु आजकल इसे एक 'म्यूज़ियम' बना दिया गया है, जिसे आसपास के गांवों के किसान, कारखानों के मज़दूर तथा विद्यार्थी आदि देखने आते रहते हैं। राजाओं के पहिनने-ओढ़ने के क़ीमती वस्त्रों, भोजन करने के सुन्दर पात्रों, प्रसाधन की बहुमूल्य वस्तुओं, विशाल धूपदानों, फ्रान्स के बने हुये वाद्य यंत्रों, किसी खास समय वाद्य रूप में एक साथ बज उठने वाली आकर्षक घड़ियों, मशीन से चलनेवाली गुड़ियों, नक़्क़ाशी की हुई हाथी-दांत और काष्ठ की वस्तुओं, चित्रों तथा रत्नों, विशेषकर पन्ना, की बनी हुई मूर्तियों आदि को दर्शकों के लिये अलग-अलग कमरों में सजा कर रखा गया है।

यहां का ऐतिहासिक म्यूज़ियम दर्शनीय है, जिसमें चीन के प्राचीन और अर्वाचीन इतिहास से सम्बंध रखनेवाली वस्तुओं का प्रदर्शन किया गया है। एक गैलरी में आदिम अवस्था से लेकर, मनुष्य ने शिकार खेलने, धनुष-बाण चलाने, आग पर नियंत्रण प्राप्त करने, पशुओं को पालने, खेती करने, दस्तकारी सीखने, बरतन बनाने आदि के द्वारा क्रम से जिस प्रकार उत्तरोत्तर उन्नति की है, उसका कलामय ढंग से सुंदर चित्रण किया गया है। सचमुच के 'पीकिंग मैन' को जापानी सिपाही उठाकर ले गये थे, जो आजकल न्यू यॉर्क में पहुँच गया है, अतएव म्यूज़ियम में उसके आकार-प्रकार का एक मॉडल रखा हुआ है।

म्यूज़ियम की दूसरी दर्शनीय वस्तु है—कछुओं की अस्थियाँ। आज से लगभग ३,५०० वर्ष पूर्व, चीन में इन अस्थियों द्वारा भविष्य का निर्णय किया जाता था। पहले कछुए आदि जानवरों की अस्थियों को गरम-गरम लोहे की सलाखों से दागा जाता और इस प्रकार अस्थियों के तड़कने से उन पर जो रेखायें बनतीं उन रेखाओं द्वारा भविष्य का पता लगाया जाता था। इन रेखाओं को पढ़कर राज-पुरोहित राजा के शिकार खेलने, यात्रा करने, हवन करने, शत्रु पर आक्रमण करने आदि के समय का निर्णय किया करते थे। हूनान प्रान्त में पीली नदी के समीप अनयांग ज़िले के श्याव् थुन् गाँव में इस प्रकार की अनेक अस्थियाँ ज़मीन से निकली हैं। सामंती युग में लोगों का विश्वास था कि कब्र खोदने से उनके पुरखों की शान्ति में विघ्न होता है और संभवतः इससे उन्हें पारिवारिक कष्टों का सामना करना पड़ता है। इसलिये, बहुत काल तक इन कब्रों की खुदाई न हो सकी थी। सर्व प्रथम सन् १९२८ में चीन की राष्ट्रीय रिसर्च इन्स्टीट्यूट द्वारा खुदाई का काम आरंभ हुआ था, परन्तु सन् १९३५ के पूर्व शांग काल (१४ वीं शताब्दि ई० पू०) की कब्रें न खोदी जा सकीं। इन कब्रों की खुदाई से चीन की प्राचीनतम सभ्यता और संस्कृति के अनेक अंगों पर प्रकाश पड़ा है। इस म्यूज़ियम में कब्रों से निकले हुए प्राचीन अस्थिपंजरों तथा मृतकों के साथ पाई गई बहुमूल्य वस्तुओं का प्रदर्शन किया गया है। इस खुदाई की रिपोर्ट 'अनयांग में खुदाई की रिपोर्ट' (अन्यांग्, फा, च्वे, पाव् काव्) नाम से ४ भागों में प्रकाशित हुई है। यहीं पर चीनी जनता का क्रांतिकारी इतिहास एक अलग गैलरी में चित्रों द्वारा प्रदर्शित किया गया है। अन्यत्र बहुत-सी मूर्तियाँ, बौद्ध-सूत्र, सरकारी मोहरें तथा चीनी मिट्टी और कांसे आदि के पात्र रखे हुए हैं।

थ्येन् आन् मन् (स्वर्गीय शान्ति का द्वार) के पूर्व में श्रमजीवियों का सांस्कृतिक महल है। इसमें राज परिवार के पितृदेवों का एक मन्दिर है, जहां राजा-महाराजा अपने पितरों की पूजा-उपासना किया करते थे। चीनी शिल्पकला का यह बेजोड़ नमूना है। महल के द्वार पर 'पीकिंग के श्रमजीवियों का सांस्कृतिक महल' नामक बोर्ड लगा हुआ है, जिसे सन् १९५० में अन्तर्राष्ट्रीय मज़दूर-दिवस पर, माओ त्से तुंग ने अपने हाथ से लिखा था। तबसे यह स्थान श्रमजीवियों का विश्राम-गृह बन गया है, जहां पीकिंग के नरनारी नाच-गाकर अपनी थकान दूर करते हैं।

थ्येन् आन् मन् के पश्चिम की तरफ़, सनयात सेन पार्क है। यहां राजा भूमि और कृषि-देवताओं की उपासना किया करता था। यह स्थान कई सौ वर्षों पुराने सरों की वृक्षावलि तथा विविध वर्णों के पुष्पों से सुरम्य है। आजकल यहां अनेक प्रदर्शिनी, सिनेमा, नाटक आदि दिखाये जाते हैं।

पेहाई (पैं हाय्) पार्क एक अत्यंत रमणीय स्थान है। पहले यहां चावल की खेती होने के कारण बड़ी दलदल रहती थी। इसे खोद कर और गहरा बनाया गया तथा खोदी हुई मिट्टी के टीले बना दिये गये हैं। यहां कृत्रिम पहाड़ियां निर्मित कर, उनमें अनेक गुफायें बनाई गई हैं, जो बड़ी प्राकृतिक और भव्य जान पड़ती हैं। आठ सौ वर्षों पहले यानायात के साधन न होने पर भी, पहाड़ियों की ये शिलायें दक्षिणी चीन से मँगाई गई थीं। मज़दूर और किसानों को इन्हें ढो कर लाने के लिये बाध्य किया गया था। इसलिये, इन शिलाओं का नाम 'अन्न के बदले की शिलायें' रखा गया था। पेहाई में श्वेत पगोड़ा और युंग आन् मंदिर दर्शनीय हैं। श्वेत पगोड़ा तिब्बत के प्रथम दलाई लामा के पीकिंग आने के अवसर पर, सन् १६५१ में निर्मित किया गया था। यहां से पीकिंग नगर का सुंदर दृश्य दिखाई पड़ता है। एक भित्ति पर नौ नाग (ड्रैगन) बने हुए हैं, जो चीनी कला का अनुपम नमूना है। पास ही बड़े-बड़े कुण्डों में विविध प्रकार की सुनहली मछलियाँ तैरती हुई दिखाई देती हैं। पूर्व काल में अन्य राजकीय स्थानों के समान, यहां भी जनता का प्रवेश निषिद्ध था। सन् १९२५ में इस स्थान को सार्वजनिक घोषित किया गया था। आजकल यहां पीकिङ् के नर-नारियों की भीड़ लगी रहती है। ग्रीष्म ऋतु में लोग पेहाई के विशाल सरोवर में नावों में बैठकर जल-क्रीड़ा करते हैं और शीत ऋतु में 'स्केटिंग' द्वारा बरफ़ पर दौड़ लगाते हैं।

स्वर्ग-मंदिर (थ्येन् थान्) पीकिंग के दक्षिणी भाग में बना हुआ है। मिंग और मंचु वंश के राजा यहां अच्छी फ़सल के लिये अन्तरिक्ष ,सूर्य, चन्द्र, वायु और वर्षा की प्रार्थना किया करते थे । प्रार्थना-भवन काष्ठ-निर्मित एक गोलाकार भवन है, जो नील वर्ण की पालिश की हुई 'टाइलों' से सज्जित—नील अन्तरिक्ष का चिन्ह—है । यह भवन २८ खंभों पर आधारित है, जो २८ नक्षत्रों का प्रतीक है; तथा चार नागों के खंभे ४ ऋतुओं और १२ लाल रंग के खंभे १२ मासों के द्योतक हैं। यहाँ भेड़, बकरी आदि पशुओं का हवन किया जाता था। चांदी के दीपक और धूपदान तथा चावल, शराब, फल, मांस आदि सामग्री रखने के लिये, चीनी के सुन्दर पात्रों का उपयोग किया जाता तथा संगीत और नृत्य के आनन्दोत्सव के साथ हवन-क्रिया सम्पन्न होती थी। चीन के शिल्पियों ने जिस कारीगरी और चतुराई के साथ इस स्वर्ग-मंदिर का निर्माण किया है, उससे पता लगता है कि योरुप में ज्ञान-विज्ञान का प्रचार होने के पहले ही चीनियों ने ज्योतिष, भौतिक विज्ञान, गणित और कला आदि में निपुणता प्राप्त कर ली थी।

पश्चिमी उपनगर का पार्क (शिच्याव कुङ् य्वान्) अनेक वृक्षों और सरोवरों से सुशोभित है। सन् १९०६ में महारानी त्स् शी के मनोरंजन के लिये शेर, हाथी, जेब्रा, शतुरमुर्ग आदि अनेक जानवर लाकर रखे गये थे। सन् १९०० में रूस, जापान, इंग्लैण्ड, अमरीका, फ्रांस आदि आठ देशों की सेनाओं के पीकिंग पर आक्रमण करने के समय, महारानी अपना महल छोड़कर भाग गई थी। उस समय, मार्ग में किसानों के सम्पर्क में आने पर महारानी ने उनके कष्टों का अनुभव किया और वापिस लौटने पर, इस पार्क का एक हिस्सा खेती-बारी के प्रयोग करने के लिये दे दिया। जापानी युद्ध-काल (सन् १९३७-४५) में इस पार्क को बहुत क्षति पहुंची थी। तत्पश्चात् क्वो मिंतांग सेना ने इसे युद्ध के अस्त्र-शस्त्र आदि रखने के काम में लिया। सेना के सिपाहियों ने पार्क के अनेक वृक्ष काट डाले, खाईयां खोद दीं और जगह-जगह कूड़े के ढेर लगा दिये। हाल ही में इस पार्क में अनेक पशु लाये गये और बोटैनिकल गार्डन में भांति-भांति के पुष्प लगाये गये हैं। भारतवर्ष के बच्चों की ओर से अभी यहां आशा नाम की एक हाथिनी भेजी गई है। यहां प्राणिविद्या और वनस्पति विद्या की इस्टीट्यूट में रिसर्च की जाती है। पार्क के पास एक पांच-पगोड़ा मन्दिर है, जो बुद्ध गया के मन्दिर के ढंग पर मिंग सम्राट की अनुमति से सन् १४६५ में किसी भारतीय द्वारा निर्मित किया गया था।

पीकिंग का ग्रीष्म महल (ई हो य्वान्) अपनी सुंदरता के लिये संसार भर में प्रसिद्ध है। इसमें अनेक भवन, मंडप, पहाड़ियाँ और सरोवर बने हुए हैं। सन् १८६० में ब्रिटिश और फ्रांस की सेनाओं द्वारा पीकिङ् पर आक्रमण होने के समय, इस महल के अनेक भवन और पार्क आदि जला कर नष्ट कर दिये गये थे। सन् १९०० में इस पर पुनः आठ देशों की सेनाओं का आक्रमण हुआ था। 'पुरातन बुद्ध' कही जाने वाली महारानी त्स् शी ने चीनी नौसेना निर्माण के बहाने जनता से लाखों रुपये इकट्ठे कर, इस महल के निर्माण में लगा दिये थे। यह रुपया ज़्यादातर संगमरमर की एक नाव बनाने में ही व्यय हो गया था। महल में कांसे के बने सिंह, नाग, फिनिक्स (एक कल्पित पक्षी), तिपाईनुमा पात्र इत्यादि धूप जलाने के काम आते थे। इन्हें दूर से आये हुए कारीगरों ने बड़े परिश्रम से ढाल कर तैयार किया था। पहाड़ी पर बने हुये बुद्ध मन्दिर में बुद्ध तथा क्षितिगर्भ, चिन्तामणि चक्र, मंजुश्री आदि बोधिसत्वों की मूर्तियां बनी हुई हैं।

सन् १९४९ से पीकिंग म्युनिसिपल जन-सरकार की सहायता से इस महल को ठीक-ठाक कर, इसे सर्वसाधारण के लिये खोल दिया गया है। आजकल यहां आदर्श श्रमजीवी विश्राम करने के लिये आते हैं; छुट्टी के दिन महल नर-नारियों से भर जाता है। कहीं जन-सेना के सिपाही सबके साथ मिल कर खेल रहे हैं, कहीं स्त्री-पुरुष आनन्द-विभोर होकर नृत्य कर रहे हैं, कहीं गायन हो रहा है और कहीं लोग नावों पर बैठ कर समुद्र के समान विस्तृत जलाशय के वक्षस्थल पर क्रीड़ा कर रहे हैं। इधर-उधर भव्य पहाड़ियां दिखाई दे रही हैं। दीर्घकाय वृक्षों की पंक्तियां मस्तक उठाये खड़ी हुई हैं। हवा से सरोवर की लहरें थिरक रही हैं और वृक्षों की पत्तियों का मर्मर मधुर ध्वनि उत्पन्न कर रहा है। आकाश के समान विशाल इस भव्य प्रासाद को देख कर, चीन की उस श्रमिक जनता की ओर ध्यान आकृष्ट हुए बिना नहीं रहता, जिसने अपना खून-पसीना बहा कर इसके निर्माण के लिये अथक परिश्रम किया है।

सान्फ़ान् आन्दोलन

पीकिङ् राजधानी होने पर भी, बम्बई-कलकत्ते आदि के मुक़ाबले में एक पुराने ढंग का नगर मालूम होता है। अधिकांश लोग नीली या काली युनिफॉर्मों में मोजे और कपड़े के जूते पहिने दिखाई दे रहे हैं। चाय बेचने वाले एक मिट्टी के पात्र में चाय लिये बैठे हैं। कृमि-नाशक औषधि छिड़का हुआ सूअर, बतख, मुर्गी, भेड़ आदि का मांस टंगा हुआ है। क्यूरियो की दूकानों में भांति-भांति की चीनी कला की वस्तुयें रखी हुई हैं। दूर से पहचान के लिये साइकिलों की दूकानों पर साइकिल के पहिये, होटलों कागज़ और रेशम की रंग-विरंगी पट्टियां, नाईयों की दूकानों पर गोलाकार घूमते हुए रंगीन चक्र, रूई के सामान की दूकानों पर रूई, कंघों की दूकानों पर कंघियां और तागों की दूकानों पर डोरे टंगे हुए हैं। तुग आन् छ छाग (पूर्वीय शान्ति का वाजार) में एक ही जगह सब प्रकार की चीजें विकती हैं; परन्तु सब जगह दामों की तख्तियां लगी हुई हैं इसलिये, कहीं मोल-तोल करने का दस्तूर नहीं है। मोटर या टैक्सी बहुत कम हैं। साइकिल और पुराने ढंग के साइकिल-रिक्शा ही अधिक दिखाई पड़ते हैं। रिक्शा चलाने वाले प्रायः स्वयं रिक्शों के मालिक हैं। रिक्शेवालों का लीडर भोंपू बजा कर ग्राहकों को बुला रहा है। मोटर-बस नियमित रूप से दौड़ती हैं, परन्तु 'स्टैण्ड' पर बस में सवार होने से शायद ही कोई यात्री बाक़ी बचता हो। बस स्त्री-पुरुषों से खचाखच भर जाती है और सब लोग बिना शोर-गुल किये, बिना किसी शिकायत के चुपचाप खड़े चले जाते हैं। मुसाफ़िर मुट्ठियां भर भर 'कण्डक्टर' को नोट थमा देते हैं और उसके द्वारा लौटाई हुई रेजगारी को प्रायः बिना गिने ही जेबों में रख लेते हैं। बस और ट्रामों में काम करनेवाली प्रायः महिलायें ही हैं। ट्राम के स्टैण्ड पर पहुँचते ही, महिला-कण्डक्टर ट्राम से

नीचे उतर कर दोनों ओर देखती है कि कोई मुसाफ़िर रह तो नहीं गया और फिर सीटी बजाकर ट्रॅाम को रवाना होने का 'सिगनल' देती है। टरमिनस पर पहुँच कर वह पानी छिड़क कर ट्रॅाम को स्वच्छ करती है।

अपने मुहल्ले (हूथुङ्) से जब बाज़ार जाता हूँ तो चीन की श्रमिक जनता के सरल, सहृदय और निष्कपट जीवन का दृश्य आँखों के सामने घूम जाता है। साग-भाजी बेचने वाला अपनी एक पहिये की गाड़ी पर साग-भाजी बेच रहा है, नाई अपनी बँहगी में हज़ामत का सब सामान लिये घंटी बजाकर अपने आगमन की सूचना दे रहा है; चाकू पर धार रखने वाला बाजा बजाकर विज्ञापन कर रहा है और कोई ग्राहक मिल जाने पर बड़े इतमीनान के साथ चाकू को सिल पर रगड़-रगड़ कर तेज़ करने में दत्तचित्त है। जरी-पुराने वाले दो लकड़ियों के टुकड़ों को बजाकर ग्राहकों का ध्यान आकर्षित कर रहे हैं; सिगड़ी ठीक करने वाले और चीनी के प्यालों को टीन की पतरी लगाकर जोड़नेवाले, अपनी बँहगी के पलड़ों में सामान रखे हुए घंटी द्वारा विचित्र नाद कर रहे हैं। कुछ फेरीवाले ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाकर अपना सामान बेच रहे हैं। घंटी की आवाज़ सुनते ही, मुहल्ले के लोग अपना-अपना कचड़ा उठाकर कचड़ा-गाड़ी में डालने के लिये चले जा रहे हैं। संध्या समय, अपने शिशुओं के साथ घरों के बाहर बांस के पीढ़ों पर आराम से बैठे हुए परिवार पंखों से हवा कर रहे हैं। बच्चों के झुण्ड क्रीड़ा कर रहे हैं, नाच-गा रहे हैं या कोई कहानी सुन रहे हैं। चौराहे पर खड़ा पुलिसमैन मुसाफ़िरों को फुटपाथ पर चलने की हिदायत कर रहा है। हमारी, विशेषकर मेरी लड़की चक्रेश की, भारतीय वेश-भूषा लोगों का ध्यान आकर्षित कर रही है। हम लोगों को देखकर वे प्रश्नों की झड़ी लगा देते हैं: कहां के रहने वाले हो? कब आये हो? क्या खाते हो? तुम्हारे देश में सरदी नहीं होती? माथे पर लाल-लाल क्या लगा रखा है?—आदि, फिर जिज्ञासा भरी निगाहों से देखते, मुस्कराते हुए आगे बढ़ जाते हैं।

जब हम लोग पीकिंग पहुंचे तब सानफ़ान् (सान् = तीन; फ़ान् = विरुद्ध) आन्दोलन आरंभ हो गया था। आन्दोलन का उद्देश्य था—सरकारी कर्मचारियों और सार्वजनिक संस्थाओं से भ्रष्टाचार, अपव्यय और नौकरशाही को नष्ट करना। सुप्रसिद्ध है कि चीन के सामंतवादी प्राचीन समाज में भ्रष्टाचार फैला हुआ था। तत्पश्चात् जब चीन विदेशियों का अर्ध-उपनिवेश बना, तो विदेशी

पूंजीपतियों और स्वार्थी सामंतों ने भ्रष्टाचार और रिश्वतखोरी को प्रोत्साहित किया। सन् १९११ में प्रजातंत्र की स्थापना के पश्चात चीन में रिश्वतखोरी का बाज़ार गरम था। १ अक्तूबर, १९४९ में जब चीन क्वो मितांग के शासन से मुक्त हुआ, तो नई सरकार को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा था। क्वो मितांग सरकार जो व्यवस्था छोड़ गई थी, वह अत्यंत निकृष्ट थी और उसमें अनेक निहित स्वार्थवाले व्यक्ति घुसे हुए थे। इन व्यक्तियों से शासन को मुक्त करना हँसी खेल न था। जिन कार्यकर्ताओं ने जनसम्पर्क में आकर जनता के लिये कार्य किया, उन्होंने राजनीति के अध्ययन द्वारा अपने विचारों में संशोधन किया। परन्तु फिर भी, बहुत से लोग प्राचीन समाजगत सम्पर्कों के कारण, अपने व्यक्तिगत स्वार्थों से ऊपर न उठ सके। इनमें से कुछ सरकार के विरुद्ध प्रचार करने लगे, तथा भ्रष्टाचार, रिश्वत और जनता की मिल्कियत हड़प जाने में कुशल और क़ानून का उल्लंघन करनेवाले व्यापारियों का खुल्लमखुल्ला साथ देने लगे। जनता के हित के लिये, इस प्रकार की असामाजिक प्रवृत्तियों पर अंकुश लगाना अत्यंत आवश्यक था। माओ त्से तुंग ने सन् १९५२ के नूतन वर्षाभिनन्दन के अवसर पर इस ओर जनता का ध्यान आकर्षित करते हुए, निम्नलिखित शब्द कहे थे—

> "इसके अतिरिक्त, मैं अपने सबके लिये एक नये खोले हुए मोर्चे पर विजय की कामना करता हूँ। यह एक ऐसा मोर्चा है, जिस पर एक बड़े पैमाने पर भ्रष्टाचार, अपव्यय और नौकरशाही के विरुद्ध संग्राम करने के हेतु देश की समस्त जनता और कार्य करनेवाली संस्थाओं का जागृत होने तथा बल और अतिशय दृढ़तापूर्वक कार्य करने के लिये आह्वान किया जाता है, जिससे प्राचीन समाज के अवशिष्ट दाग धुलकर साफ़ हो जायें।"

देशव्यापी सान्फ़ान् आंदोलन को थोड़े ही समय में काफ़ी सफलता प्राप्त हुई। अनेक 'व्याघ्रों' (लाव हू = व्याघ्र; भ्रष्टाचारी) ने अपने दोष स्वीकार करते हुए बताया कि उन्हें किस प्रकार व्यापारियों ने रिश्वतें दीं और किस प्रकार उन्होंने जनता के द्रव्य का दुरुपयोग किया। बहुतों ने वह द्रव्य वापिस कर दिया और भविष्य में सदाचरण पूर्वक बर्ताव करने का वादा किया। ऐसे व्यक्तियों के प्रति कोई क़ानूनी कार्रवाई नहीं की गई और न उन पर किसी प्रकार का आर्थिक दबाव ही डाला गया। इन लोगों के खिलाफ़ मामलों की

तहक़ीक़ात करते समय अवश्य ही सख़्ती से काम लिया गया। लेकिन, उन्हें सज़ा देते हुए आम तौर से बहुत नरमी बर्ती गई और अपराधी को पुनर्शिक्षण और आत्म-निरीक्षण द्वारा सुधारने की ही चेष्टा की गई। इसलिये, बड़े-बड़े मामलों में गिरफ़्त होने पर भी, अनेक व्यक्तियों को ऐसे ही छोड़ दिया गया। उदाहरण के लिये, छिंग ह्वा विश्वविद्यालय के ५,००० विद्यार्थी और अध्यापकों में से केवल एक पुलिस कर्मचारी और विश्वविद्यालय के कारोबार-मैनेजर को सवाल-जवाब के लिये तलब किया गया और कुछ समय बाद उसे भी अपनी जगह बरक़रार कर दिया गया। परन्तु, कुछ व्यक्ति ऐसे भी थे जिन्होंने अपना अपराध स्वीकार नहीं करना चाहा। ऐसे लोगों के विषय में पूरी तहक़ीक़ात करके, उन्हें जनता के समक्ष उपस्थित कर पुनः सुधार का अवसर दिया गया। यदि फिर भी किसी ने अपने विचारों में संशोधन न किया और अपराध गम्भीर हुआ, तो उसे जनता की अदालतों द्वारा दण्ड दिया गया; फिर चाहे वह कम्युनिस्ट पार्टी का सदस्य ही क्यों न रहा हो।

आन्दोलन सन् १९५१ के अन्त से आरंभ होकर जून सन् १९५२ तक चला। सान्फ़ान् आन्दोलन सरकारी कर्मचारियों और वूफ़ान् (पांच विरुद्ध) खासकर व्यापारियों के विरुद्ध चलाया गया था, जो रिश्वतें लेकर, टैक्स की चोरी करके, सरकारी सम्पत्ति का अपहरण करके, सरकारी ठेकों के काम में सरकार को धोखा देकर तथा सरकारी साधनों द्वारा प्राप्त सूचनाओं से मुनाफ़ा कमा कर जनता का अहित करते थे। सरकारी आंकड़ों के अनुसार, इस आन्दोलन में ४·५% सरकारी कर्मचारी अपराधी पाये गये और उन्हें उनके अपराधों के अनुसार दण्ड दिया गया। इससे सरकारी संस्थाओं से भ्रष्टाचार आदि दूर होने से सरकार और श्रमजीवी वर्ग दोनों परस्पर निकट आ गये; सरकारी कर्मचारियों की कार्य-कुशलता में वृद्धि हुई और सरकारी व्यय में कमी हो गई। इसके अतिरिक्त, पीकिंग, शंघाई (पाङ् हाय्) टीन्सटिन (थ्येन् चिन्) आदि नगरों में ४,५०,००० निजी उद्योग-धंधों की जांच-पड़ताल की गई, जिनमें ७६% अपराधी पाये गये। क़ानून का उल्लंघन करने वाले व्यापारी और उद्योग-पतियों को उनके अपराधानुसार सज़ायें दी गईं।

सानफ़ान् आन्दोलन के सम्बंध में ब्रिटिश और अमरीकन समाचार एजेंसियों ने तरह-तरह के गंदे समाचार फैलाने की कोशिश की है। इन समाचारों

के अनुसार, चीन की कम्युनिस्ट पार्टी ने इस आंदोलन के बहाने अपनी नीति से मतभेद रखनेवालों को दण्ड देकर, पार्टी का 'शुद्धीकरण' किया है। सन् १९५२ के मई दिवस पर आये हुए, भारतीय सांस्कृतिक प्रतिनिधि-मंडल के एक सदस्य ने भी अपनी लेखमाला में इस आंदोलन को 'निर्मम संघर्ष' आदि नामों से उल्लिखित किया था; परंतु वास्तव में बात ऐसी नहीं है। जिन्होंने चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का इतिहास पढ़ा है अथवा जो चीनी जनता के सामाजिक जीवन से परिचित हैं, वे समझ सकते हैं कि विना 'निर्ममता' के भी चीन में इस प्रकार के आंदोलन सफल हो सकते हैं। कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्यों को आत्म-शिक्षण और आत्म-आलोचना द्वारा शक्ति प्राप्त कर, क्रांतिकारी संघर्ष को आगे बढ़ाने का आदेश है। ल्यू शाओ ची (लियू षाव् छवी) के शब्दों में, "क्षणिक ग्रहण के पश्चात् जैसे सूर्य और चन्द्रमा अपना प्रकाश फैलाना आरंभ कर देते हैं उसी प्रकार पार्टी के सदस्य को साहसपूर्वक अपनी ग़लतियाँ स्वीकार कर, उन्हें दुरुस्त करने के लिये" ताक़ीद की गयी है। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी अपने कठोर अनुशासन के लिये प्रसिद्ध है। यदि किसी पार्टी के सदस्य ने २० या ३० वर्षों तक कठोर जीवन यापन करने के पश्चात् भी अपनी कठोर साधना को देशभक्ति का प्रमाणपत्र समझ कर, कोई अशोभनीय कार्य किया तो वह उसे गर्हित ही मानती है।

सानफ़ान् आन्दोलन वस्तुतः चीन का एक अत्यंत महत्वपूर्ण आन्दोलन था, जिसका तात्पर्य था—आर्थिक-क्षेत्र में भ्रष्टाचार को मिटाकर और बरबादी को रोककर, देश के उत्पादन में वृद्धि करना और कृषि-प्रधान देश को औद्योगीकरण की ओर ले जाना तथा राजनीतिक क्षेत्र में प्राचीन सामाजिक व्यवस्था को बदल कर नई जनवादी व्यवस्था को अंगीकार करना। यह आन्दोलन कोई नैतिक आन्दोलन नहीं था कि लोग कनफ्यूशियस, ईसा मसीह या किसी अन्य महात्मा पुरुष की भाँति अपने-अपने 'पापों का प्रायश्चित' कर रहे थे; न यह कोई गृहयुद्ध था, जिससे यह कहा जाय कि पति-पत्नी, पिता-पुत्र और विद्यार्थी-अध्यापक 'भेड़ की खाल में भेड़ियों' की ताक़ में रहने के लिये, एक दूसरे पर छोड़ दिये गये थे। यह बात दूसरी है कि कुछ निरपराध व्यक्तियों के साथ भी कदाचित् ज़्यादती हुई हो। परन्तु, इस प्रकार के आंदोलनों में ऐसा होना स्वाभाविक है। इससे अधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि जब भी इस प्रकार की घटनाओं की ओर अधिकारियों का ध्यान आकर्षित किया गया तो उन्होंने

बहुत अफ़सोस जाहिर किया और इन घटनाओं के लिये जिम्मेदार व्यक्तियों के खिलाफ़ उचित कार्रवाई की गई। इस आन्दोलन के जरिये अनेक बुराइयों का भण्डाफोड़ हुआ। भ्रष्टाचार सम्बंधी अनेक रहस्यों का उद्घाटन हुआ; ज़िम्मेदार पदों पर आसीन कुछ व्यक्ति ऐसे पाये गये जिन्होंने स्वार्थ-सिद्धि के लिये नाजायज़ उपायों का अवलम्ब लिया था।

आंदोलन के कारण, पीकिंग विश्वविद्यालय कई मास बन्द रहा और इस बीच में विद्यार्थियों ने भ्रष्टाचारियों का पता लगा कर, आन्दोलन में सक्रिय भाग लिया। विश्वविद्यालय के प्रेसीडेण्ट, (वाइस चांसलर), वाइस प्रेसीडेण्ट, प्रोफेसर, विद्यार्थी, क्लर्क आदि सब किस उत्साह और लगन के साथ प्रातःकाल, दोपहर और रात्रि के समय होनेवाली सभाओं में सम्मिलित होकर, आंदोलन सम्बंधी वाद-विवाद करते थे, इसका अनुमान अखबारी दुनिया से या इधर-उधर से कुछ बातें सुनकर नहीं लगाया जा सकता। पीकिंग विश्वविद्यालय के पौर्वात्य भाषा और साहित्य विभाग की ऐसी सभाओं में सम्मिलित होने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ है। विद्यार्थियों का उत्साह फूटा पड़ रहा था। राष्ट्रीय संगीत और नारों से सभा-भवन गूंज रहा था। अध्यापक और विद्यार्थी अपने विचारों की आलोचनात्मक रिपोर्टें दे रहे थे। जोशीले भाषण और कविता-पाठ हो रहे थे और करतलध्वनि कानों को बधिर किये दे रही थी। नौकरशाही विचारधारा की आलोचना के सिलसिले में, सभा में एक प्रोफेसर की अध्यापन-पद्धति की भी आलोचना की गई। एक दूसरे प्रोफेसर ने बताया कि वह अपने आपको सबसे बुद्धिमान समझता था, लेकिन यह उसकी गलती थी। सान्फ़ान् आन्दोलन सम्बंधी एक फिल्म भी बनाई गयी। इस फिल्म में व्यापारियों के भ्रष्टाचार के साथ-साथ, युनिवर्सिटी और कालेजों में होने वाले अपव्यय आदि सम्बंधी चित्र भी प्रदर्शित किये गये थे। इन सब बातों से आन्दोलन के महत्व और उसकी गम्भीरता का कुछ अनुमान किया जा सकता है।

इस आन्दोलन को किस रूप में और कहां तक सफलता प्राप्त हुई है, इस बात को तो अधिकारपूर्वक नहीं कहा जा सकता लेकिन, इतना अवश्य है कि देश से राष्ट्र-विरोधी प्रवृत्तियों को दूर करने के लिये यह एक बहुत सोच-समझ कर उठाया हुआ क्रान्तिकारी क़दम था, जिससे पता लगता है कि चीन की नई सरकार कितनी सतर्कता से अपनी बुराइयों को दूर करने में जुटी हुई है।

मई दिवस

हमारे पहुंचने के समय अन्तर्राष्ट्रीय मज़दूर--दिवस की तैयारियां होना आरंभ हो गई थीं। विद्यार्थी स्वयं झाड़ुओं से युनिवर्सिटी की सफ़ाई कर, उसे झण्डों और पोस्टरों से सजा रहे थे। मज़दूर नालों और सड़कों की सफ़ाई करने में लगे हुए थे। कारखानों के मज़दूरों में उत्पादन में वृद्धि करने की होड़ लगी हुई थी। बाज़ार, गली और कूचे तारिकाओं से चिन्हित लाल ध्वजाओं से सजा दिये गये थे। लाल रंग के कंदील जला कर, सर्वत्र रोशनी की गई थी। विद्यार्थी और जनमुक्ति सेना के सिपाही परेड का अभ्यास कर रहे थे। वस्तुओं के भावों में कमी कर दी गई थी। विद्यार्थी नई-नई पुस्तकें खरीद रहे थे। नर-नारी सुन्दर पोशाकों में थे और सर्वत्र उत्साहपूर्ण चेहरे दिखाई दे रहे थे।

कोरिया से नये आये हुए विद्यार्थी और प्रोफेसरों के साथ, हम परेड के मैदान के लिये रवाना हुए। सड़कों पर गाड़ियों का आवागमन बन्द था। वृद्ध महिलायें शिशुओं को लिये, अपने घरों के सामने एकत्रित थीं। जगह-जगह पानी से भरे हुए टीन के डिब्बे रखे हुए थे। थ्येन् आन् मन् की दीवारें लाल रंग से पुती हुई थीं और उन पर सुनहली फूल-पत्तियां कढ़ी थीं। ऊपर बड़ी गैलरी में, एक पंक्ति में लाल रंग के कंदील टंगे थे। सामने दोनों ओर, अतिथियों के लिये दो ऊंची गैलरियों के आगे एक खाई और उसके बाद एक छोटी दीवार थी। कुछ आगे चल कर एक सड़क थी, जिसके चारों ओर चार खंभे लगे थे। ऐतिहासिक तोरणों से सुशोभित थ्येन् आन् मन्, जो कभी राजा-महाराजाओं का क्रीड़ा-स्थल रहा है, अपार जनसमूह से भर गया था। मज़दूर, किसान, विद्यार्थी, अध्यापक, लेखक, कलाकार, स्त्री-पुरुष, बच्चे-बूढ़े सभी रंग-बिरंगी पोशाकें पहिने, हाथों में ध्वजायें, झण्डे, चित्र, कबूतर तथा पुष्पगुच्छ लिये, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय नारों से आकाश-मंडल को गुंजित करने लगे। अल्प-संख्यक जातियों के स्त्री-पुरुषों की विविध वेश-भूषाओं और उनके धारण करने के विविध प्रकार विशेष ध्यान आकर्षित कर रहे थे। लाल, पीले, हरे और गुलाबी वर्णों के रेशमी झण्डों का सागर लहरा रहा था। ये झण्डे तारक-तारिकायें और हंसिये-हथौड़े के चिन्हों से सुशोभित थे।

दर्शकगण शान्तिपूर्वक अपने-अपने स्थानों पर आकर बैठ गये। कहीं शोर-गुल या आपाधापी नहीं, सभी जगह स्वयंसेवकों का प्रबन्ध था। पुलिस

थ्येन् आन् मन् में प्रदर्शन

हवाई जहाज आकाश में पहुंच कर, भांति-भांति के रंग-बिरंगे कागजों की वर्षा करने लगे। कुछ मिनटों बाद, हवा में बहते हुए जब ये कागज पृथ्वी पर आकर गिरे तो भीड़ उन्हें पकड़ने के लिये उछल-कूद मचाने लगी। इसी समय आकाश-मण्डल पटाखों की आवाजों से गूंज उठा। ये पटाखे आकाश में तारों के समान देदीप्यमान होते और तत्पश्चात् फूट कर, छोटी-छोटी राष्ट्रीय ध्वजाओं की पंक्तियों का रूप धारण कर आकाश में उड़ने लगते। ठीक दस बजे, नये चीन के निर्माता माओ मंच पर उपस्थित हुए। उनके समीप जनरल चूते, उपाध्यक्ष ल्यू शाओ ची, प्रधान मंत्री चाउ एन लाई (चौ आन् लाय्) उपप्रधान मंत्री कुओ मो जो (क्वो मो रो) आदि नेता दिखाई दिये। सर्वप्रथम धरातल को कंपित कर देने वाली २८ तोपों की सलामी दी गई और फिर राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय गान के साथ पीकिंग के मेयर ने परेड की समारंभ घोषणा की। नारों की तुमुल ध्वनि से मैदान गूंज उठा—

सांस्कृतिक प्रतिनिधि-मण्डल, दूसरा प्रोफेसर के. टी. शाह के नेतृत्व में भारतीय ट्रेड यूनियनों का प्रतिनिधि-मण्डल, जिसमें समस्त भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस, मिल मजदूर यूनियन (लाल झण्डा) आदि दलों के प्रतिनिधि शामिल थे, जो समस्त चीनी श्रमिक संघ की ओर से आमंत्रित किये गये थे। पीकिंग की अनेक संस्थाओं की ओर से प्रतिनिधि-मंडलों का शानदार स्वागत किया गया। गत तीन वर्षों में आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक क्षेत्रों में चीन ने जो उन्नति की है उससे प्राय: सभी एकमत थे। कुछ सदस्य चीन में सहशिक्षा की सफलता तथा किसान-मजदूरों के लड़के-लड़कियों को स्कूलों और युनिवर्सिटी में शिक्षा प्राप्त करने का अवसर दिये जाने के कारण प्रभावित जान पड़ते थे। श्रीमती विजयलक्ष्मी पंडित चीनी जनता की बदली हुई ' स्पिरिट ' (भावना) से प्रभावित थीं। उन्होंने चीन के मजदूर-किसानों तथा मुक्ति-आन्दोलन में भाग लेने वाले व्यक्तियों के बालक-बालिकाओं को शिक्षा देने वाले जन विश्वविद्यालय (पीपुल्स युनिवर्सिटी), स्वास्थ-विभाग तथा शिशुओं की नर्सरी आदि की मुक्तकंठ से प्रशंसा की थी। श्रीमती पंडित के भारत लौटने पर, उनके नाम का उल्लेख करके " न्यूयॉर्क टाइम्स " में ह्वाई नदी पर काम करने वाले मजदूरों के सम्बंध में जो वक्तव्य प्रकाशित हुआ, उसका प्रतिवाद करते हुए श्रीमती पंडित ने कहा था—" यह सर्वविदित सत्य है कि ह्वाई नदी का बांध लगभग २० लाख किसानों के स्वेच्छापूर्ण सहयोग से बनाया गया है। यहां के चलन के अनुसार, किसानों का मेहनताना चावल की कैटी (१ कैटी=१$\frac{१}{३}$ पौण्ड) में दिया गया है।" अपने वक्तव्य में चीनी जनता के उत्साह और अनुशासन की प्रशंसा करते हुए, आपने चीन की सफलता पर पुनः हर्ष व्यक्त किया।

प्रतिनिधि-मण्डल की ओर से श्रीमती पंडित ने चीनी सरकार के गणमान्य व्यक्तियों को पीकिंग में प्रीतिभोज दिया, जिसमें सन् १९३८ में पंडित नेहरू द्वारा जापानी युद्धकाल में चीन भेजे हुए मेडीकल मिशन के सदस्य डॉ. कोटनीस की चीनी पत्नी श्रीमती कोटनीस और उनके दस वर्ष के यिन् ह्वा (जिसका अर्थ है—भारत-चीन) नामक पुत्र को भी आमंत्रित किया गया था। प्रीतिभोज में चीन और भारत की जनता की मित्रता और उसकी मंगल कामना के लिये प्याले टकराये गये और खड़े होकर, हर्ष ध्वनि के साथ पेय द्रव्यों का यथेच्छ पान किया गया। १६ मई को भारत और चीन में सहयोग और सांस्कृतिक आदान-प्रदान की अभिवृद्धि के लिये चीनी-भारतीय मित्र-मण्डल की

स्थापना हुई। मण्डल के अध्यक्ष (तिङ् शी लिन्), प्रोफेसर कुओ मो जो, श्रीमती पंडित, चीन के भूतपूर्व भारतीय राजदूत सरदार पणिक्कर, प्रोफेसर बागची आदि के भाषण हुए। तिंग सीलिंग ने अपने व्याख्यान में २६ जनवरी, १९५२ को दिये हुए माओ त्से तुंग के भाषण को फिर से दोहराया—

"भारतीय राष्ट्र एक महान राष्ट्र है और भारतीय जनता श्रेष्ठ जनता है। हजारों वर्षों से चीन और भारत दोनों की जनता के बीच उत्तम मित्रता रही है। आज भारत के राष्ट्रीय दिवस के समारोह पर, हमें आशा है कि चीन और भारत दोनों ही संयुक्त होकर रहेंगे और शान्ति के लिये प्रयत्न जारी रखेंगे। समस्त विश्व की जनता को शान्ति की आवश्यकता है; कतिपय लोग ही युद्ध चाहते हैं। भारत, चीन, सोवियत संघ तथा अन्य शान्तिप्रिय देशों की जनता सुदूर पूर्व एवं विश्व में शान्ति के रक्षार्थ संयुक्त होने के लिये प्रयत्नशील है।"

कुओ मो जो ने अपने भाषण में कहा—

"इसमें ज़रा भी अत्युक्ति नहीं कि चीन और भारत संसार के दो महान राष्ट्र हैं। दोनों देशों के प्रदेश विस्तृत हैं, बड़ी विशाल जन संख्या है, समृद्ध पैदावार है और दोनों का लम्बा इतिहास है। भूतकाल में मानव जाति के सांस्कृतिक इतिहास को हमारी शानदार देन रही है तथा भविष्य में भी अपने अलग-अलग प्रयत्नों और सामान्य प्रयत्नों द्वारा, निस्संदेह ही मानव जाति के इतिहास को हमारी शानदार और एक नई देन रहेगी।

"फिर, हमारी मित्रता सुरक्षित रही है। हमारे दोनों विस्तृत देशों ने अपने लम्बे इतिहास के काल में कभी कोई लड़ाई-झगड़ा नहीं किया और न दोनों के बीच कोई अमित्रतापूर्ण या असुखद घटना ही घटित हुई है। हमने हमेशा शान्ति और जनहित में वृद्धि करने के लिये, अपनी राष्ट्रीय चतुराई और श्रमजीवी जनता के सम्पादनों द्वारा एक दूसरे की सहायता ही की है। ऐसी सुन्दर श्रेष्ठ मिसाल सचमुच ही मानव जाति के इतिहास में अलौकिक है।

"जहां तक चीनी जनता का सम्बंध है, भूतकाल में भारतीय जनता को उसकी ओर से जो उपहार दिये गये वे अपेक्षाकृत न्यून रहे हैं, लेकिन अब से हम अपने पूर्व पुरुषों के ऋण को अधिकाधिक मात्रा में चुकायेंगे।"

कर देते हैं। खाने-पीने की सब चीज़ें ढकी हुई रखते हैं। चूहों के बिल बन्द कर दिये गये हैं और बोर्डों पर स्वास्थ-रक्षा सम्बंधी नियम लिखे रहते हैं। चीन के अन्य गांवों में भी स्वास्थ-केन्द्रों की संख्या बढ़ रही है।

सफ़ाई-आन्दोलन के अतिरिक्त, चीन में व्यायाम पर भी ज़ोर दिया जाता है। १ दिसम्बर, १९५१ से रेडियो द्वारा अनेक नगरों में व्यायाम का १२ मिनिटों का कार्यक्रम प्रसारित होने लगा है, जिससे रेडियो की ध्वनि सुनते ही अपने-अपने मुहल्लों में लाखों स्त्री-पुरुष कसरत करने लगते हैं। पीकिंग के ढाई लाख विद्यार्थी नियमित व्यायाम करके, इस कार्यक्रम से लाभ उठाते हैं। यह कार्यक्रम गांवों में भी पहुंच गया है। व्यायाम विद्यार्थियों के पाठ्य-क्रम का एक आवश्यक अंग है। व्यायाम के अतिरिक्त, बॉस्केट बॉल, वॉली बॉल, फुटबॉल, हॉकी, टेबिल टेनिस, कुश्ती, बॉक्सिंग, स्केटिंग आदि खेलों में भी लोग भाग लेते हैं। १ अगस्त, १९५२ को पीकिंग में ११ दिनों तक खेल-दिवस मनाया गया, जिसमें व्यायाम के अनेक प्रकार तथा खेल आदि दिखाये गये। अखिल चीन व्यायाम-संघ की ओर से इस दिशा में विशेष रूप से प्रयत्न हो रहा है।

अस्पतालों में भी वृद्धि हुई है। पहले अस्पतालों से इने-गिने उच्च वर्ग के व्यक्तियों को ही लाभ पहुंचता था लेकिन, अब अस्पताल पूर्ण रूप से सार्वजनिक घोषित कर दिये गये हैं और यहां श्रमजीवियों की चिकित्सा का विशेष ध्यान रखा जाता है। जुलाई सन् १९५२ से सरकारी कर्मचारियों का मुफ़्त इलाज किया जाने लगा है। चिकित्सा की आधुनिक और प्राचीन दोनों ही पद्धतियों को काम में लिया जाता है। चीन के स्वास्थ-विभाग के मंत्रिमण्डल की ओर से सन् १९५३ में २,००० डाक्टरों को चीन की प्राचीन डाक्टरी पद्धति से शिक्षा देने की योजना बनाई गई है। पहले प्रसूति के समय माताओं को बहुत कष्ट होता था, किन्तु अब सोवियत पद्धति का अनुसरण करने से कष्ट नहीं होता। जनवरी--अप्रैल सन् १९५२ तक अधिकांश बच्चे इसी पद्धति से पैदा हुए थे। गत तीन वर्षों में चीन में कई हज़ार मातृगृह खोले जा चुके हैं और हज़ारों पुराने ढंग की नर्सों को नई ट्रेनिंग दी गई है। कारखानों और खदानों में भी स्वास्थ-रक्षा के केन्द्र खोल दिये गये हैं तथा नदियों और रेलों की योजनाओं में भाग लेने वाले श्रमिकों की देखभाल के लिये डाक्टर तैनात रहते हैं। नानकिंग, हैंको आदि स्थानों में विशेष रोगों के अस्पतालों में वृद्धि हो रही है।

हम लोगों ने पीकिंग के एक अस्पताल का निरीक्षण किया, जिसमें माताओं की प्रसूति और शिशुओं की स्वास्थ्य-रक्षा का ध्यान रखा जाता है। अस्पताल में ६० खाटें स्त्रियों के लिये और ६० शिशुओं के लिये हैं। अस्पताल की व्यवस्था, विशेषकर रोगियों के प्रति डाक्टर और नर्सों का सहानुभूतिपूर्ण बर्ताव, प्रशंसनीय है। गत वर्ष प्रसूति के समय २,३५६ माताओं में से केवल दो तथा प्रसूति के पश्चात् केवल १२ शिशुओं की मृत्यु हुई !

पहले प्राइवेट डाक्टर और नर्सें माताओं और शिशुओं की चिकित्सा कर, उनसे मनमाना पैसा वसूल किया करते थे; लेकिन अब सरकारी स्वास्थ ब्यूरो की अध्यक्षता में प्रत्येक मुहल्ले में स्वास्थ-केन्द्र खोल दिये गये हैं, जो उस मुहल्ले में रहने वाले व्यक्तियों के स्वास्थ के लिये जिम्मेदार हैं। इन केन्द्रों में मातृगृह और शिशु-रक्षा विभाग भी हैं, जहां गर्भवती माताओं और शिशुओं की स्वास्थ-रक्षा का ध्यान रखा जाता है। इन स्वास्थ-केन्द्रों की मार्फ़त ही ऑपरेशन वग़ैरह के केस बड़े अस्पतालों में भेजे जाते हैं। डाक्टरों और नर्सों को सरकार की ओर से खास सहायता दी जाती है।

जुलाई सन् १९५२ से इस अस्पताल में प्रसूति की सोवियत पद्धति का प्रयोग किया जाने लगा है, जो पावलोव नामक एक सोवियत वैज्ञानिक के मनोविज्ञान के सिद्धांत पर आधारित है। इस पद्धति के अनुसार, प्रसूतिकाल के नज़दीक आने पर भाषणों आदि के द्वारा डाक्टर और दाईयां गर्भ तथा प्रसव की शारीरिक प्रक्रियायें स्त्री को अच्छी तरह समझा देते हैं और प्रसूति के समय उसे श्वास की कसरत करने तथा शरीर को शिथिल छोड़ देने के लिये कहा जाता है। सोवियत पद्धति के प्रयोग में खास तौर से निम्न बातों का ध्यान रखा जाता है—प्रसव के समय को कम करना, पैरिनियम (जननेन्द्रिय और गुह्यस्थान के बीच के भाग) के विस्तार को घटाना तथा बच्चे के सिर की सूजन और उसकी सांस लेने की कठिनाई को कम करना। पहले प्रसूति के पश्चात् मातायें एक या दो सप्ताहों तक खाट पर पड़ी रहती थीं, लेकिन अब वे एक या दो दिनों में ही चल-फिर सकने योग्य हो जाती हैं। गर्भवती स्त्रियों को अस्पताल में भरती करने से पहले और प्रसूति के पश्चात् घर वापिस जाते समय उनकी अच्छी तरह परीक्षा की जाती है तथा घर पहुंचने के बाद भी डाक्टर उनके साथ सम्पर्क बनाये रखते हैं।

अस्पतालों में अधिकतर देश की बनी हुई साधारण दवाइयाँ और देशी औज़ार वग़ैरह ही उपयोग में लिये जाते हैं।

बीमार की हैसियत से भी हमें पीकिंग के अस्पतालों में जाने का मौक़ा पड़ा है। हमने डाक्टरों को बड़ी सहृदयता से काम करते हुए पाया। उनकी मुखमुद्रा को कभी गम्भीर नहीं देखा, सहानुभूति और सदा सहज मुस्कराहट का भाव ही उस पर दिखाई दिया।

उत्तर चीन के लोग साधारणतया स्वस्थ रहते हैं, लेकिन फिर भी वे अपने स्वास्थ में उन्नति कर रहे हैं। पिछले तीन वर्षों में हैज़े से एक भी मृत्यु नहीं हुई और प्लेग भी ख़त्म हो गई है। चेचक के रोगियों में सन् १९५० की अपेक्षा ९०% कमी हुई; चेचक के टीके सबको लगवाना आवश्यक है। टायफ़ाइड और पेचिश की बीमारियों में भी पहले की अपेक्षा बहुत कमी है। इसके सिवाय, सरकारी कर्मचारियों, विद्यार्थियों और अध्यापकों आदि की हर साल डाक्टरी परीक्षा की जाती है और किसी बीमारी की आशंका होने पर उन्हें आराम करने के लिये कहा जाता है। चीनी गांवों में पाख़ाने साफ़ करने के लिये प्रायः कोई ख़ास आदमी नहीं रहता; गांवों के लोग ही स्वयं साफ़ करते हैं और मलमूत्र को दूर खेतों में ले जाकर डाल देते हैं, जिससे मक्खी वग़ैरह कीटाणु पैदा नहीं हो पाते। कीटाणु-उत्पादक कुत्तों को भी दूर रखा जाता है। इसीलिये, पीकिंग की सड़कों पर कुत्ते प्रायः दिखाई नहीं देते। रेलगाड़ियां वग़ैरह भी कृमिनाशक पदार्थों से साफ़ की जाती हैं। चीन के स्टेशनों पर मुंह की भाप से खाद्य पदार्थों की रक्षा के लिये, खाद्य पदार्थ बेचने वालों के मुंह पर पट्टी बंधी रहती है। ये लोग खाद्य वस्तु को हाथ से स्पर्श न कर, एक छोटे चिमटे या चापस्टिक से उठाकर ग्राहकों को देते हैं। शाक-भाजी के बाज़ारों में मछली और गोश्त की दूकानों पर पहले मक्खियां भिनभिनाती रहती थीं, लेकिन अब यह बात नहीं है।

दरअसल स्वास्थ आन्दोलन के पीछे चीनी जनता की महान शक्ति है, जो केवल स्वास्थ सम्बंधी क़ानून पास कर देने से प्राप्त नहीं हो सकती। चीन की जनता भली भांति समझती है कि प्रत्येक मनुष्य स्वस्थ रहना चाहता है और सबके स्वास्थ की रक्षा करना प्रत्येक व्यक्ति का कर्त्तव्य है।

विद्यार्थियों के सम्पर्क में

चीन में बिना चीनी भाषा जाने कोई काम नहीं चल सकता, इसलिये उसका ज्ञान अत्यन्त आवश्यक है। यद्यपि हिन्दी-विभाग के विद्यार्थी और अध्यापक यिन् हुंग य्वेन् तथा फ़न् चन् त्वो हमारी सहायता करते थे, परन्तु वांग च्ये षान् को विशेष रूप से हम लोगों का दिग्दर्शक बनाया गया था। वांग पौर्वात्य भाषा और साहित्य-विभाग के चतुर्थ वर्ष के विद्यार्थी हैं। दो वर्ष आपने संस्कृत और लगभग दो वर्ष हिन्दी का अध्ययन किया है। अंग्रेज़ी अच्छी तरह बोल लेते हैं। हमको जब कभी बाज़ार से कुछ ख़रीदना होता, किसी से मिलना होता, पुलिस दफ़्तर, पुस्तकालय या किसी सभा आदि में जाना होता तो वांग हमेशा ही साथ रहते तथा बड़े उत्साह से हमारा काम करते थे। प्रायः वे कहा करते थे—"आपका काम करने में मुझे बड़ी खुशी होती है; विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों ने यह काम मेरे सिपुर्द किया है। यह मेरा कर्त्तव्य है।"

चीन के विद्यार्थियों से मेरा यह प्रथम परिचय था। धीरे-धीरे विद्यार्थियों का सम्पर्क बढ़ता गया। सिमोनोफ़ का लिखा हुआ **विदेशी राज्य की छाया में** नामक नाटक देखा। नाटक में भाग लेने वाले विश्वविद्यालय के विद्यार्थी थे। नाटक-गृह में प्रवेश करने के लिये, विद्यार्थियों और प्रोफेसरों की क़तार

लगी हुई थी। हाल ठसाठस भर गया, किन्तु सब लोग अपने अपने स्थानों पर शान्तिपूर्वक बैठे हुए थे। सब काम व्यवस्थापूर्वक चल रहा था। कुछ दिनों बाद, विद्यार्थियों की ओर से अमरीकी बमबारी से कोरिया की प्रयोग-शाला नष्ट होजाने के कारण, कोरिया से पीकिंग विश्वविद्यालय में साइंस पढ़ने के लिये आये हुए विद्यार्थियों का स्वागत-समारोह हुआ। विश्वविद्यालय के उद्यान को विद्युत्-दीपों से सजा दिया गया था। फव्वारे से जलकण ऊपर उड़ कर नीचे गिर रहे थे। विद्युत्-प्रकाश जलकणों को आलोकित कर रहा था। लाल ध्वजायें फहरा रही थीं और माओ तथा सेनापति किम इल सुंग के चित्र पास-पास टँगे हुए थे। सर्वप्रथम पीकिंग विश्वविद्यालय के प्रेसीडेण्ट मा यिन् छू द्वारा विद्यार्थियों का स्वागत किया गया। तालियों की गड़गड़ाहट से उद्यान गूंजने लगा। विद्यार्थियों के एक प्रतिनिधि ने कोरिया के छात्रों का स्वागत हुए कहा—"आप लोग वीरों की भूमि के निवासी हैं। आप हमारे देश में साइंस का अध्ययन करने आये हैं। हम आपका हार्दिक स्वागत करते हैं। आप हमारे अनुभवों से लाभ उठाकर शत्रु को परास्त करें। हम आपके सहयोगी हैं। एकता महान् शक्ति है।" तत्पश्चात्, कवितायें पढ़ी गयीं और रूसी, कोरियायी तथा चीन की अल्पसंख्यक जातियों के नृत्यों का प्रदर्शन हुआ। विद्यार्थियों का जोश उमड़ा पड़ रहा था। सबके हाथ फ़ौजी सिपाहियों के समान एक साथ ऊपर उठे और "माव् चूशी .वान् स्वै" (अध्यक्ष माओ ज़िन्दाबाद), "चुङ चाव् थ्वान् च्ये वान् स्वै" (चीन-कोरिया की एकता ज़िन्दाबाद), "पेचिङ् श्युए वान् स्वै" (पीकिंग विश्वविद्यालय ज़िन्दाबाद) आदि नारों से आकाश-मंडल गुंजित हो उठा। मालूम होता था कि स्फूर्ति, प्रेरणा, अनुशासन और प्रगति साकार हो उठे हों। चीन के विद्यार्थी राष्ट्र के आन्दोलनों में जितना डटकर भाग लेते हैं उतना ही सांस्कृतिक प्रवृत्तियों में भी लेते हैं, इसलिये उनके जीवन में सरसता विद्यमान रहती है, शुष्कता नहीं आ पाती—यह अनुभव हुआ।

एक बार पीकिंग विश्वविद्यालय के जनवादी मैदान में हंगेरी नृत्यकला का प्रदर्शन किया गया। मैदान पीकिंग के अन्य विश्वविद्यालयों और स्कूलों के लगभग २० हज़ार विद्यार्थियों से भरा हुआ था। विद्यार्थी ज़मीन पर बैठे थे। पीछे की ओर प्रोफेसरों तथा अतिथियों के लिये कुछ कुरसियां बिछी हुई थीं। कोई कार्यक्रम विशेष रूप से पसंद आने पर विद्यार्थी दल के प्रतिनिधि खड़े होकर

उस कार्यक्रम के पुनः दिखाये जाने का अनुरोध करते थे। समस्त प्रोग्राम अत्यन्त व्यवस्थित और अनुशासित रूप से चल रहा था। साढ़े सात बजे से रात के बारह बज गये, परन्तु कार्यक्रम इतना रोचक था कि विद्यार्थी पुनः प्रदर्शन का अनुरोध किये चले जा रहे थे। इस समय मा यिन् छू मंच पर उपस्थित हुए और उनके हाथ का इशारा पाते ही, क्षण भर में सर्वत्र शान्ति व्याप्त हो गई।

विश्वविद्यालय में दिखाये जाने वाले अनेक सिनेमा और नाटक देखने का सौभाग्य भी मुझे प्राप्त हुआ। क़तार बनाकर राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय गीत गाते हुए, विद्यार्थियों के दल सिनेमा-भवन में प्रवेश करते और सब लोग जमीन पर, बेंचों पर या अपने-अपने स्टूलों और पीढ़ों पर शान्तिपूर्वक बैठ जाते। धक्का-मुक्की, आपाधापी या अन्य किसी प्रकार की अनुशासनहीनता न दिखाई देती। 'पिकनिक' आदि के समय भी, विद्यार्थियों का बर्ताव शिष्ट रहता। वे उत्साह-वर्धक और प्रेरणादायक गीत गाते और नृत्य करते। अश्लील और भद्दे गीत उनकी जबान से कभी सुनाई न देते। पहले विद्यार्थियों को नृत्य और गायन का शौक नहीं था, परन्तु आजकल ये दोनों उनके सांस्कृतिक जीवन का आवश्यक अंग हो गये हैं। विद्यार्थी भारत, तिब्बत, मंगोलिया आदि विभिन्न देशों के नृत्य सीखते हैं। दिसम्बर सन् १९५२ में पीकिंग विश्वविद्यालय में प्रविष्ट होने वाले विद्यार्थियों के स्वागत में हिन्दी विभाग के विद्यार्थियों द्वारा भारतीय नृत्यों का प्रदर्शन किया गया था।

अंग-प्रत्यंगों की भी एक साथ कसरत होती है, जो एक खासी फ़ौजी परेड सी लगती है। कसरत के बाद घंटी बजते ही, विद्यार्थी भोजनालय में प्रवेश करते हैं। वहां प्रत्येक मेज़ पर प्याले और पाव रोटियां रखी रहती हैं। पीने के लिये सोयाबीन का दूध और खाने के लिये भाप से सिकी हुई रोटियां दी जाती हैं। दोनों चीज़ें स्वादिष्ट और पुष्टिकारक होती हैं। एक मेज़ पर छ विद्यार्थी खड़े होकर भोजन करते हैं। रसोईघर में मांस, अण्डों और शाकभाजी का ढेर लगा रहता है। बड़ी-बड़ी भट्ठियों पर चढ़ी हुई कढ़ाइयों में तेल द्वारा खाद्य पदार्थ तले जाते हैं। मक्खी, मच्छर या गन्दगी कहीं नहीं, चीनी रसोइये स्वच्छ वस्त्र पहने अपने काम में दतचित रहते हैं।

चीन में विद्यार्थी सच्चे मायने में देश के कर्णधार माने जाते हैं। उन्हें और अध्यापकों को अधिक निकट लाने का प्रयत्न किया जाता है। पीकिंग विश्वविद्यालय में कुछ विभाग ऐसे हैं, जहां अध्यापक अपना अधिकांश समय विद्यार्थियों के साथ यापन करते हैं। कक्षा के अतिरिक्त पढ़ने-लिखने में यदि उन्हें कोई कठिनाई हो तो अध्यापक उसे हल करते हैं। इस सम्बंध में अध्यापकों तथा अध्यापक और विद्यार्थियों की सम्मिलित सभाओं में वाद-विवाद किया जाता है। अध्यापन की योजना अथवा समय-विभाग करते समय विद्यार्थियों की भी राय ली जाती है और उनकी सुविधाओं का ध्यान रखा जाता है। अध्ययन में उन्नति करने के लिये, विद्यार्थियों की परस्पर सहायक सभायें हैं, जिनमें होशियार विद्यार्थी कमज़ोर विद्यार्थियों की सहायता कर उन्हें आगे बढ़ाते हैं। अध्यापक भी इन सभाओं में भाग लेकर अपने अनुभवों से विद्यार्थियों को लाभ पहुंचाते हैं, इसलिये विद्यार्थी प्रायः फेल नहीं होते; परीक्षाओं के आतंक से भी संत्रस्त नहीं रहते।

शिक्षण-संस्थाओं में प्रतियोगिता के स्थान पर पारस्परिक सहायता को प्रोत्साहित किया जाता है। फुटबॉल आदि खेलों की टीमों में भी एक दूसरे से सीखने की मनोवृत्ति को ही प्रधानता दी जाती है। स्कूलों में 'पायोनियर' विद्यार्थी कमज़ोर विद्यार्थियों को उनके अध्ययन में सहायता करते हैं तथा कक्षा में अनुशासन और व्यवस्था रखने आदि की जिम्मेवारी लेते हैं। वैसे चीन के विद्यार्थी बड़े अध्ययनशील होते हैं और सुबह-शाम अपनी पुस्तकों का झोला लिये इधर-उधर बैठे पढ़ते-लिखते हुए दिखाई देते हैं। विश्वविद्यालयों में प्रायः बहुत बड़ी-बड़ी कक्षायें नहीं होतीं; उदाहरण के लिये, पौर्वात्य भाषा और साहित्य विभाग में एक कक्षा में लगभग १५-२० विद्यार्थी हैं। विदेशी भाषाओं के

अध्यापन में बातचीत का एक महत्वपूर्ण अंग रहता है। हिन्दी विभाग के विद्यार्थी भारत के सम्बंध में अधिकाधिक ज्ञान सम्पादन करने के लिये अत्यन्त उत्सुक हैं। निम्नलिखित प्रश्नों से उनकी जिज्ञासा का कुछ परिचय मिल सकता है—भारत सरकार द्वारा सुरक्षा परिषद में पेश किये हुए कोरिया-सम्बंधी प्रस्ताव के विषय में आपकी क्या राय है? कश्मीर के सम्बंध में भारत की क्या नीति है? भारत और पाकिस्तान के क्या सम्बंध हैं? क्या अभी भी भारत में किसी रूप में अंग्रेज़ों के स्वार्थ क़ायम हैं? आंध्र देश के किसान-आन्दोलन के बारे में कुछ बताइये? गांधी जी की राख गंगा में क्यों बहाई गई? भारत में विद्यार्थी-आन्दोलन कैसा चल रहा है?

एक बार एक विद्यार्थी ने अपने वक्तव्य में कहा: "लेनिन रूसी क्रांति का जन्मदाता है।" दूसरे विद्यार्थी ने इस वक्तव्य में सुधार करते हुए उतर दिया—"हाँ, लेनिन विश्व क्रांति का जन्मदाता है।" पहले विद्यार्थी ने अपनी ग़लती स्वीकार कर, अपने साथी को धन्यवाद दिया। विश्वविद्यालयों में अध्यापकों और विद्यार्थियों की हाज़िरी का कोई रजिस्टर आदि नहीं रहता, फिर भी दोनों समय पर उपस्थित रहते हैं। एक बार मेरी कक्षा में किसी विद्यार्थी के ज़रा देर से आने पर उसके साथी ने उसे टोका; देर से आनेवाले विद्यार्थी ने अपनी ग़लती स्वीकार की और भविष्य में ऐसा न करने का वादा किया।

चीनी विश्वविद्यालयों में राजनीति के अंध्ययन पर काफ़ी ज़ोर दिया जाता है। उन्हें मार्क्सवाद-लेनिनवाद की विचारधारा, एशिया का इतिहास, चीन का इतिहास आदि विषयों की शिक्षा दी जाती है। अन्तर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय गतिविधि को हृदयंगम करने के लिये, विद्यार्थियों को प्रतिदिन एक घंटे समाचार पत्रों को पढ़ना आवश्यक है। आजकल चीन के विद्यार्थी 'पा इ वू लिङ्' (८,१५०) पद्धति का पालन करते हैं, जिसका अर्थ है प्रति दिन आठ घंटे सोना, एक घंटे खेलना और एक सप्ताह में ५० घंटे पढ़ना। भूमि सुधार तथा ट्रेड यूनियनों का कार्य करने के लिये, विद्यार्थी अवकाश के समय गांवों और कारख़ानों में जाकर देश के किसानों और मज़दूरों से सम्पर्क स्थापित करते हैं। तथा देश के विविध आन्दोलनों में भाग लेकर राष्ट्र-निर्माण में हाथ बंटाते हैं। सान्फ़ान् आन्दोलन के समय ही सचाई और ईमानदारी का एक और भी आन्दोलन चीन में चला था। इन आन्दोलनों में सार्वजनिक रूप से अपनी

और दूसरों की आलोचना की जाती है। एक सहायक अध्यापक ने मुझसे इस सम्बंध में एक बार कहा था,—" सभा में मेरी सत्य उक्ति की बहुत प्रशंसा हुई; अब मैं अपने देश के लिये सारी शक्ति लगा कर काम करूंगा।"

पूर्व काल में केवल धनिक विद्यार्थी ही शिक्षा प्राप्त कर सकते थे, अधिकांश विद्यार्थी नौकरी आदि करके कालेज की फ़ीस का प्रबंध करते थे; परन्तु अब यह बात नहीं है। उच्च शिक्षा पाने वाले युनिवर्सिटी के विद्यार्थियों से किसी प्रकार की फ़ीस नहीं ली जाती और उनके भोजन, रहने तथा जेब-ख़र्च का प्रबंध सरकार की ओर से किया जाता है। स्कूल के विद्यार्थियों के लिये अभी पूरी तरह से यह व्यवस्था नहीं होसकी है। सब मिलाकर लगभग १७ लाख विद्यार्थियों को मुफ़्त शिक्षा और भोजन आदि की व्यवस्था है। पहले 'ग्रेजुएट' का अर्थ बेकार समझा जाता था, परन्तु अब चीनी सरकार प्रत्येक ग्रेजुएट को नौकरी देती है और जितने ग्रेजुएट पास होकर विश्वविद्यालयों से निकलते हैं वे पर्याप्त नहीं होते।

मैंने काफ़ी नजदीक से चीन के विद्यार्थियों का अध्ययन करने का प्रयत्न किया और उन्हें सरल, सीधा परिश्रमी और अत्यंत सहिष्णु पाया। परनिन्दा और निरर्थक वाद-विवाद में अपना समय नष्ट करते हुए उन्हें कभी नहीं देखा। फैशन की ओर उनकी रुचि नहीं है। छात्रों की अपेक्षा छात्रायें कुछ अधिक प्रतिभाशाली जान पड़ीं। व्यक्तिवाद के स्थान पर सामूहिकता की स्वस्थ भावना विद्यार्थियों में दिन पर दिन बढ़ रही है। यद्यपि विद्यार्थियों में साधारण बाह्य ज्ञान की कमी मालूम होती है और ऐसा लगता है कि पठन-पाठन की योजनाओं को जरूरत से ज़्यादा जटिल बना दिया जाता है। लेकिन, हम समझते हैं कि ये कठिनाइयाँ निकट भविष्य में समय आने पर काम करते-करते स्वमेव हल हो जायेंगी और तब राजनीति के साथ-साथ साहित्य, मनोविज्ञान, विश्व-इतिहास आदि विषयों को भी पाठ्य-क्रम में स्थान मिलेगा। जो कुछ भी हो, विद्यार्थियों में तीव्र जिज्ञासा है, अध्यवसाय है, अनुशासन है, देशभक्ति है और राष्ट्रनिर्माण की अटूट लगन है और जिस देश के युवकों में ये गुण विद्यमान हैं, उस देश की प्रगति अवश्यंभावी है।

पठन-पाठन
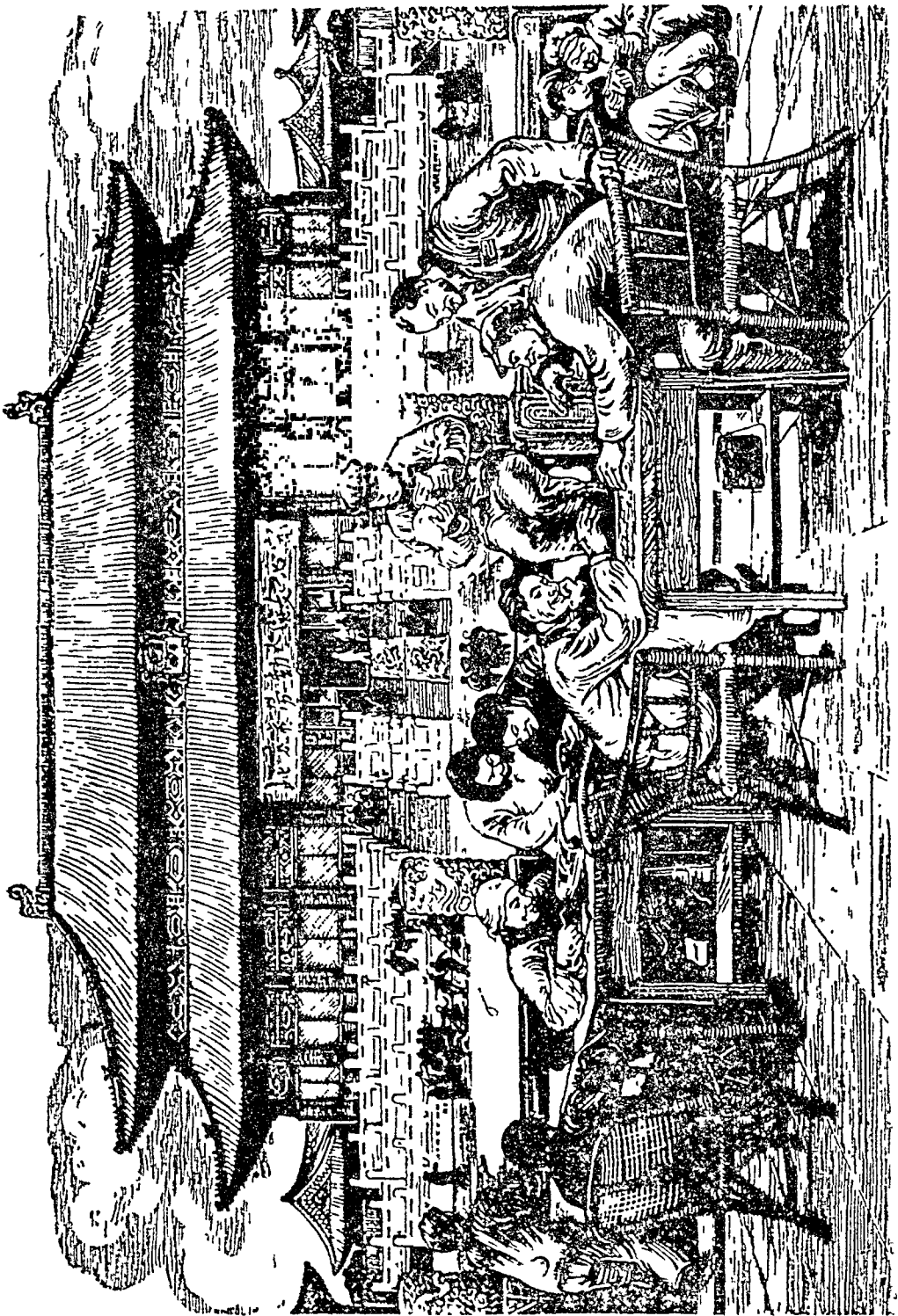
विश्वविद्यालय

चीन के विश्वविद्यालयों में पीकिंग विश्वविद्यालय अपनी क्रान्तिकारी परम्परा के कारण विश्वविख्यात है। सन् १८९८ में इसकी स्थापना हुई थी। यह विश्वविद्यालय एक जनवादी क्रांतिकारी संस्था रही है, इसलिये चीन के अनेक आन्दोलन यहां की कक्षाओं से ही उद्भूत हुए हैं। इस विश्वविद्यालय के अनेक भूतपूर्व प्रोफेसर आजकल चीनी सरकार के उच्च पदों पर आसीन हैं। स्वयं माओ त्से तुग यहां सहायक पुस्तकाध्यक्ष पद पर काम करते थे तथा चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के अन्यतम संस्थापक और माओ के प्रिय साथी अमर शहीद लि ता त्साओ यहां अध्यापन का कार्य करते थे। ४ मई, १९१९ का क्रान्तिकारी आन्दोलन विश्वविद्यालय के अध्यापकों और विद्यार्थियों के नेतृत्व में फैला था। स्वर्गीय प्रोफेसर लु शुन (लु श्युन्) यहीं साहित्य के अध्यापक थे और उक्त आन्दोलन में प्रमुख भाग लेने के कारण, उन्हें अपनी नौकरी छोड़कर पीकिंग से भागना पड़ा था। उस समय मार्क्सवाद-लेनिनवाद का अध्ययन करने के लिये विश्वविद्यालय में छोटे छोटे दल बन गये थे, जो आगे चलकर सन् १९२१ में कम्युनिस्ट पार्टी के रूप में परिवर्तित होगये। अप्रैल सन् १९२७ में लि ता त्साओ तथा केन्द्रीय कम्युनिस्ट पार्टी के कतिपय सदस्यों के साथ, पीकिंग विश्वविद्यालय के कतिपय छात्र और छात्राओं का भी गला घोंट कर, फांसी दे दी गई थी।

सन् १९३७ में जापानी युद्ध आरंभ होने के समय, चीन के जो विश्वविद्यालय समुद्र के किनारे थे वे या तो जापानियों द्वारा नष्ट कर दिये गये, या अध्यापक और विद्यार्थी उन्हें छोड़ कर चले गये। चीन की प्रसिद्ध 'एकेडमिआ सिनिका' नामक संस्था को अपना पुस्तकालय इण्डोचाइना होकर स्से छ्वान के एक दूर गांव में ले जाना पड़ा, किन्तु इससे भी अधिक कठिनाइयाँ पीकिंग और छिंग ह्वा विश्वविद्यालयों को उठानी पड़ी। पीकिंग विश्वविद्यालय को इस समय छांग षा (हूनान) में ले जाया गया, जहां जापानियों द्वारा बमबारी होने के कारण, सब लोग भाग कर दक्षिण-पश्चिम में कुनमिंग (खुन् मिङ्) पहुंचे। इन दिनों विद्यार्थी और अध्यापकों को ढंग का खाना पीना भी न मिलता था, [illegible] नी पुस्तकें, कपड़े और सामान वगैरह बेचकर गुजर करनी पड़ती

थी। पाठ्य पुस्तकों के अभाव में अध्यापकों को अपनी स्मरणशक्ति के आधार पर लेक्चर तैयार कर विद्यार्थियों को पढ़ाना पड़ता था। जापानी युद्ध से मुक्ति पाने के पश्चात् चीन में गृह-युद्ध आरंभ होगया, जिसके कारण बुद्धिजीवियों की धर-पकड़ होने लगी, जगह-जगह पुलिस तैनात कर दी गई, देशभक्तों की हत्यायें की जाने लगीं। आर्थिक अव्यवस्था के कारण, देश भर में भुखमरी और बेकारी का साम्राज्य छा गया। फिर भी साम्राज्यवादी जापान तथा प्रतिक्रियावादी क्वोमिंतांग शासन के विरुद्ध विश्वविद्यालय के विद्यार्थी समय-समय पर अनेक आन्दोलन चलाते रहे। वस्तुतः, चीन का कोई भी प्रमुख आन्दोलन ऐसा नहीं है जिसमें पीकिंग विश्वविद्यालय के अध्यापकों और छात्रों ने भाग न लिया हो।

इस विश्वविद्यालय के अध्यापक और छात्र आज भी अपनी पुरानी परम्परा को क़ायम रखे हुए हैं। जून सन् १९५२ में सानफ़ान् आन्दोलन समाप्त होते ही, वे शिक्षा सम्बंधी योजनाओं के संगठन में लग गये। विचारणीय विषय यह था कि विद्यार्थियों को किस प्रकार योजनापूर्वक शिक्षा दी जाय, जिससे वे अल्पकाल में योग्य होकर राष्ट्र-निर्माण के कार्य में हाथ बंटा सकें। दूसरे, पीकिंग के विश्वविद्यालयों में एक ही तरह के कोर्स पढ़ाये जाते थे, चाहे विद्यार्थियों की संख्या कितनी ही कम क्यों न हो। बहुत वाद-विवाद के पश्चात्, निश्चय किया गया कि छिंग ह्वा, येन चिंग, फुरन और इफ़ान् विश्वविद्यालयों के आर्ट्स और साइंस विभागों को पीकिंग विश्वविद्यालय में सम्मिलित कर दिया जाय। पीकिंग विश्वविद्यालय को नगर के बाहर येन चिंग में ले जाने के लिये, विश्वविद्यालयों के अध्यापकों की सभा आयोजित की गई। सोवियत संघ के ३५ वर्षों के अनुभवी एक प्रोफेसर ने मास्को विश्वविद्यालय की कार्य-प्रणाली के सम्बंध में रिपोर्ट पढ़ी। तत्पश्चात् भूगर्भ शास्त्र, गणित और इतिहास आदि के प्रोफेसरों के भाषण हुए। सभा का कार्यक्रम सुबह नौ बजे से साढ़े बारह बजे तक और दोपहर के ढाई बजे से छ बजे तक चलता रहा। इतनी बैठक के बाद भी, अध्यापकों की मुखचेष्टा आदि से किसी प्रकार की थकान या रसहीनता का भाव अभिव्यक्त नहीं होता था और सब लोग राष्ट्रीय गीत गाते हुए हंसी-ख़ुशी के साथ वापिस लौट रहे थे! वास्तव में, पिछले आठ महीनों से विश्वविद्यालय के अध्यापक और छात्र दोनों ही इतने व्यस्त रहे कि उन्हें शीत ऋतु का अवकाश

भी न मिल सका था, इसलिये सरकारी शिक्षा-विभाग को आदेश जारी करना पड़ा, जिसमें अध्यापकों और छात्रों को कुछ समय के लिये विश्राम करने को कहा गया।

४ अक्तूबर, १९५२ को पीकिंग विश्वविद्यालय को येन चिंग विश्वविद्यालय के साथ सम्मिलित करने का समारोह मनाया गया। पटाखों की आवाज़ सुनाई पड़ने लगी और विविध वर्णों के गुब्बारे आकाश में उड़ते हुए दिखाई देने लगे। शिक्षा-विभाग से सम्बंध रखने वाले अनेक व्यक्तियों के भाषण हुए। रात्रि के समय, चैकोस्लोवाकिया के कलाकारों के नृत्य और गायन का कार्यक्रम रखा गया, जिसमें कीटाणु-युद्ध आदि नृत्यों का प्रदर्शन हुआ।

नये पीकिंग विश्वविद्यालय में आजकल ५,२०० विद्यार्थी पढ़ते हैं। भोजनालय के विशाल भवन में एक साथ २,५०० से अधिक विद्यार्थी भोजन कर सकते हैं। इतिहास, अर्थशास्त्र, विज्ञान, पौर्वात्य और पाश्चिमात्य भाषाओं आदि की यहां शिक्षा दी जाती है। सब मिलाकर लगभग ५०० अध्यापक हैं, जिनमें प्रोफेसर, सहायक प्रोफेसर, लेक्चरार और सहायक टीचर सम्मिलित हैं। पौर्वात्य भाषा और साहित्य-विभाग में अरबी, इण्डोनेशिया, कोरियाई, जापानी, बर्मी, मंगोल, वीतनामी, स्यामी और हिन्दी भाषायें पढ़ाई जाती हैं। हिन्दी-विभाग में इस समय लगभग ४० विद्यार्थी हैं। गत वर्ष एक विद्यार्थी ग्रेजुएट हुआ है। चार चीनी अध्यापक हिन्दी पढ़ाते हैं। प्रोफेसर चिन् ख मु हिन्दी-विभाग के अध्यक्ष हैं। आप कई वर्षों भारत में रहे हैं तथा स्वर्गीय धर्मानन्द कोसाम्बी के पास रह कर आपने संस्कृत का अध्ययन किया है।

पीकिंग विश्वविद्यालय के प्रेसीडेण्ट मा यिन् छू कहने को ७२ वर्ष के हैं, किन्तु देखने में ५०–५५ से अधिक मालूम नहीं होते। विद्यार्थियों की हर सभा में आप उपस्थित रहते हैं। अत्यन्त हंसमुख, मिलनसार और सरल प्रकृति के हैं। अपने भाषण में आपने एक बार कह दिया था कि नौकरशाह पूँजीपतियों की सम्पत्ति जब्त कर लेनी चाहिये, बस क्वो मिंतांग की सरकार ने आपको दो वर्षों के लिये कन्सण्ट्रेशन कैम्प में डाल दिया था। आप चीन के प्रसिद्ध अर्थशास्त्री माने जाते हैं और बहुत समय तक पीकिंग विश्वविद्यालय में अर्थशास्त्र के अध्यापक रह चुके हैं। आप अभी भी चौदह–चौदह घंटे काम करते हैं और इस उम्र में भी दो घंटे रोज़ रूसी भाषा

सीखते हैं। बर्लिन, पीकिंग और वियना की शान्ति-परिषदों में आपने विशेष रूप से भाग लिया था। पौर्वात्य भाषा और साहित्य-विभाग के प्रमुख डॉ. चि श्येन् लिन् कई भाषाओं के विद्वान् हैं। आप सन् १९५२ में भारत में आने वाले चीनी सांस्कृतिक प्रतिनिधि-मण्डल के एक मुख्य सदस्य थे और गत युद्ध काल में जर्मनी में अध्यापक रह चुके हैं। भारत और चीन के पुराने सम्बंधों पर आप एक पुस्तक लिख रहे हैं।

येन चिंग विश्वविद्यालय की स्थापना सन् १९१९ में हुई थी। ३२ वर्षों तक यह विश्वविद्यालय अमरीकनों के द्रव्य से चलता रहा। अमरीका के हजारों प्राइवेट व्यक्तियों ने भी चीन के साथ मित्रतापूर्ण सम्बंध स्थापित करने के लिये इसमें रुपया दिया था, किन्तु इसका उपयोग चीन पर अमरीकी साम्राज्यवाद का सिक्का जमाने के लिये ही किया गया। इस विश्वविद्यालय पर अमरीकियों का ही पूर्णतया अधिकार रहा और उसकी व्यवस्था आदि में भी चीनी अध्यापकों का कोई स्थान नहीं रखा गया। येन चिंग की भांति, छिंग ह्वा विश्वविद्यालय भी पहले विदेशियों के अधिकार में था। छिंग ह्वा के भाषा और साहित्य-विभाग को पीकिंग विश्वविद्यालय में तथा पीकिंग और येन चिंग विश्वविद्यालयों के इंजीनियरिंग विभागों को छिंग ह्वा में मिला दिया गया है। आजकल इस विश्वविद्यालय में केवल इंजीनियरिंग का कोर्स पढ़ाया जाता है, जिसमें सिविल, मैकेनिकल, हाइड्रोलिक, रेडियो, पेट्रोलियम, और शिल्पकला शामिल हैं। आजकल यहां ६,००० विद्यार्थी शिक्षा पाते हैं। सबके लिये मुफ्त भोजन आदि की व्यवस्था है। मनोरंजन के लिये विद्यार्थियों के क्लब हैं, जिनमें सिनेमा आदि मुफ्त दिखाये जाते हैं। जनता विश्वविद्यालय (पीपुल्स युनिवर्सिटी) चीन की एक अन्य महत्वपूर्ण संस्था है, जिसमें खास तौर से मजदूर और किसानों के विद्यार्थियों की शिक्षा का प्रबंध है। राष्ट्र-निर्माण में विशेष रूप से सहायता करने के लिये, यहाँ सरकारी केडर (कार्यकर्त्ता) तैयार किये जाते हैं। सन् १९५१-५२ में, इस विद्यालय में २,६०० केडरों ने शिक्षा प्राप्त की थी। आजकल यहाँ ७,००० विद्यार्थी शिक्षा पाते हैं।

पीकिंग में और भी विश्वविद्यालय हैं जिनमें उद्योग, राजनीति, कृषि, डाक्टरी, कला आदि की शिक्षा दी जाती है। इंजीनियरिंग और ट्रेनिंग कालेजों में आजकल काफी वृद्धि की जा रही है। अनुसंधानकारी संस्थाओं की ओर भी चीनी सरकार ध्यान दे रही है; उदाहरण के लिये, एकेडमिआ सिनिका के नीचे

३२ संस्थायें काम कर रही हैं; जिनमें प्राकृतिक विज्ञान, प्राणिशास्त्र, भूविज्ञान, समाजविज्ञान, भाषाविज्ञान, आदि विषयों पर खोजबीन होरही है। इस समय चीन में १३ विश्वविद्यालय और २० टैक्निकल संस्थायें शिक्षण-प्रचार का काम कर रही हैं।

१५ नवम्बर, १९५२ को केन्द्रीय जन-सरकार समिति द्वारा उच्च शिक्षा के लिये एक पृथक् मंत्रिमण्डल स्थापित किया गया है, जो चीन के विश्वविद्यालयों, इंजीनिरिंग कालेज, कृषि, डाक्टरी तथा सेकण्डरी टैक्निकल शिक्षा आदि की व्यवस्था करने के लिये प्रयत्नशील है। आशा है, अब चीन की उच्च शिक्षा में अधिक उन्नति होगी।

पहले चीन के विश्वविद्यालयों का पठन-पाठन पूंजीवादी आदर्शों पर चलता था, जो एक प्रकार से जापान और अमरीका के विश्वविद्यालयों की नक़ल थी। उस समय चीन का इतिहास तोड़-मरोड़ कर विद्यार्थियों को पढ़ाया जाता था। वस्तुतः, विदेशी साम्राज्यवाद और सामंतवादी आदर्श चीन की उन्नति में सदा बाधक रहे हैं, इसलिये साम्राज्यवादी और सामंतवादी पिछड़ी हुई जन-विरोधी मनोवृत्ति में सुधार करना, चीन की आधुनिक शिक्षा का मुख्य प्रयोजन है।

नये चीन के विश्वविद्यालयों में चीनी भाषा द्वारा शिक्षण होता है। उचित पाठ्य पुस्तकों के अभाव में, प्रोफेसरों को अपने नोट्स आदि तैयार करके पढ़ाना होता है। अगले सप्ताह में पढ़ाये जाने वाले विषय की योजना बनाई जाती है। कभी-कभी एक साथ कई विभागों के प्रोफेसरों की सभायें होती हैं, जिनमें सब अपने-अपने अनुभव बताते हैं और तदनुसार शिक्षण-पद्धति में परिवर्तन किया जाता है।

चीन के अध्यापक आजकल अध्ययन-अध्यापन पर अपनी ही सारी शक्ति लगा रहे हैं। विद्यार्थियों को पढ़ाने की योजनायें बनाने और उसके लिये योग्य पाठ्य पुस्तकें तैयार करने में ही उनका सारा समय व्यतीत होता है। पहले के अध्यापक शिक्षा के सम्बंध में इतनी सूक्ष्मता और तत्परता से विचार नहीं करते थे और कक्षा में मनचाहे लैक्चर आदि देकर, अपने काम से छुट्टी पा लेते थे। वे समाज के विषय में अधिक सोच-विचार करने की आवश्यकता

नहीं समझते थे। विद्यार्थियों की भी यही दशा थी। उनका अध्ययन निरुद्देश्य होता था। किसी प्रकार परीक्षायें पास करके, नौकरी प्राप्त करना ही उनका एक मात्र लक्ष्य था। परन्तु, नये चीन के विद्यार्थियों को नियोजित रूप से शिक्षा दी जाती है।

चीनी सरकार अपने अध्यापकों की सुख-सुविधाओं का ध्यान रखती है। उन्हें कम किराये पर मकान मिलते हैं और बीमार पड़ने पर, उनकी मुफ़्त चिकित्सा का प्रबंध है। अध्यापिकाओं को आठ सप्ताहों से अधिक की जच्चा काल की सवैतनिक छुट्टी दी जाती है। सहकारी दुकानों पर अध्यापकों को सब चीज़ें सस्ते दामों में मिलती हैं और ज़रूरत पड़ने पर, ट्रेड यूनियनों की ओर से उन्हें रुपया भी उधार मिल सकता है। समय-समय पर अध्यापकों के वेतन में वृद्धि होती रहती है। १ दिसम्बर, १९५२ को दूसरी बार उनका वेतन बढ़ा है, जिसके अनुसार प्रेसीडेण्ट को लगभग ५००, प्रोफेसर को ३५०-४००, लैक्चरार को २०० और असिस्टेण्ट टीचर को १०० रुपये मिलते हैं। सरकार की राजनीतिक सलाह-मशविरा देनेवाली परिषद में, अध्यापकों के प्रतिनिधि रहते हैं। निस्सन्देह नये चीन का अध्यापक सबसे अधिक सम्मानित प्राणी है, इसलिये राष्ट्र-निर्माण के कार्य में स्वेच्छापूर्वक अपना अधिक से अधिक समय व्यतीत करने में उसे आत्म-गौरव का अनुभव होता है।

पीकिंग के दो स्कूल

चीन में प्राइमरी शिक्षा सबके लिये अनिवार्य है। मजदूरों-किसानों को उनके अतिरिक्त समय में शिक्षा दी जाती है और मिडिल स्कूलों में उनकी सेकंडरी शिक्षा का प्रबंध है। इसके अलावा, आधुनिक शिक्षण-संस्थाओं में उनके बालकों की शिक्षा का विशेष ध्यान रखा जाता है। मुक्ति से पूर्व, चीन की ८५% जनता अशिक्षित थी और ४०% से भी कम बालकों को शिक्षा प्राप्त करने की सुविधायें थीं। परन्तु, आजकल शिक्षा में अधिकाधिक उन्नति होरही है। १ सितम्बर, १९५२ को प्राइमरी स्कूलों में ४ करोड़ १० लाख, सेकंडरी स्कूलों में ३० लाख ७० हजार और कालेजों में २ लाख १९ हजार विद्यार्थियों को स्थान दिया गया था, जिनमें प्राइमरी स्कूलों में मजदूर किसानों के बालकों की संख्या ८०% सेकंडरी स्कूलों में ६०% और कालेजों में २०% थी।

पीकिंग का प्राइमरी स्कूल एक बहुत बड़ा स्कूल है। इसमें १,१६८ विद्यार्थी, ५३ अध्यापक और २५ कक्षायें हैं। स्कूल में पुस्तकालय, प्रयोगशाला और एक स्वास्थ्य-घर है। पहले यहां ६ वर्षों का कोर्स था, लेकिन अब ५ वर्षों का कर दिया गया है। स्कूल में दो विभाग हैं—एक शिक्षा सम्बंधी और दूसरा व्यवस्था सम्बंधी। व्यवस्था-विभाग विद्यार्थी और अध्यापकों के पठन-पाठन और उनकी साधारण उन्नति की देख-रेख करता है। स्कूल की रिसर्च संस्था पठन-पाठन के तरीकों का अध्ययन कर, विद्यार्थी और अध्यापकों का मार्ग-दर्शन करती है।

स्कूल के अधिकांश [illegible]ार्थी मजदूरों और किसानों के कुटुम्ब के हैं और वे बहुत परिश्रम से पढ़ते हैं पहले जमाने में प्रत्येक कक्षा में हर साल बहुत

से विद्यार्थी फेल होते थे, परन्तु आजकल विद्यार्थी प्रायः बहुत कम फेल होते हैं; जो बीमारी अथवा पारिवारिक परिस्थिति के कारण फेल हो भी जाते हैं तो उनको फिर से परीक्षा में बैठने का अवसर दिया जाता है। गत वर्ष सारे स्कूल में कुल दो विद्यार्थी ऐसे थे, जिन्हें फेल होजाने के कारण उसी कक्षा में रहना पड़ा। चीन के अध्यापकों का विश्वास है कि कोई विद्यार्थी जड़बुद्धि नहीं होता। अध्यापक के प्रयत्नों द्वारा उसकी अध्ययन और विचार-शक्ति को विकसित किया जा सकता है। यदि अध्यापक को विद्यार्थी की ओर उचित ध्यान देने का अवसर प्रदान किया जाय तो निश्चय ही विद्यार्थी प्रगति कर सकता है। सम्भव है, आरंभ में कुछ कठिनाई हो। पहले स्कूल के लगभग आधे विद्यार्थियों का स्वास्थ अच्छा नहीं रहता था, परन्तु अब यह बात नहीं है। गत वर्ष सारे स्कूल में कुल ७५ विद्यार्थी बीमारी के कारण गैरहाज़िर रहे।

स्कूल के प्रिंसिपल वांग एक उत्साही नवयुवक व्यक्ति हैं। आप जिस प्रवाहबद्ध भाषा में तन्मयता के साथ मेरे प्रश्नों का उत्तर देते जारहे थे, उसे देख कर किसी भी शिक्षक को गर्व का अनुभव होना स्वाभाविक है। आपने बताया कि अध्यापक की मनोवृत्ति, उसकी कर्तव्य भावना, उसका उत्तरदायित्व तथा अध्यापन कार्य में उसकी दिलचस्पी—ये सभी बातें अध्यापन के स्तर को उन्नत करती हैं। अध्यापक का ज्ञान विशाल होना चाहिये; उसे अपने विषय का और विद्यार्थियों की कठिनाइयों का भली भाति ज्ञान होना आवश्यक है। यदि विद्यार्थी को ठीक भोजन मिलता है, काम करने बाद आराम मिलता है और उसका पारिवारिक जीवन सुखी है तभी वह स्वस्थ रह सकता है और तभी उसकी पढ़ाई में उन्नति हो सकती है।

प्रिंसिपल वांग ने शिक्षकों की कर्तव्य भावना पर ज़ोर देते हुए, बताया कि शिक्षकों के निश्चिंत जीवन-यापन से उनकी मनोवृत्ति में परिवर्तन हो सकता है। पहले रिक्शा, प्राइमरी स्कूल के अध्यापक तथा नमक—ये तीन वस्तुयें पीकिंग में सबसे सस्ती समझी जाती थीं, परन्तु अब चीन के अध्यापकों की सामाजिक प्रतिष्ठा बढ़ गई है। उदाहरण के लिये, उनके स्कूल की डीन कुमारी चेन (छन्) पीकिंग की सरकारी संस्था की सदस्या हैं और उनके स्कूल के वाइस प्रिंसिपल को वियना में होनेवाली ट्रेड यूनियन परिषद में सम्मिलित होने का मौक़ा दिया गया है। इसके अतिरिक्त, नये चीन के अध्यापक आर्थिक चिन्ता से मुक्त होगये हैं और जो कुछ वे कमाते हैं वह उनके लिये पर्याप्त है। यदि किसी

अध्यापक को बड़े कुटुम्ब का पालन-पोषण करना पड़ता हो या उसे अन्य किसी प्रकार की आर्थिक कठिनाई हो तो अध्यापकों की ट्रेड यूनियनें उसकी सहायता करती हैं। अध्यापकों के बच्चों के लिये स्कूल में ही नर्सरी का प्रबन्ध है। बीमार पड़ने पर वे सरकारी खर्चे पर अस्पताल में भरती हो सकते हैं। इसके अतिरिक्त, गर्मी की छुट्टी में अध्यापकों को विश्राम करने के लिये बाहर भेजने की भी व्यवस्था की जाती है। इन सब कारणों से आधुनिक चीन के अध्यापक को इस बात का पूर भरोसा होगया है कि अब उसे कभी बेकारी की चक्की में नहीं पिसना पड़ेगा।

अध्यापकों के सामाजिक और आर्थिक स्तरों में उन्नति होने से, उनकी क्रियाशीलता और कर्त्तव्य-परायणता में भी वृद्धि होगई है। इसलिये, अब अध्यापक परिश्रमपूर्वक विद्यार्थियों को शिक्षा देते हैं, व्यवस्थित ढंग से पढ़ाते हैं और इस योजना में कमजोर विद्यार्थियों का विशेष रूप से ध्यान रखा जाता है। परन्तु, कभी ऐसा भी संभव है कि अध्यापक के परिश्रमशील होने पर भी, पाठन-पद्धति का ठीक परिज्ञान न होने के कारण अध्यापक को सफलता न मिले। इस कठिनाई को दूर करने के लिये स्कूल के अधिकारी अध्यापक की पाठन-पद्धति की आलोचना और उसके साथ वाद-विवाद कर तथा उसे हर प्रकार से उत्साहित कर उसके अध्यापन कार्य में मदद करते हैं। यदि अध्यापक किसी नई पाठन-पद्धति का आविष्कार करता है, तो उस पद्धति को अन्य अध्यापक भी अपनाते हैं। शिक्षण-पद्धति में बालकों के माता-पिताओं का सहयोग भी प्राप्त किया जाता है और उनकी आलोचनाओं से यथेष्ट लाभ उठाने के लिये, उनके भाषण आदि कराये जाते हैं। इसके सिवाय, पुस्तकालय, प्रयोगशाला, रेडियो, मैजिक लालटेन, फिल्म आदि शिक्षा सम्बंधी साधन-सामग्री में वृद्धि करने के लिये सरकार सदा प्रयत्नशील रहती है।

प्रिंसिपल वांग बिना रुके हुये मुझे अध्यापन-पद्धति समझाते चले जा रहे थे और स्कूल की डीन कुमारी चेन हम लोगों का वार्तालाप सुन रही थीं। मैंने उनसे अनुरोध किया कि मैं कुछ उनकी जुबानी भी सुनना चाहूंगा। कुमारी चेन ने धीरे-धीरे अपनी कहानी आरम्भ की : "मैं ३५ वर्षों से अध्यापन का कार्य कर रही हूं। अपनी नौकरी के बारे में पहले मैं बहुत चिन्तित रहा करती थी; एक बार नौकरी छूट जाने पर फिर से मिलना मुश्किल था। समाज शिक्षकों को अवहेलना की दृष्टि से देखता था।

इसलिये, अध्यापन-कार्य में मुझे विशेष रुचि नहीं रह गई थी और मैं हीन भावना से पीड़ित रहा करती थी। मैं जब स्कूल के विद्यार्थियों के साथ बाहर घूमने-फिरने जाती तो मुझे सड़क पर चलने में बड़ी लज्जा मालूम होती थी। जापानी आक्रमण होने पर, देश की हालत और ख़राब हो गई। मुद्रा-स्फीत के कारण, वस्तुओं के दाम में वृद्धि होगई। इसलिये जो तनख़्वाह मिलती, वह सुबह के नाश्ते के लिये भी काफ़ी नहीं थी। बाज़ार में जो अनाज मिलता, उसमें कंकड़ वग़ैरह मिले रहते थे। इसलिये, हम लोगों को अच्छा खाना नहीं मिलता था। आमदनी बढ़ाने के लिये ट्यूशन वग़ैरह करके भी पूरा नहीं पड़ता था। हम लोगों की दशा अत्यंत ख़राब थी। जो नगर ज़ापानियों के अधिकार में चला जाता, उसका विजयोत्सव मनाने के लिये अध्यापक और विद्यार्थियों को बाध्य किया जाता था। हम लोग सोचा करते कि अवश्य ही एक दिन आक्रमणकारियों की पराजय होगी। सौभाग्य से अगस्त सन् १९४५ को जब जनता विजयी हुई तो हमारी खुशी का ठिकाना न था। किन्तु, जब हमने देखा कि क्वो मिंतांग सरकार प्रगतिशील अध्यापकों का दमन करने पर तुली हुई है, हमें बहुत निराशा हुई। मुद्रास्फीत फिर से आरंभ होगया। इस समय पर्याप्त भोजन न मिलने के कारण, मैं बीमार होगई और एक महीने तक खाट से न उठ सकी। उस समय स्कूल में नौकरी करते हुए मुझे ३० वर्ष होगये थे, किन्तु स्कूल का प्रिन्सिपल हृदय-हीन था। उसने अपने आदमी को भेजकर कहलवाया कि यदि मुझे नौकरी करना है तो शीघ्र ही काम पर आजाना चाहिये, नहीं तो मुझे स्कूल से पृथक् कर दिया जायेगा। मुझे बड़ी निराशा हुई, क्योंकि मैं बीमारी के कारण छुट्टी पर थी और अभी स्कूल जाने लायक स्वास्थ लाभ नहीं कर सकी थी। परन्तु, कोई चारा न था इसलिये अस्वस्थ दशा में ही मैंने स्कूल जाने का निश्चय, किया। मैं इतनी कमज़ोर होगई थी कि अच्छी तरह चल भी नहीं सकती थी। इस समय मेरे विद्यार्थियों ने आकर मुझे सम्भाला। मैं अपने उद्वेग को नहीं रोक सकी और मेरी आंखों से टपटप आंसू गिरने लगे। मैंने अनुभव किया कि यह समाज बड़ा निर्दयी है और सहानुभूति का एक कण भी इसमें विद्यमान नहीं है। केवल विद्यार्थियों का उत्साह ही मुझे ढांढस बंधाता था। इसके बाद, हमारे दिन बदले। चीनी जनता शोषण से मुक्त हुई। जर्जरित समाज धराशायी होगया और उसके स्थान पर पल्लवित हुआ नया समाज। आज चीन के

अध्यापक जनता के द्वारा सम्मानित किये जाते हैं और वे जनता के अध्यापक कहे जाते हैं। सन् १९४९ में स्कूल-दिवस के समारोह पर सरकार की ओर से उन अध्यापकों को तमगे दिये गये, जिन्होंने ३० वर्षों से अधिक समय तक नौकरी की थी। मुझे भी यह पुरस्कार मिला और मुझे अध्यापकों की ट्रेड यूनियन का सदस्य बना लिया गया। तीन वर्षों से मैं पीकिंग सरकारी संस्था की भी सदस्या हूं। मैं अपने हृदय में महान् गौरव का अनुभव करती हूं। ५६ वर्षों की होने पर भी, मैं क्रियाशील हूं; अपने कर्त्तव्य का जिम्मेदारी से पालन करती हूं, परिश्रमपूर्वक अध्ययन और अध्यापन करती हूं, फिर भी कभी बीमार नहीं पड़ती। मेरे इस आत्मगौरव के मुख्य कारण हैं—अध्यक्ष माओ त्से तुंग और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी, जिनके मार्ग-दर्शन से चीनी जनता को यह सुख-सौभाग्य प्राप्त हुआ है।"

पीकिंग के मिडिल स्कूल की स्थापना सन् १९०१ में हुई थी। इस स्कूल के तीन विभाग हैं। तीनों में सब मिलाकर २,५८० विद्यार्थी और २०८ अध्यापक हैं। इसमें छ वर्षों का कोर्स है—तीन वर्ष जूनियर और तीन वर्ष सीनियर। पहले यहां प्रायः धनिकों के बालक ही शिक्षा पाते थे, लेकिन अब ५०% विद्यार्थी मज़दूरों और किसानों के घरों के हैं। परीक्षा में बहुत कम विद्यार्थी फेल होते हैं। परीक्षा के समय परीक्षा-भवन में किसी निरीक्षक का रहना आवश्यक नहीं है। विद्यार्थी अब यह भली भांति समझने लगे हैं कि यदि वे परिश्रमपूर्वक अध्ययन करेंगे, तो आगे चलकर वे अपने राष्ट्र का निर्माण कर सकेंगे। विद्यार्थियों से कोई फ़ीस नहीं ली जाती। पहले स्कूल मे केवल लड़के ही पढ़ते थे, लेकिन अब लड़कियां भी काफ़ी संख्या में पढ़ रही हैं। अध्यापकों को १२० रुपये से लगा कर लगभग २०० रुपये तक माहवार तनख़्वाह मिलती है। आवश्यकता होनेपर, उनकी तनख़्वाह पेशगी भी मिल सकती है तथा अन्य प्रकरा से भी उनकी सहायता की जाती है।

स्कूल के प्रिंसिपल वू बड़े मिलनसार और सहृदय व्यक्ति हैं। कुमारी माओ मुक्ति के पहले से ही इस स्कूल में अध्यापिका हैं। अध्यापकों की वर्तमान परिस्थिति सम्बंधी मेरे प्रश्न का उत्तर देते हुए, आपने निम्न बातें बताईं:

पहले, अध्यापक प्रायः स्वार्थ साधन के लिये ही पढ़ाते थे। जनता के प्रति उत्तरदायित्व की भावना उनमें नहीं थी।

स्कूल और विद्यार्थियों के साथ अध्यापकों के सम्बंध विभिन्न प्रकार के थे। वे केवल विद्यार्थियों से सम्मान पाने की इच्छा रखते थे। इसकी चिन्ता उन्हें नहीं थी कि जो कुछ भी वे विद्यार्थियों को पढ़ा रहे हैं वह उनके और उनके देश के हित की दृष्टि से उपयोगी है या नहीं। आजकल शिक्षा देते समय, प्रत्येक अध्यापक सोचता है कि जो कुछ कक्षाओं में पढ़ाया जाता है वह व्यवहार में लाया जा सकता है या नहीं। विद्यार्थी भी इस बात का पूर्ण प्रयत्न करते हैं कि जो कक्षा में पढ़ाया जाता है उसे वे अच्छी तरह समझें।

पहले, अध्यापक होशियार लड़कों की ओर ही अधिक ध्यान देते थे, कमज़ोरों की ओर नहीं। किन्तु, अब वे समझने लगे हैं कि राष्ट्र-निर्माण के लिये प्रत्येक विद्यार्थी को शिक्षित बनाना उनका कर्त्तव्य है। उन्होंने इस बात को अनुभव से समझ लिया है कि प्रत्येक विद्यार्थी को सुशिक्षित बनाया जा सकता है।

मैं दस वर्षों से इस स्कूल में भौतिक विज्ञान पढ़ाती हूँ। पहले मेरी हालत ख़राब थी। अपने भविष्य का मुझे कुछ भी निश्चय नहीं था। समाज के अधिकांश व्यक्ति अध्यापकों को अवहेलना की दृष्टि से देखते थे। जब विद्यार्थी मुझसे सलाह लेते कि हम लोग आगे जाकर क्या करें, तो मुझे बड़ी निराशा होती। मैं उनका मार्ग-दर्शन नहीं कर सकती थी, क्योंकि चीनी नवयुवकों का भविष्य उस समय अंधकारमय था।

मुक्ति के पश्चात, मैंने अपने कर्त्तव्यों को भली भांति समझा है। मैं जानती हूँ कि अब हम लोगों को अपने देश के निर्माण के लिये बहुत काम करना है। अब सरकार और जनता में हम आदर के पात्र हैं। विद्यार्थी अत्यंत परिश्रमपूर्वक अध्ययन करते हैं। चीनी युवक अपने उज्ज्वल भविष्य के प्रति आशावान हैं, इससे हम लोगों को प्रेरणा मिलती है।

चीनी भाषा

चीनी भाषा संसार की प्राचीनतम भाषाओं में गिनी जाती है। संसार की अनेक आदिम जातियाँ अपने देवों और पितरों को प्रसन्न करने के लिये उनकी प्रार्थना आदि किया करती थीं तथा विविध प्रकार के नादों द्वारा अपनी प्रार्थना को उनके पास तक पहुचाने की चेष्टा करती थीं। परन्तु संभवतः, चीन के लोगों ने अनुभव किया कि देवों और पितरों के मर्त्यलोकवासियों की भाषा से अनभिज्ञ होने के कारण, उनके साथ इस प्रकार प्रत्यक्ष सम्बंध स्थापित नहीं किया जा सकता। अतएव, उन्होंने उनसे लिख कर बातचीत करने का तरीक़ा निकाला। आजकल भी चीन में किसी जलने वाली वस्तु पर अपना संदेश लिखकर उसे पितरों के समक्ष जलाने का रिवाज है। चीनवासियों का विश्वास है कि आग के धुंये के द्वारा उनका संदेश पितरों तक पहुंच जाता है।

शांग कालीन (१५२३–१०२७ ई. पू.) कछुए की अस्थियों पर चीनी भाषा के जो लेख उपलब्ध हुए हैं, उनसे ज्ञात होता है कि आज से लगभग ३,००० वर्षों पूर्व भी चीनी लोग लिखने की कला से परिचित थे। कांसे के बरतनों पर भी इसी प्रकार के अनेक लेख मिले हैं। ईसा के पूर्व तीसरी-चौथी शताब्दी में, बांस की पट्टियों पर लेख लिखे जाने लगे थे। ये पट्टियां ७/१६ से लेकर ५/६ इंच चौड़ी और ९ इंच तक लम्बी होती थीं। इन पट्टियों पर अनेक प्रकार की भविष्यवाणियाँ लिख कर, उन्हें जोर से हिलाया जाता और जो पट्टी नीचे गिर पड़ती थी, उस पर लिखे हुए उत्तरों द्वारा प्रश्नकर्त्ता के भाग्य का निर्णय किया जाता था। एक पट्टी पर एक पंक्ति में लगभग २०–३० चीनी शब्द लिखे जा सकते थे। पट्टियों को रेशम या चमड़े की डोरियों से एक साथ बांध कर रखा जाता था। सन् २८१ में रखी गई, इस प्रकार की अनेक वंश-पट्टियाँ प्राचीन कब्रों से खोद कर निकाली गई हैं। कहा जाता है कि किसी चीनी दार्शनिक को एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाते समय, अपने पढ़ने-लिखने के

लिये तीन गाड़ियाँ 'बांस की पुस्तकें' ले जाना पड़ती थीं! किसी नुकीली लकड़ी या कांसे की कलम से लाख की स्याही द्वारा इन पर लिखा जाता था। बाद में, बालों के बने हुये ब्रुश और स्याही का आविष्कार होजाने से, रेशम पर लिखना शुरू होगया। किन्तु, रेशम की क़ीमत ज़्यादा होने से ईसवी सन् की दूसरी शताब्दी में काग़ज़ का आविष्कार होने तक लोग बांस, वृक्ष की छाल और सन आदि को लिखने के काम में लेते रहे थे।

चीनी लिपि चित्रलिपि है। इससे इसकी प्राचीनता ही प्रमाणित होती है। *सूर्य (१), चन्द्र (२), पर्वत (३), मुख (४), चावल (५), द्वार (६) आदि अक्षरों को लिखने के लिये, आजकल भी चीनी भाषा में इन अक्षरों के चित्र बनाये जाते हैं। आगे चलकर, जब लिपि का विकास हुआ, तो एक अक्षर के लिये दो चित्र बनाये जाने लगे। उदाहरण के लिये, 'अच्छा' लिखने के लिये स्त्री और पुत्र का चित्र (७), 'शान्ति' के लिये घर में बैठी हुई स्त्री का चित्र, 'प्रकाश' के लिये सूर्य और चन्द्रमा का चित्र (८), तथा 'घर' के लिये छत और सूअर का चित्र (९), जिसका अर्थ है वह स्थान जहां छत के नीचे सूअर रहता है—बनाते हैं। निश्चय ही, चीनी चित्रलिपि से मानवी मस्तिष्क के अद्‌भुत चमत्कार का पता लगता है। चीनियों ने इस लिपि को क्रमशः विकसित कर जिस प्रकार पूर्ण किया, वह मानव जाति की एक दिलचस्प कहानी है।

चीनी भाषा एक वर्ण-विशिष्ट (mono-syllabic) भाषा है, अर्थात् उसके एक अक्षर में एक बार उच्चारित किया जाने वाला एक ही वर्ण रहता है तथा इस वर्ण के मूल रूप में परिवर्तन नहीं होता। उदाहरण के लिये लड़का लड़कों, लड़के का, लड़कों का—इन विभिन्न रूपों के लिये, चीनी में एक ही अक्षररूप है—'हाय्‌ च्', उसमें परिवर्तन नहीं होता। पुलिंग, स्त्रीलिंग आदि लिंगभेद तथा भूत, भविष्य और वर्तमान का कालभेद भी वस्तुतः चीनी भाषा में नहीं है। इसलिये, चीनी भाषा का बोलना अपेक्षाकृत कठिन नहीं है। हां, चीनी बोलने में ऊंचे-नीचे स्वरभेद की कठिनाई अवश्य होती है।

---

* १. 日 २. 月 ३. 山 ४. 口 ५. 米 ६. 門 ७. 好 ८. 明 ९. 家

उदाहरण के लिये, पीकिंग की बोली में अनेक अक्षरों का उदात्त, अनुदात्त आदि चार प्रकार से उच्चारण किया जाता है—जैसे 'चू' के * सूअर (१०), बांस (११), मालिक (१२) और रहना (१३)— ये चार अर्थ होते हैं। परन्तु, यदि आप इनका स्वरभेद के साथ ठीक उच्चारण न कर सकें तो अपने अभिप्राय को व्यक्त करना संभव नहीं। उस हालत में, संभव है बांस की जगह आपको कोई सूअर लाकर दे दे। चीनी भाषा की कोई वर्णमाला न होने से, इसका पढ़ना और खासकर लिखना काफ़ी कठिन है। इस भाषा में कई हज़ार अक्षर हैं। सन् १७१६ में प्रकाशित चीनी भाषा के सबसे बड़े कोष में ४० हज़ार अक्षर दिये गये हैं, यद्यपि इनमें से केवल छ-सात हज़ार ही पिछले तीन हज़ार वर्षों से चीनी साहित्य में प्रयुक्त रहे हैं। साधारणतया चीनी के चार हज़ार अक्षरों का ज्ञाता चीनी भाषा का विद्वान समझा जाता है, वैसे दो-तीन हज़ार से भी अच्छी तरह काम चल सकता है, विदेशियों के लिये एक वर्ष में दो हज़ार चीनी अक्षर सीख लेना बहुत कठिन नहीं है, बशर्ते धीरज से काम लिया जाय।

जैसे-जैसे भाषा का विकास हुआ, चीनी लिखने और बोलने के सम्बंध में अनेक कठिनाइयां उपस्थित हुईं। छिन् राजाओं के काल में (२५६-२०७ ई. पू.) समस्त चीन की भाषा का एकीकरण करने का प्रयत्न किया गया और भिन्न-भिन्न स्थानों में विभिन्न रूप से लिखी और बोली जाने वाली भाषा के लिखने और बोलने के तरीक़ों का समन्वय करने के लिये, विद्वानों की समिति नियुक्त की गई। ईसवी सन् की दूसरी शताब्दी के बाद, चीन में भारतीय बौद्ध साहित्य का वृहत् परिणाम में प्रवेश होने के कारण, चीनी भाषा के वर्णोच्चारण के प्रामाणिक ज्ञान की और भी आवश्यकता प्रतीत हुई। परन्तु, बौद्ध धर्म सम्बंधी हज़ारों पारिभाषिक शब्दों का चीनी भाषा में अनुवाद करना सम्भव नहीं था। इसलिये, इन शब्दों को चीनियों ने अक्षरान्तरित करना आरंभ किया। इससे मंजुश्री को वन षू, बोधिसत्व को फू सा, अमिताभ को अमि तो. फ़ो, शाक्यमुनि को ष्क्ष्ट च्या मौ नि, स्तूप को था, मल्लिका को मो लि और गंगा को हङ ह नामों से पुकारा जाने लगा। विदेशी नामों का चीनी

---

* १०. 猪 ११. 竹 १२. 生 १३. 住

नामकरण करते समय, आजकल भी यही पद्धति अपनाई जाती है—जैसे सोवियत संघ को सू ल्येन्, अफ्रीका को आफ़िलीचया कहा जाता है।

वास्तव में, चीनी भाषा को लिखने और बोलने के सम्बंध में इतनी कठिनाइयाँ पड़ती रही हैं कि समय-समय पर उन्हें हल करने के अनेक प्रयत्न किये गये हैं। विशेषकर सन् १९१५ के बाद, बोलचाल की भाषा को निश्चित रूप देने के लिये काफ़ी प्रयत्न हुआ है। सन् १९११ में, पेकिंग की चीनी भाषा के उच्चारण को स्टैण्डर्ड मानकर उसे ध्वन्यात्मक रूप देने की कोशिश की गई थी। इस सम्बंध में वाद-विवाद करने के लिये भाषाशास्त्र के अनेक विद्वान बुलाये गये थे। यद्यपि दुर्भाग्य से कई वर्षों तक इन विद्वानों के निर्णय पर कोई अमल नहीं किया गया। चीनी भाषा की दूसरी समस्या थी—साहित्यिक भाषा और बोलचाल की भाषा में पारस्परिक अन्तर। चीन के विद्वान प्राचीन इतिहास और संस्कृति से सम्बंध रखनेवाली साहित्यिक भाषा को प्रधानता देते थे। इसलिये, चीन का साहित्य बोलचाल की भाषा में न लिखा जाकर पण्डितों की भाषा में ही लिखा जाता था। ४ मई, १९१९ के क्रान्तिकारी आन्दोलन के समय साहित्यिक आन्दोलन द्वारा दुरूह क्लासिकल भाषा (वन् येन्) के स्थान पर, बोलचाल की लोकभाषा (पाय् ह्वा) का प्रचार किया गया, जिससे उपन्यास, नाटक, वैज्ञानिक निबंध, अनुवाद, समाचारपत्र आदि हर प्रकार का साहित्य सर्वसाधारण की भाषा में प्रकाशित होने लगा। इस समय उक्त विद्वानों द्वारा निर्धारित चीनी भाषा की ध्वन्यात्मक पद्धति द्वारा प्राइमरी स्कूलों में शिक्षा दी जाने लगी। परन्तु, आगामी ३० वर्षों में शासन करने वाली सरकार ने जनता की शिक्षा की ओर विशेष ध्यान न दिया इसलिये, इस दिशा में अधिक प्रगति न हो सकी।

चीनी भाषा को सरल बनाने के लिये भी लगातार प्रयत्न किये गये। उदाहरण के लिये, सन् १५८८ में ईसाई मिशनरियों ने चीनी को रोमन लिपि में लिखना आरम्भ किया। कतिपय चीनी विद्वानों ने भी सन् १९२१ में रोमन लिपि को ही चलाना चाहा। चीनी भाषा के कुछ उपयोगी अक्षरों द्वारा भी जनता को शिक्षित बनाने की कोशिश की गई। उदाहरण के लिये, १,१०० या १,२०० ख़ास अक्षरों को चुना गया। परन्तु, देखा जाय तो चीनी भाषा की दुरूहता जन साधारण को निरक्षर रखने में इतना अधिक कारण नहीं थी, जितनी कि सामन्तवादी शोषण की तीव्रता। नये चीन की जनता अब इस

शोषण के भार से मुक्त होगई है, इसलिये उसकी निरक्षरता भी बड़े वेग से दूर हो रही है। सन् १९५१ में ही, २० लाख मजदूर और १ करोड़ किसान अतिरिक्त समय में चलने वाले स्कूलों में पढ़ने जाने लगे थे।

कुछ समय पहले, जनमुक्ति सेना के चीनी शिक्षक छी च्येन् ह्वा ने चीन के अशिक्षित मजदूरों, किसानों और सैनिकों को अल्प समय में चीनी सिखाने के लिये एक नई पद्धति का आविष्कार किया है। छी एक दरिद्र किसान के घर पैदा हुए थे। १४ वर्ष की अवस्था में, वे अपने पास के गांव की एक रात्रि-पाठशाला में पढ़ने के लिये जाने लगे, जहां उन्होंने चीनी के ध्वन्यात्मक चिह्नों का अध्ययन किया था। एक मास के अन्दर ही, उन्होंने इतनी उन्नति की कि वे स्कूल की किताबें पढ़ने लगे थे। कुछ सप्ताहों में ही उन्होंने ८,००० आवश्यक अक्षरों का एक कोष तैयार किया। सन् १९४८ में छी जनमुक्ति सेना में भरती होगये और ३७ ध्वन्यात्मक चिह्नों के अनुसार, अपनी टुकड़ी को चीनी की शिक्षा देने लगे। इस पद्धति से उनके पढ़ाये हुए सैनिक केवल १० दिनों में ही शाम का समाचारपत्र पढ़ने योग्य होगये। तत्पश्चात् इस पद्धति को पूर्ण बनाने के लिये, सरकार के शिक्षा-विभाग की ओर से भाषाशास्त्र के विशेषज्ञों की एक परिषद बुलाई गई, जिसमें छी च्येन ह्वा ने अपनी रिपोर्ट पेश की। इस पद्धति को चीनी सरकार ने मान्य कर लिया है और इसके अनुसार, पाठ्य पुस्तकें तथा कोष वग़ैरह तैयार किये जारहे हैं। किसानों की कक्षाओं में इस पद्धति का प्रयोग करने से, पता लगा है कि चीनी सीखने में साधारणतया जितना समय लगता है इस पद्धति द्वारा उसका १० वां या १५ वां हिस्सा ही लगता है। जनमुक्ति सेना की 'चौथी फील्ड आर्मी' के सिपाहियों ने इस पद्धति का अनुकरण करके केवल २ महीनों में २,००० चीनी अक्षर सीख लिये, जबकि पहले इतने अक्षरों में कई वर्ष लग जाते थे। इस पद्धति द्वारा ४ महीनों की शिक्षा के बाद, 'केन्द्रीय उत्तर फ़ौज क्षेत्र' के सिपाही और कमाण्डर साधारण पत्र आदि लिखने और छोटी-मोटी किताबें पढ़ने योग्य होगये हैं।

जिनकी मातृभाषा चीनी नहीं है, ऐसे सोवियत संघ तथा चैकोस्लोवाकिया, पोलैण्ड आदि जनवादी देशों के विद्यार्थियों को भी कम से कम समय में चीनी सिखाने के प्रयोग किये जा रहे हैं। पीकिंग विश्वविद्यालय के अनेक प्रोफ़ेसर इस कार्य में जुटे हुए हैं। परन्तु, इस दिशा में विशेष रूप से प्रयोग किये

जाने की आवश्यकता है। यदि चीनी लिपि को हिन्दी, अंग्रेजी आदि भाषाओं के समान वर्णमाला का रूप दिया जासके तो विदेशियों को चीनी सीखने में सुविधा हो सकेगी। चीन के साक्षरता-प्रचार को भी इससे लाभ होगा। मुक्ति के वाद, आजकल चीनी भाषा का महत्व और अधिक बढ़ गया है; क्योंकि चीनी भाषा का ठीक ज्ञान प्राप्त किये विना नये चीन में होने वाले राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक परिवर्तनों का यथार्थ ज्ञान प्राप्त करना सम्भव नहीं है। चीनी भाषा सीखने के लिये, अधिक से अधिक संख्या में भारतीय विद्यार्थी चीन जाना चाहते हैं। इस सम्बंध में शीघ्र ही कोई योजना कार्यान्वित होनी चाहिये।

चीन की शिक्षण-संस्थाओं में चीनी द्वारा ही सब विषयों की शिक्षा दी जाती है। विदेशियों के लिये चीनी का ज्ञान अनिवार्य है। चीन के शिक्षित लोग अपनी भाषा में वातचीत करने में गौरव समझते हैं। ऐसा करना राष्ट्रीय अनुशासन माना जाता है। अंग्रेजी जानने पर भी, कितनी ही वार चीन के विद्वान अपनी ही भाषा वोलकर दुभाषिये के जरिये विदेशी अतिथियों को अपनी संस्थाओं आदि का परिचय देते हैं।

इसमें सन्देह नहीं कि चीनी लिपि की एकता ने चीन के भाषा सम्बंधी प्रश्न को सुलझाने में काफ़ी सहायता पहुँचाई है। परन्तु, ध्यान रखने की वात है कि चीन में पीकिंग, वू, कैण्टन, हक्का अमॉय-स्वातो, फूचो आदि वोलियां भी प्रचलित हैं। ये वोलियां परस्पर इतनी भिन्न हैं कि पीकिंग के निवासी को कैण्टन की वोली समझना कठिन है। फिर, चीन की अलपसंख्यक जातियों की तिब्बती, मंचू, म्याव्, मंगोल, वीवर, कज़ाक आदि दसियों वोलियां अलग हैं। किन्तु, चीनी सरकार के कार्यक्रम में इन वोलियों के उचित विकास का उल्लेख है जिसके फलस्वरूप, पिछले दिनों इन वोलियों में भी पर्याप्त-साहित्य का प्रकाशन हुआ है। पीकिंग के अल्पसंख्यक जातियों के केन्द्रीय विश्वविद्यालय में विद्यार्थियों को छ महीनों में हान् (चीनी) भाषा सिखा दी जाती है तथा हान् भाषा जानने वाले अध्यापक तथा दुभाषिये केवल ८ महीनों में इन जातियों की वोलियां सीख जाते हैं। भाषा सम्बंधी प्रश्न को हल करने के लिये, अन्य प्रयोग भी इस विश्वविद्यालय में किये जा रहे हैं।

आधुनिक चीनी साहित्य

चीन का प्राचीन साहित्य 'पाँच क्लासिकल' के रूप में उपलब्ध होता है, जिसके प्राचीनतम भाग का काल लगभग ईसा के पूर्व १५ वीं शताब्दी माना जाता है। इस साहित्य में लोकगीत, इतिहास, ज्योतिष, रीति-रिवाज तथा कनफ्यूशियस (५५२-४७९ ई. पू.) द्वारा संग्रहीत तत्कालीन इतिहास शामिल है, जो छिन् राजवंशों के पूर्व का एकमात्र ऐतिहासिक संग्रह गिना जाता है।

प्राचीन चीनी साहित्य काव्य-लालित्य की दृष्टि से प्रसिद्ध है। छ्यु य्वान् (३४०-२७८ ई. पू.) चीन के सर्वप्रथम कवि थे, जिन्होंने 'शोक' (ली साव्) नाम की प्रसिद्ध कविता की रचना की थी। छ्यु य्वान् छु राज्य के एक देशभक्त मंत्री थे। परन्तु अन्य मंत्रियों के षड्यंत्र के कारण, उन्हें मंत्रिपद से पृथक कर दिया गया था। इस बीच में छिन् राज्य के सेनापति ने छु राज्य पर आक्रमण कर उसे ध्वस्त कर दिया, जिससे शोकग्रस्त हो कवि ने 'शोक' नामक कविता लिखी और निराश होकर मि-लो (हूनान प्रान्त) नदी में डूब कर प्राण त्याग दिये थे। इस दिवस की स्मृति में चीन भर में चीनी पांचवें महीने के पांचवें दिन नाग-नाव नामक त्यौहार मनाया जाता है, जिसका मतलब है कि चीन में जहाँ-जहाँ नदियाँ हैं वहां कवि के शरीर की खोज

में नावें चक्कर लगाती हैं। उस दिन चीन में चावलों का एक विशेष खाद्य बनाकर, उसे नदी-नालों के नागों को खिलाया जाता है, जिससे नदी-नालों के जन्तु जनता के प्रिय कवि के शरीर का भक्षण न करलें।

चीन के प्रसिद्ध साहित्यकार को मो जो ने इस कवि पर एक नाटक लिखा है, जिसका अंग्रेज़ी अनुवाद अभी हाल ही में विदेशी भाषा प्रेस, पीकिंग से प्रकाशित हुआ है। इसी संस्था ने कवि की ली साव् आदि कविताओं का अंग्रेज़ी अनुवाद भी प्रकाशित किया है।

थांग राजवंशों के काल (६००-९०० ई.) में काव्य की विशेष उन्नति हुई। लि पो तू फू और पो छू यि इस काल के प्रसिद्ध कवि हुये हैं। तू फू कुछ समय के लिये येनान (येन् आन्) में रहे थे; यहां उनका एक स्मारक बना हुआ है। तू फू ने युद्ध-विरोधी सुन्दर कवितायें लिखी हैं। सन् १७०७ में इस काल की ४८,९०० कविताओं का संग्रह तीस भागों में प्रकाशित हुआ है। किसी भाव विशेष का विस्तार से वर्णन न कर, उसकी ओर इंगित भर करना यह चीनी काव्यकला की विशेषता है। इन कविताओं में प्राकृतिक सौन्दर्य, प्रेम, विरह, राज-प्रशंसा तथा बौद्ध और ताव् धर्म के गुण दोष आदि का प्ररूपण किया गया है।

मंगोल राजा (१२००-१३६८ ई.) नाटकों के बहुत शौक़ीन थे। इस लिये, इस काल में अनेक नाटक और उपन्यास लिखे गये। मंगोलकालीन उपन्यासों में युद्ध, षड़यंत्र, प्रेम, अन्धविश्वास, यात्रा आदि के वर्णनों की प्रधानता है। सुप्रसिद्ध श्वान् च्वाँग की भारत-यात्रा पर आधारित शी यू चि (पश्चिम की यात्रा) नामक लोकप्रिय उपन्यास इसी काल में लिखा गया था। इस उपन्यास के आधार पर लिखा हुआ नाटक चीन के नाट्य गृहों में खेला जाता है। सान् को चृ येन् यि (तीन राजधानियों की आख्यायिका) नामक युद्ध-प्रधान प्रसिद्ध उपन्यास भी इसी काल की रचना है।

मिंग राजाओं के काल (१३६८-१६४४ ई.) में अनेक उपन्यासों और नाटकों की रचना की गई। शु इ हु (तट) में १०८ पात्र हैं। इसे चीनी क्रांति की प्रतिनिधि रचना माना जाता है। उपन्यास में सामन्तों और ज़मींदारों के विरुद्ध किसानों के विद्रोह का चित्रण है, जिन्होंने अपनी सरकार क़ायम की थी। कतिपय कहानियां भी इस काल में लिखी

गई। चिन् कु छी क्वान् (प्राचीन तथा अर्वाचीन रहस्यमय कहानियां) में ४० कहानियों का संग्रह है, जो योरप की अनेक भाषाओं में अनूदित होचुकी हैं।

मंचु राजवंशों के काल (१६४४-१९०० ई.) में अनेक उपन्यासों और नाटकों आदि की रचना हुई। फू सुंग-लिंग (जन्म १,६२२ ई.) की ल्याव् चाय् चृ यि (विचित्र कहानियां) नामक कहानियां किसी समय चीन में बड़े चाव से पढ़ी जाती थीं। हुंग लौ मंग (लाल भवन का स्वप्न) नामक उपन्यास चीन का एक लोकप्रिय उपन्यास माना जाता है, जो १७ वीं शताब्दी के द्वितीयार्ध में लिखा गया था। इस उपन्यास में तत्कालीन सामाजिक जीवन का सुन्दर चित्रण है। इसमें ४४८ पात्र हैं। यह २४ भागों में ४,००० पृष्ठों में प्रकाशित हुआ है।

ध्यान रखने की बात है कि सन् १९११ में प्रजातंत्र की स्थापना होने के पश्चात भी चीन में प्रगतिशील रचनात्मक साहित्य नहीं के बराबर था। उस समय विदेशों से लौटे हुए विद्यार्थियों को विदेशी पुस्तकों के अनुवादों के के अध्ययन द्वारा ही आत्म-संतोष करना पड़ता था। इस सम्बंध में चीन के प्रसिद्ध लेखक लु शुन ने अपनी मनोव्यथा का निम्नलिखित शब्दों में चित्रण किया है—"जब कभी मैं कोई चीनी पुस्तक पढ़ता तो मुझे बड़ा संताप होता और मुझे ऐसा लगता कि मैं मानवीय अस्तित्व का अंश नहीं हूं। परन्तु, जब कभी मैं कोई विदेशी पुस्तक—भारतीय पुस्तकों को छोड़कर (यहां लेखक का अभिप्राय संभवतः बौद्ध धर्म सम्बंधी साहित्य से है-ज. जैन)—उठाता तो मेरे शरीर में बिजली सी दौड़ जाती और ऐसा लगता कि मैं मानवीय अस्तित्व के सम्पर्क में आगया हूँ और साथ ही मुझे कुछ करने की, क्रियाशील होने की प्रेरणा मिल रही है।"

ऐसे समय में साम्राज्यवाद और सामन्तवाद से सम्बन्ध रखने वाले पुराने रीतिरिवाज, आचार-विचार, अंधविश्वास, भाषा तथा साहित्य आदि के विरुद्ध ४ मई, १९१९ का आन्दोलन आरंभ हुआ।

इन दिनों चीन के प्रसिद्ध लेखक लू शुन डाक्टरी छोड़कर, जनता में जागृति उत्पन्न करने के लिये साहित्य-सेवा में संलग्न होगये थे। लू शुन आधुनिक चीनी साहित्य में मौलिक कहानियों के जन्मदाता माने जाते हैं।

छी पाय् ष्ट

मे लान्

फ़ांग

छ्यु य्वान्
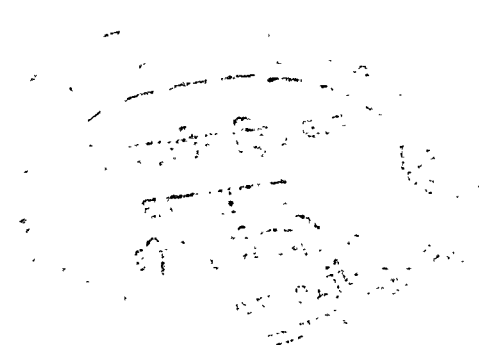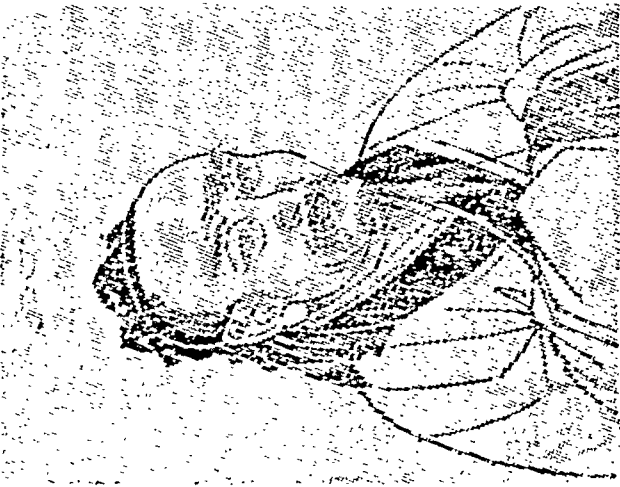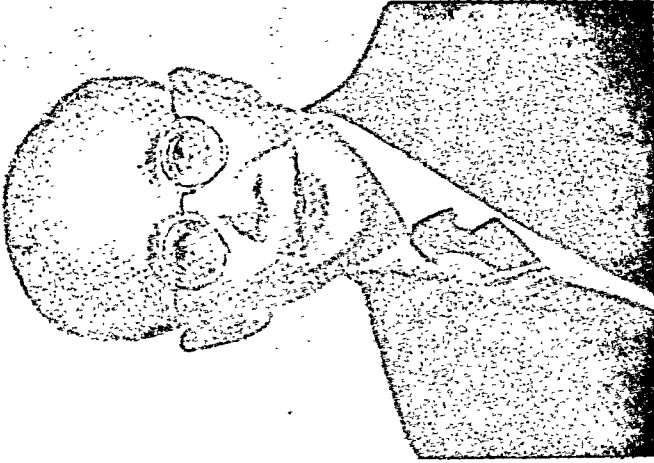
कुओ मो जो

आपने अपनी रचनाओं में कनफ्यूशियस धर्म द्वारा प्रतिपादित पितृभक्ति तथा परिवार-व्यवस्था पर कड़े प्रहार किये हैं। सन् १९१८ में आपकी 'विक्षिप्त की डायरी' नामक सर्वप्रथम कहानी 'नवयुवक' पत्र में प्रकाशित हुई थी, जिसमें कनफ्यूशियस के धर्म को मनुष्यभक्षी धर्म के रूप में चित्रित किया गया था। 'साबुन का टुकड़ा' कहानी में लू शुन ने पितृभक्ति पर तीव्र कटाक्ष किया है। इस कहानी को आपकी श्रेष्ठतम कृतियों में गिना जाता है। 'खुंग यि चि' तथा 'आ क्यू की सच्ची कहानी' नामक कहानियों में चीनी समाज में लाज रखने की घातक मनोवृत्ति पर जबर्दस्त व्यंग है, जो मनोवृत्ति चीनवासियों को पददलित रखने में एक कारण रही है। 'आ क्यू की सच्ची कहानी' के फ्रेंच, अंग्रेजी, रूसी, जर्मन, जापानी आदि भाषाओं में अनुवाद हो चुके हैं। कहा जाता है कि फ्रेंच लेखक रोमाँ रोला इस कहानी को पढ़कर अपने अश्रुओं को न रोक सके थे। लु शुन की रचनाओं में सामंतवादी जुए के भार से आक्रान्त ग्रामीण कृषकों की हृदय-द्रावक दशा का सशक्त वर्णन होने से उनकी रचनायें शीघ्र ही लोकप्रिय होगई।

सन् १९१८ से १९२५ तक लू शुन की २६ कहानियां प्रकाशित हो चुकी थीं। पीकिंग विश्वविद्यालय में विद्यार्थी आन्दोलन के कारण, सन् १९२५ में उन्हें विश्वविद्यालय छोड़कर जाना पड़ा था। कुछ दिन उन्होंने अमोय विश्वविद्यालय और कैण्टन के सनयात सेन विश्वविद्यालय में काम किया था। उसके बाद, वे सन् १९२७ में शंघाई आगये थे। यहां उन्होंने सन् १९२७ से १९३६ तक ९ पुस्तकें प्रकाशित कीं। इनमें कुछ ऐतिहासिक विषयों पर थीं और कुछ रूसी पुस्तकों के अनुवाद थे। सन् १९२८ में 'तीव्र प्रवाह' नामक पत्रिका द्वारा वे मार्क्सवाद और लेनिनवाद के सिद्धान्तों का प्रचार करने लगे तथा सन् १९३० में वामपक्षीय लेखकों की समिति में सम्मलित होगये थे। चीन के अन्य क्रांतिकारी लेखकों के समान, लू शुन की अनेक रचनाओं को भी खतरनाक कहकर क्वो मिंतांग सरकार ने जब्त कर लिया था। माओ त्से तुंग ने ४ मई, १९१९ के क्रांतिकारी आन्दोलन के महत्व का प्रतिपादन करते हुए, लू शुन के सम्बंध में कहा था—"लू शुन इस नई सांस्कृतिक सेना के अलमबरदार, एक महान् और बड़े वीर सैनिक थे। लू शुन चीनी सांस्कृतिक क्रांति के एक मुख्य सेनापति थे। वे केवल लेखक ही नहीं, एक महान् विचारक और महान् क्रांतिकारी भी थे।...वे असाधारण रूप से तपे हुये, साहसी, दृढ़-

प्रतिज्ञ, कर्त्तव्यपरायण और एक उत्साही राष्ट्रीय वीर थे, जो शत्रु के विरुद्ध आक्रमण के लिये जूझ पड़े थे।"

४ मई के आन्दोलन के कुछ समय बाद ही, चीन में साहित्यिक संशोधन परिषद की स्थापना हुई, जिसका उद्देश्य था—विभिन्न विचारधाराओं के अनुयायी चीन के प्रमुख लेखकों को संयुक्त करना। परिषद की स्थापना में चो रन् (लू शुन के भाई), चंग चन् वो, माव् तुन् (वर्तमान सरकार के सांस्कृतिक मंत्री), ये षाव् च्युन् (केन्द्रीय प्रकाशन व्यवस्था के वाइस-डाइरेक्टर) आदि बारह प्रमुख लेखकों का हाथ था। परिषद की ओर से दो पत्रिकायें भी प्रकाशित की जाती थीं। सन् १९२२ में, 'निर्माणकारी सोसायटी' की स्थापना की गई, जो आगे चलकर दो दलों में विभक्त होगई। कुओ मो जो (मौजूदा सरकार के उपप्रधान मंत्री) ने क्रांतिकारी वामपक्षीय दल का नेतृत्व किया और यू ता फू आदि लेखकों ने दूसरे दल का नेतृत्व किया। इन्हीं दिनों 'अर्धचन्द्र सोसायटी' नामक एक अन्य संस्था की स्थापना हुई और सन् १९३० में वामपक्षीय लेखक-समिति का संगठन किया गया था। यह समय चीन के क्रांतिकारी लेखकों के लिये अत्यन्त संकट का था। जापानियों के मंचूरिया पर आक्रमण करने के पश्चात, क्वो मिंतांग सरकार ने बुद्धिजीवियों को चुन-चुन कर पकड़ना, आरंभ कर दिया था। यहां तक कि मजदूरों-किसानों के विषय में किसी ईमानदार लेखक को कुछ लिखना भी असंभव होगया था। इस प्रकार के साहित्य का रखना तक जुर्म माना जाने लगा। कितने ही नवयुवक और नवयुवतियों को सन्देह के कारण गिरफ़्तार कर जेलों में ठूंस दिया गया तथा कितनों ही को कम्युनिस्ट बताकर, मौत के घाट उतार दिया गया। ७ फरवरी, १९३१ का वह मनहूस दिन संसार के इतिहास में कभी नहीं भूलेगा, जब लि वाय् पंग, हुये फिंग (प्रसिद्ध लेखिका तिंग लिंग के पति), रौ ष्ष्ट, यिन् फू आदि नौजवान लेखकों को गिरफ़्तार कर, ब्रिटिश पुलिस ने क्वो मिंतांग सेना के हवाले कर दिया और इन हत्यारे सैनिकों ने उनके ही हाथों उनकी कब्रें खुदवाकर उन्हें दफ़ना दिया!! अप्टन सिंक्लेअर, जान ड्युई, सिंक्लेअर लुईस, थियोडोर ड्रीज़र आदि सैकड़ों विदेशी लेखकों ने क्वो मिंतांग सरकार के इस नृशंस और घृणित कृत्य की निन्दा की और वाशिंगटन-स्थित चीनी मंत्री के दफ़्तर के सामने पहुँचकर विरोध प्रदर्शित किया था।

क्वो मिंतांग सरकार को इतने से ही संतोष न हुआ और वह क्रान्तिकारी सांस्कृतिक आन्दोलन के विरुद्ध कई वर्षों तक 'घेर कर मार डालो' नीति चलाती रही, जिसके फलस्वरूप अनेक वामपक्षीय लेखकों की गुप्त रूप से हत्या करदी गई और अनेकों को सरकारी गुंडे गुप्त रूप से कहीं ले गये, जिनका आज तक पता नहीं है। ऐसे संकटकाल में वामपक्षीय लेखकों की समिति को भंग कर दिया गया। जो लेखक बचे उनमें से कुछ भाग कर येनान चले गये, जो सन् १९३४ के महाप्रयाण के पश्चात चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का गढ़ और मुक्ति आन्दोलन का केन्द्र बन गया था। यहां रहते हुए, चीन के लेखक किसानों, मजदूरों और सैनिकों के घनिष्ट सम्पर्क में आये और उन्होंने जापानी तथा क्वो मिंतांग सेना के विरुद्ध गुरिल्ला-युद्ध में भाग लिया।

येनान में २ मई, १९४४ को चीन के लेखकों और कलाकारों की एक परिषद बुलाई गई, जिसमें अनेक स्थानों के लेखकों और कलाकारों ने भाग लिया था। परिषद की बैठक २१ दिनों तक चली, जिसमें माओ त्से तुंग ने अपने भाषणों द्वारा साम्राज्यवाद और सामंतवाद से सम्बंधित प्रतिक्रियावादी साहित्य के रूप का पर्दाफ़ाश करने के साथ-साथ, दृढ़तापूर्वक बुर्जुआ विचारों की गम्भीर आलोचना की। निम्नलिखित शब्दों में आपके विचारों का सार व्यक्त किया जा सकता है: साहित्य जनता के लिये लिखा जाना चाहिये। सृजनात्मक साहित्य और कला का निर्माण करने के लिये, जनता की—किसानों, मजदूरों और सैनिकों की—भाषा का अध्ययन करना आवश्यक है। यदि कोई लेखक या कलाकार अपने भावों को जनता तक पहुंचाना चाहता है, तो उसे जन-जीवन के साथ एकरूप करने के लिये जन-संघर्षों में हाथ बंटाना चाहिये। सर्वहारा वर्ग ही क्रान्ति का जन्मदाता है। इसलिये, साम्राज्यवाद और सामन्तवाद के खिलाफ़ मोर्चा लेकर हमारे साहित्य को इस वर्ग के नेतृत्व में आगे बढ़ना चाहिये। सर्वहारा वर्ग की अशिक्षा और असंस्कृति का कारण केवल सामन्तवादी और बुर्जुआ मनोवृत्ति की प्रधानता रही है। अतएव, इस वर्ग को शिक्षित और संस्कृत बनाने के लिये आन्दोलन चलाना चाहिये। मानव जाति जब तक वर्गों में विभक्त है, तब तक विश्वप्रेम या मानवता का उपदेश सफल नहीं हो सकता। वर्गहीन समाज में ही सर्वव्यापक प्रेम सम्भव है।

साहित्य की उक्त नूतन व्याख्या को कार्यान्वित करने के लिये, जुलाई सन् १९४९ में—चीनी केन्द्रीय जन सरकार की स्थापना होने के तीन मास

पूर्व—पीकिंग में चीन के साहित्यकारों और कलाविदों की परिषद् का आयोजन किया गया था। परिषद् के निर्णयानुसार, लेखकों और कलाकारों के अखिल चीनी संघ ने लगभग ३० लेखकों को गांवों, कारखानों और कोरिया-युद्ध के मोर्चों पर सेनाओं की टुकड़ियों में कार्य करने के लिये भेजा।

चीन के प्रसिद्ध विचारक को मो जो के निम्नलिखित वक्तव्य से आधुनिक चीनी साहित्य और कला के क्रांतिकारी रूप का कुछ आभास मिल सकता है : "आखिर डाक्टरी पढ़ने से भी कोई लाभ है ? आप इससे कृमियों का नाश अवश्य कर सकते हैं, परन्तु जरा सोचिये कि कृमि-उत्पादक घृणित सामाजिक-व्यवस्था का नाश इससे कैसे हो सकता है ? किसी धनिक पुरुष के पेट के दर्द का इलाज करने के लिये आप उसे कोई रेचक औषधि दे सकते हैं, परन्तु जब आप देखते हैं कि कोई दरिद्र व्यक्ति मोटर के नीचे आकर कुचल गया है और हज़ारों की संख्या में आपके देशवासियों की सशस्त्र सैनिकों द्वारा हत्या की जारही है, तो फिर ऐसी हालत में कोई डाक्टर क्या कर सकता है ?"

चीनी साहित्य रूस की अक्तूबर क्रान्ति तथा सोवियत साहित्य से काफ़ी प्रभावित हुआ है। लू शुन की रचनाओं में यह प्रभाव जगह-जगह दिखाई देता है और यही कारण है कि पुश्किन, गोगोल, टाल्सटाय, तुर्गनेव, चेखोफ़ और गोर्की चीनी पाठकों को उतने ही प्रिय हैं, जितने कि उनके अपने राष्ट्रीय लेखक। चीन की जनवादी क्रान्ति के पश्चात चीन में सोवियत साहित्य का महत्व बहुत बढ़ गया है। आधुनिक चीनी साहित्य का भी रूसी, चैक आदि अनेक विदेशी भाषाओं में अनुवाद किया जारहा है।

चीन के कतिपय लेखक

माओ त्से तुंग एक राजनीतिज्ञ होने के साथ-साथ महान् विचारक भी हैं। विचारों की मौलिकता के क्षेत्र में आपकी सबसे बड़ी देन यह है कि आपने मार्क्सवाद के उसूलों को चीन की नई परिस्थितियों पर लागू किया है। आपके सारगर्भित लेखों और भाषणों का अध्ययन करके चीनी जनता अपने संघर्षों में आगे बढ़ी है। आप **चीन की नई लोकशाही, चीनी क्रान्ति व चीनी कम्युनिस्ट पार्टी, जनता की लोकशाही डिक्टेटरशिप, ज्ञान और व्यवहार, चीन के क्रान्तिकारी युद्धों के संचालन की समस्याएँ, वर्तमान ढांचा और हमारा कार्य** और **विरोध** आदि अनेक पुस्तकों के लेखक हैं। आपकी रचनाओं का संग्रह अभी तीन भागों में प्रकाशित हुआ है, जिसकी रूसी और चीनी पत्रों में सराहना की गई है। क्वो मिंतांग के शासन में माओ त्से तुंग की रचनाओं का पढ़ना भयंकर अपराध माना जाता था, लेकिन फिर भी ये रचनाएँ जनता द्वारा अधिक से अधिक संख्या में पढ़ी जाती थीं। सरकारी केडर, कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य, जनमुक्ति सेना के सैनिक तथा विद्यार्थियों को चीन के राजनीतिक इतिहास को समझने के वास्ते माओ त्से तुंग की रचनाओं का पढ़ना आवश्यक है। वीवर, तिब्बती, मंगोल, रूसी, जर्मन, अंग्रेज़ी और हिन्दी आदि भाषाओं में आपकी पुस्तकों के अनुवाद प्रकाशित होचुके हैं। माओ त्से तुंग ने कविताएँ भी लिखी हैं। जनमुक्ति सेना के महाप्रयाण पर लिखी हुई आपकी कविताएँ सुप्रसिद्ध हैं।

ल्यू शाओ ची चीन के प्रसिद्ध विचारक और आलोचक माने जाते हैं। आप जनवादी सरकार के उपाध्यक्ष, कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमिटी के मंत्रिमंडल के सदस्य तथा चीन-सोवियत संघ मित्र-मण्डल के उपाध्यक्ष हैं। **पार्टी के भीतर संघर्ष, अन्तर्राष्ट्रीयता और राष्ट्रीयता** तथा

हम अच्छे कम्युनिस्ट कैसे बनें—आपकी प्रसिद्ध रचनाएँ हैं। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के संगठन, पार्टी के मार्ग में आने वाली कठिनाइयों और पार्टी को सफल बनाने वाली नीति के विकास के सम्बंध में आपकी पैनी दृष्टि वाली रचनाओं ने मार्ग-दर्शक का काम किया है।

चीन में कतिपय लेखक ऐसे भी हैं, जिन्होंने साहित्यिक क्षेत्र में ख्याति प्राप्त की है परन्तु राष्ट्र-कार्य में संलग्न होने के कारण, आजकल उनकी लेखनी विश्राम कर रही है। इस सम्बंध में प्रसिद्ध साहित्यकार, पुरातत्ववेत्ता और 'अन्तर्राष्ट्रीय स्तालिन शान्ति पुरस्कार' के विजेता—को मो जो, ऐतिहासिक पुरातत्व ब्यूरो के डाइरेक्टर और रवीन्द्रनाथ ठाकुर की रचनाओं के अनुवादक —छेंग छेन टो, विदेशों के साथ सांस्कृतिक सम्बंध रखने वाली ब्यूरो के डाइरेक्टर, प्रसिद्ध नाट्य लेखक—हुंग पन्, चीनी सरकार के सांस्कृतिक विभाग के उपमंत्री तथा चीन-भारत मित्र-मण्डल के सभापति, नाट्य लेखक—तिंग शी लिन्, लेखक और कलाकार संघ के मंत्री षा ख फू, गत तीस वर्षों से चीन के नाट्य आन्दोलन में काम करनेवाले और अनेक नाटकों के सुप्रसिद्ध लेखक —थ्येन हान् तथा चीनी नाटकों को नया रूप देनेवाले और प्रसिद्ध अभिनेता —औ यांग यू छि एन आदि लेखकों के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

चीन के आधुनिक लेखकों में, लाव् ष एक प्रसिद्ध लेखक माने जाते हैं। 'रिक्शा वाला,' 'लव् लि के प्रेम की खोज,' 'बिलाड़ियों का देश' आदि आपकी प्रसिद्ध रचनायें हैं। आप जापानी युद्ध काल में राष्ट्रवादी लेखकों की आक्रमण-विरोधी समिति के अध्यक्ष रह चुके हैं। आजकल आप नाटकों की रचनायें करके जनसाहित्य का निर्माण कर रहे हैं। आपके 'फ़ांग चेन छ्' तथा 'नाग दाढ़ी गर्त' नामक नाटक इसी दृष्टिकोण से लिखे गये हैं। पहले नाटक में सड़कों पर गाने वाली एक लड़की का चित्रण है, जो चीन की मुक्ति के पश्चात शोषण से मुक्त हुई है। दूसरे नाटक में पीकिंग की गंदगी का चित्रण है, जिसे दूर करने के लिये श्रमजीवियों ने नालियों का निर्माण करके राजधानी की सुंदरता में वृद्धि की है। लाओ श ने अभी हाल में वू फ़ान् आन्दोलन तथा विवाह क़ानून पर भी नाटक लिखे हैं। आप इस समय पीकिंग की साहित्यिक परिषद के अध्यक्ष और केन्द्रीय सरकार द्वारा संचालित सांस्कृतिक और शिक्षण कमिटी के सदस्य हैं।

माओ तुन् आधुनिक चीनी साहित्यिक आन्दोलन के नेता तथा अनेक उपन्यासों और कहानियों के लेखक हैं। सन् १९२७-२८ में आपके कई उपन्यास प्रकाशित हुए थे। आप वामपक्षीय लेखकों की समिति के प्रमुख संस्थापक थे। सन् १९२६-३२ तक, आपने 'इन्द्रधनुष', 'एक पंक्ति में तीन' और 'सड़क' आदि उपन्यास लिखे। आपका 'मध्य रात्रि' नामक उपन्यास चीनी साहित्य की एक श्रेष्ठतम कृति मानी जाती है। इस उपन्यास में साम्राज्यवादी शोषण के कारण चीन के उद्योग-धंधों की संकटापन्न अवस्था का सुन्दर चित्रण किया गया है। सन् १९४५ में, माओ तन् का 'क्षय' नामक उपन्यास प्रकाशित हुआ था, जिसमें चीन-जापान युद्धकालीन शंघाई की हालत का सजीव चित्रण है। आजकल आप चीन की जनवादी सरकार के सांस्कृतिक विभाग में मंत्रिपद पर कार्य रहे हैं।

तिंग लिंग चीन की प्रसिद्ध लेखिका हैं। शंघाई में रह कर, आपने अनेक कहानियों और उपन्यासों की रचना की है, जिन्हें पढ़कर चीन के लाखों स्त्री-पुरुषों को प्रेरणा मिली है। आपकी 'जल' नामक कहानी में प्रलयकारी बाढ़ तथा उसे रोकने के लिये किसानों के वीरतापूर्ण प्रयत्नों का सशक्त वर्णन है। क्वो मिंतांग के सैनिकों द्वारा आपके पति हुये फिंग की हत्या किये जाने का उल्लेख ऊपर आचुका है। तभी से आपने क्वो मिंतांग सरकार के विरुद्ध ज़ोर से काम करना आरंभ कर दिया था। सन् १९३३ में तिंग लिंग क्वो मिंतांग सैनिकों के हाथों में पड़ गईं और वे उन्हें पकड़ कर लेगये थे। नानकिंग जेल की काल कोठरियों में तिंग लिंग को नाना प्रकार के शारीरिक और मानसिक कष्ट दिये गये। तीन वर्षों तक घोर यातनायें सहन करने के बाद, सन् १९३६ में आप पुलिस के पहरे से भाग निकलीं और येनान में माओ त्से तुंग के साथियों से जा मिलीं। वहां आपने जन मुक्ति सेना में जापान-विरोधी मोर्चे पर संस्कृति सम्बंधी कार्य किया। तिंग लिंग जब येनान में थीं, तो किसी पत्रकार ने आपसे प्रश्न किया था कि आपने लिखना क्यों छोड़ दिया है? उत्तर में उन्होंने कहा था:

> "यहां रह कर क्या लिखूं? यहां मुझे किसी प्रकार की प्रेरणा ही नहीं मिलती, जिससे मैं उत्साह प्राप्त करूं। यहां जनवाद जीवित है और शत्रु के विरुद्ध संघर्ष जारी है। में नहीं जानती जो जनता शोषण, असंतोष और औदास्य से मुक्त है उसे क्या लिखकर आकर्षित करूं? यदि मैं लिखना भी चाहूं तो मुझे कृषक, श्रमिक और सैनिक वर्ग के

विषय में ही कुछ लिखना होगा। परन्तु मैं अभी इस वर्ग के साथ घनिष्ठता स्थापित नहीं कर सकी हूँ, जैसी मैंने पुराने समाज के साथ की थी। नये जनवादी क्रांतिकारी समाज के स्त्री-पुरुषों के विषय में मुझे अभी बहुत कुछ ज्ञान प्राप्त करना बाक़ी है, उसके बाद ही कुछ लिख सकूंगी।"

'जब मैं लाल आकाश गांव में थी' नामक कहानी में, तिंग लिंग ने एक नौजवान लड़की के आशामय उज्ज्वल भविष्य का सहानुभूतिपूर्ण चित्रण किया है, जो अनेक जापानी सिपाहियों के बलात्कार का शिकार हुई थी। सन् १९५० में, आपकी 'उत्तर शान्सी पर वायु और सूर्य' नामक रचना प्रकाशित हुई थी। 'सांग कान् नदी पर सूर्य का प्रकाश' नामक उपन्यास पर तिंग लिंग को 'स्तालिन पारितोषिक' से पुरस्कृत किया गया है। यह उपन्यास भूमि-सुधार के सम्बंध में है और किसानों के निकट सम्पर्क के पश्चात लिखा गया था। इस उपन्यास का अंग्रेज़ी अनुवाद अभी हाल में 'चीनी साहित्य', अंक २ में प्रकाशित हुआ है। पत्र-सम्पादन और पत्रों के लिए रिपोर्ट लिखने की कला की ओर आपकी विशेष रुचि है। इस समय आप 'जनता साहित्य' पत्र के सम्पादन का कार्य कर रही हैं। अनेक लेखकों की रचनाओं का संशोधन आदि करके, तिंग लिंग ने चीन के अनेक नवयुवकों को प्रोत्साहित किया है।

चाओ षू लि चीन के दूसरे लोकप्रिय लेखक हैं। ये एक दरिद्र किसान के घर पैदा हुए थे और अत्यन्त कष्टमय जीवन से गुज़र कर आगे बढ़े हैं। आपने अपना पेट भरने के लिए समाचार पत्रों में लिखना शुरू किया था, परन्तु उससे इतनी कम आय होती थी कि इन्हें एक दिन खाने को मिलता और दूसरे दिन फ़ाक़ा होता। कुछ दिनों तक, चाओ षू लि आत्म-समर्पण-समिति में जापानियों के ख़िलाफ़ काम करते रहे थे। उसके बाद, आठवीं सेना के लिये नियमित रूप से लिखने लगे। सन् १९४० में, इन्होंने सेना के एक समाचार पत्र में लिखना शुरु किया था। उस समय उन्हें अनेक बार युद्ध के मोर्चों पर जा कर भी अपना काम करना पड़ता था। जापानी युद्ध समाप्त होने के पश्चात, चाओ षू लि ने अनेक कहानियों और लघु उपन्यासों की रचना की और तबसे आपकी गणना नव साहित्य के निर्माताओं में की जाने लगी है।

येनान में रहते हुए, एक पत्रकार के प्रश्नों का उत्तर देते हुए चाओ षू लि ने कहा था: "युद्ध के पूर्व, प्रकाशकों को पैसे दिये बिना पुस्तक प्रकाशित नहीं

हो सकती थी; परन्तु अब जो मैं लिखता हूं उसे सरकार प्रकाशित करती है। फिर, आजकल मैं अपने लाभ के बारे में क्यों सोचूं? कितने ही लोग स्वयंसेवक बनकर युद्ध में काम कर रहे हैं। और, कितने ही उनके साथ रह कर संस्कृति-प्रचार कर रहे हैं, इसलिये मैं भी अपने को स्वयंसेवक मानकर पुस्तकें लिखता हूँ। यहां के प्रकाशकों से मुझे खाने-पीने और पहिनने-ओढ़ने के लिये काफ़ी मिल जाता है, अतएव मैं निश्चिंत हूं। बड़ा लेखक बनने की मेरी अभिलाषा नहीं है; क्योंकि इससे मैं जनसम्पर्क से अलग पड़ जाऊंगा। मैं सामाजिक जीवन में सम्मिलित रहकर ही लिखना चाहता हूँ। हजारों किसान पढ़ना नहीं जानते, इसलिये मैंने उनकी ही भाषा में नाटक लिखना आरंभ किये हैं।"

चाओ पृ लि की 'श्याव् र् है का विवाह' नामक कहानी सन् १९४३ में छपी थी। चीन के केवल एक जिले में ही इस पुस्तक की ३०-४० हजार प्रतियां फ़ौरन ही बिक गई थीं। तत्पश्चात, 'लि के गांव में परिवर्तन' नामक आपका उपन्यास प्रकाशित हुआ। फिर, 'ल्यू चाय् की कवितायें' तथा 'अन्य कहानियां' नामक कहानी संग्रह प्रकाशित हुआ। आपकी 'रजिस्ट्री' नामक कहानी भी लोकप्रिय हुई है। चाओ पृ लि की रचनाओं में, किसानों का संघर्ष तथा नये समाज में प्रेम का सुन्दर चित्रण मिलता है। आप सर्वहारा वर्ग के प्रतिनिधि लेखक माने जाते हैं और आजकल शांसी प्रांत में किसानों की सहकारी संस्थाओं को संगठित करने में लगे हुए हैं।

चाव् मिंग सन् १९३२ से ही वाम पक्षीय लेखकों की सदस्या रही हैं और तभी से क्रांतिकारी आन्दोलनों से आपका सम्बंध रहा है। च्यांग काइ शेक की सरकार के शासन में आपको कई बार जेल जाना पड़ा था। सन् १९४१ में आप भी भाग कर येनान पहुँची थीं। सन् १९४५ में चाव् ने भूमि-सुधार आन्दोलन में भाग लिया, उसके बाद उत्तर-पूर्व चीन में कुछ समय कारखानों में व्यतीत किया और वहाँ ट्रेड यूनियन में काम करने लगीं थीं। आप बिजली के एक कारखाने में काम करती रहीं और इसी का परिणाम है—आपका 'शक्ति का स्रोत' नामक उपन्यास। इसमें लेखिका ने बताया है कि किस प्रकार जापानियों ने बिजली की यह मशीन १५ हजार श्रमजीवियों से जबर्दस्ती बनवाई थी और च्यांग सरकार द्वारा इस मशीन के नष्ट कर दिये जाने पर, किस प्रकार श्रमजीवियों ने उसे फिर से दुरुस्त किया है।

छन् तेग ख एक अत्यंत दरिद्र किसान थे। जनमुक्ति सेना में भरती होने के पश्चात, आपने लिखना-पढ़ना सीखा। 'लौह मनुष्य,' 'श्रीमती तू' और 'जीता-जागता नरक' नामक आपकी सरस कहानियां प्रकाशित हुई हैं, जो आपके व्यक्तिगत अनुभवों पर आधारित हैं। आपकी रचनाओं में श्रमिक जनता के सशक्त और यथार्थ मनोभावों का मार्मिक चित्रण मिलता है। 'जीता-जागता नरक' में जापानी युद्ध का दिग्दर्शन कराया गया है। कहानी पढ़ कर मालूम होता है मानो स्वयं जीवन ही बोल रहा हो।

खुंग छ्य्वे और व्वान् छिंग दोनों पति-पत्नी हैं। दोनों ने मिलकर 'पुत्रियां और पुत्र' नामक उपन्यास की रचना की है। दोनों ने लड़ाई के मोर्चे पर इस उपन्यास के नायक और नायिका के साथ एक साधारण केडर का जीवन विताया है। क्वो मिंतांग सेना के विरुद्ध चीन के स्त्री-पुरुषों की लड़ाई का इतनी सशक्त और रोचक भाषा में शायद ही अन्यत्र वर्णन किया गया हो। दोनों लगभग ३३ वर्ष के हैं और पीकिंग के 'मोशन पिक्चर व्यूरो' में सिनेरिओ लिखने का काम करते हैं।

हान् फेंग ने 'यिन् छिंग छुन्' नामक कहानी में मुक्ति सेना के एक सिपाही का मनोवैज्ञानिक चित्रण किया है। यिन् अनुशासन भंग करने के कारण पार्टी का सदस्य नहीं होसका, किन्तु आगे चलकर रुग्ण दशा में भी शत्रु के विरुद्ध जीतोड़ युद्ध करने के कारण, वह अपने साथियों के प्रेम का भाजन वन जाता है। प्झट येन ने सेना में संस्कृति सम्बंधी कार्य किया है। उन्होंने अपने अनुभवों पर आधारित एक कहानी लिखी है। चौ लि पो को 'तूफ़ान' नामक उपन्यास पर 'स्तालिन पारितोषिक' मिला है। आपने अभी हाल में, किसी कारखाने में काम करने के पश्चात एक उपन्यास लिखा है। 'श्वेत वालों वाली कन्या' के लेखक ह चिंग चृ तथा तिंग यि को भी 'स्तालिन पुरस्कार' से सम्मानित किया गया है।

जनमुक्ति सेना के काव् यू पाव् नामक सैनिक ने अपनी आत्मकथा लिखी है। सेना में भरती होने के वाद ही आपने लिखना-पढ़ना सीखा है। आपने जव अपनी आत्मकथा लिखनी आरम्भ की, तो चीनी भाषा के अनेक शब्द न जानने के कारण वहुत कठिनाइयां हुईं, जिन्हें हल करने के लिये उस शब्द के स्थान पर आप उस भाव का सूचक कोई चित्र वना दिया करते थे। इस प्रकार लगभग सवा वर्ष में आप अपनी पुस्तक के कुछ ही अध्याय समाप्त

कर सके। परन्तु, अब काव् की पुस्तक समाप्त होगई है और गत वर्ष वह 'जनमुक्ति सेना साहित्य' नामक पत्र के सम्पादक के पास संशोधनार्थ भेजी गई थी। उक्त पत्र के सम्पादक ने पुस्तक पाकर लेखक को आमंत्रित किया था। जहां अनेक लेखकों की उपस्थिति में पुस्तक के विषय में चर्चा की गई। इस चर्चा के आधार पर, काव् ने फिर से अपनी पुस्तक का संशोधन किया है। पुस्तक के कई अध्याय 'जनमुक्ति सेना साहित्य' पत्र में प्रकाशित होचुके हैं।

उक्त लेखकों के अतिरिक्त, 'अग्नि ज्वालायें आगे हैं' के लेखक—लि यू पाय्, 'इस्पात की दीवार' के लेखक—लियू छिंग, 'मैदान पर आग लगी है' के लेखक—श्यु क्वांग याव्, 'वे जो सर्वप्रिय हैं' के लेखक—वेइ वेई, 'नए काम करने के तरीक़े' के लेखक—कू यू, 'शादी का दिन' के लेखक—मा फंग, 'वीर के स्केच' के लेखक—चांग मिंग, 'हमेशा आगे' के लेखक—कू लि काव्, तू पिन तथा चिंग आदि अनेक नौजवान लेखक उपन्यास, नाटक, कविता, कहानी और रिपोर्ताज आदि लिख कर, आधुनिक चीनी साहित्य की क्रांतिकारी परम्परा को आगे बढ़ा रहे हैं। इन रचनाओं में ज़मींदारों और साहूकारों से उत्पीड़ित किसानों का विद्रोह, सामंती समाज की चक्की में पिसने वाली नारियों का संघर्ष, स्वदेश-रक्षा के लिये सैनिकों का युद्ध तथा चीन की मुक्ति के पश्चात जनसमूह के आशा और उत्साहपूर्ण जीवन की झांकी का सशक्त वर्णन किया गया है।

भूमि-सुधार के पश्चात, चीनी जनता की आर्थिक दशा में आशातीत उन्नति हुई है, जिससे जनसाधारण की सांस्कृतिक भूख बहुत बढ़ गई है। इससे रचनात्मक साहित्य के निर्माण के लिये, लेखकों और कलाकारों को जन साधारण के जीवन से परिचय प्राप्त करना आवश्यक होगया है। बहुत समय तक विदेशियों के शोषण के कारण, चीनी जनता हीन भावना से पीड़ित थी। परन्तु, नये चीन का आधुनिक साहित्य इस भावना को शनैः शनैः दूर कर रहा है, जिससे जनसाधारण राष्ट्रीय गर्व का अनुभव कर रहा है। आज चीनी जनता अपनी महान् शक्ति से परिचित होगई है और उसका अपने उज्ज्वल भविष्य में पहले से कहीं अधिक विश्वास है।

चीन ने अपनी सृजनात्मक परम्पराओं के लिये संसार भर में ख्याति प्राप्त की है। हमें आशा है कि जनसाधारण के सांस्कृतिक स्तर में उन्नति होने पर, चीनी साहित्य किसी एक क्षेत्र तक सीमित न रह कर क्रमशः जीवन के अन्य आवश्यक पहलुओं पर प्रकाश डालता हुआ समुन्नत और समृद्ध बनेगा।

पिता के आदेश पर, राजधानी में पहुंच कर सरकारी परीक्षा में सम्मिलित होता है और परीक्षा में सफलता प्राप्त करने के बाद अनिच्छापूर्वक किसी मंत्री की लड़की से विवाह करके वहीं रहने लगता है। उधर अकाल के कारण, नवयुवक के माता-पिता की मृत्यु होजाती है और उसकी स्त्री अपने वाल बेच कर उनके लिये तावूत (शव रखने के वक्स) का प्रवंध करती है। उसके वाद अपने पति को खोजते हुए, वह वड़ी कठिनता से राजधानी पहुंचती है और पति के साथ रहने लगती है। इस नाट्य की गणना चीन के प्राचीन काल के उत्कृष्ट नाटकों में की जाती है।

सान् छा खौ (तीन सड़कों का बड़ा रास्ता) नाट्य में सुंग काल की घटना पर आधारित एक षड़यंत्र की कहानी है। चिआओ चान् सेनापति को वांग नामक व्यक्ति के विश्वासघात के कारण, मृत्युदण्ड की आज्ञा सुनाने के पश्चात एक रक्षक के हवाले कर दिया गया। मार्ग में दोनों एक सराय में ठहरे। जब सराय के मालिक को षड़यंत्र का पता लगा, तो उसने सेनापति की रक्षा करनी चाही। इसी वीच में, सेनापति के किसी वड़े अफ़सर ने जेन नामक एक दूसरे सेनापति को उसकी रक्षा के लिये वहां भेज दिया था। किन्तु, सराय के मालिक ने इस व्यक्ति को वांग का एजेंट समझा। दोनों में अंधेरे घर में लड़ाई होने लगी। सराय के मालिक की स्त्री तथा चिआओ भी इस लड़ाई में शामिल होगये। अन्त में, जब सेनापति चिआओ ने अपना नाम लिया तो दोनों को अपनी भूल का पता लगा। यह नाट्य पीकिंग की शांति-परिषद के अवसर पर चीनी नाटक और 'जनगान रिसर्च इंस्टीट्यूट' के अन्तर्गत अनुसंधान स्कूल के विद्यार्थियों द्वारा खेला गया था।

सुंग वू कुंग (जादूगर वानर) चीन का दूसरा लोकप्रिय नाट्य है, जिसे देखकर चीन के श्रमजीवी प्रेरणा प्राप्त करते हैं। सुंग युद्ध में कुशल नायक है। सुंग को वश में लाने के लिये, स्वर्ग के देवता उसे एक उच्च पदाधिकारी वना देते हैं। सुंग स्वर्ग में रहता हुआ, आड़ुओं के उद्यान की रक्षा करने लगता है। लेकिन, एक दिन उसे इस षड़यंत्र का पता चल जाता है और वह स्वर्ग में अव्यवस्था फैलाने का निश्चय कर लेता है। स्वर्ग की महादेवी के जन्म-दिवस पर वह उद्यान के सब फलों को तोड़ कर खाता है, वहां का सब पानी पी जाता है और नवयौवन-गुटिकायें भक्षण कर डालता है। तत्प-

श्चात, अपने घर लौट कर गुफा में रहने लगता है । स्वर्ग के देवता पर्वत को चारों ओर से घेर कर बानर को पकड़ने की कोशिश करते हैं, परन्तु सफल नहीं होते । इस नाटक में रंगमच पर भीषण युद्ध के साहसपूर्ण दृश्य उपस्थित किये गये हैं । युद्ध-कौशल में विविधता लाने के लिये, चीनी 'क्लासिकल' नृत्य की बहुत सी बातें इसमें सम्मिलित करली गई हैं । प्रसिद्ध अभिनेता लिन् षाव् छुन् बानर का पार्ट करते हैं ।

आरम्भ में चीनी नाट्य विदेशी दर्शकों को बड़ा अद्भुत और कौतूहल पूर्ण मालूम होता है और समझ में आना कठिन होजाता है कि रंगमंच पर क्या होरहा है । कलाबाज़ी करना, एक टांग से चलना, पंखे से हवा करना, बार-बार कोड़ा फटकारना, इधर-उधर ज़ल्दी-ज़ल्दी चक्कर लगाना, चीखना-चिल्लाना तथा कानों को फाड़ने वाले झांझ, ढोल, बांसुरी आदि वाद्यों का ज़ोर-ज़ोर से बजाया जाना—यह सब कौतूहलोत्पादक वस्तुयें दर्शक को चकित कर देती हैं । नाट्य के समय चीनी रंगमंच पर एक के बाद एक पात्र उपस्थित होते रहते हैं, इसलिये पटाक्षेप की आवश्यकता नहीं रहती । चीनी नाटक में पहले से कार्यक्रम घोषित करनेवाले सूत्रधार तथा पात्रों को उनका पार्ट रटानेवाले सहायकों की भी ज़रूरत नहीं पड़ती । यदि रंगमंच पर कोई अभिनेता अपने मुंह के सामने पंखा लेकर चलता है तो इसका अभिप्राय होता है कि वह नंगे सिर गरमी में चल रहा है; यदि उसके बांये हाथ में कोड़ा है तो इसका अभिप्राय होता है कि वह घोड़े से नीचे उतर रहा है; यदि पहिये के चित्र से अंकित दोनों हाथों में वह दो नील ध्वजायें लिये हुए है तो इसका अभिप्राय होता है कि वह रथ पर सवार है तथा रंगमंच पर सफ़ेद काग़ज़ों की पट्टियों की वर्षा से समझना चाहिये कि बरफ़ का तूफ़ान आ रहा है । चीनी नाटकों में अनेक प्रतीकों से काम लिया जाता है, जिससे इन नाटकों की प्राचीनता की ही अभिव्यक्ति होती है ।

चेहरे रंगने के लिये भी चीन में सौ से अधिक तरीक़ों का प्रयोग होता है । विश्वासपात्र या धार्मिक व्यक्ति तथा सम्राटों के चेहरे लाल रंग से, ईमानदार लेकिन कुरूप व्यक्तियों के चेहरे काले रंग से तथा विश्वासघाती और चालाक व्यक्तियों के चेहरे सफ़ेद रंग से रंगे जाते हैं । स्त्रियों तथा नायिकाओं के चेहरे स्वाभाविक रहते हैं । उत्तरीय छि तथा सुंग राजवंशों के काल में, शत्रु को रणक्षेत्र में भयभीत करने के लिये योद्धा मुंह पर कृत्रिम चेहरे

लगाया करते थे। चेहरे रंगने की प्रथा का यही आदि रूप होना चाहिये। नाट्यों के साथ-साथ, नटों के साहसपूर्ण खेल भी रंगमंच पर दिखाये जाते हैं।

चीन में प्रथम क्रान्तिकारी गृह-युद्ध का काल (सन् १९२५-२७) नये नाट्य आन्दोलन का काल माना जाता है। इसके पश्चात, वामपक्षीय नाटककारों की समिति की स्थापना हुई, जिसका जनता में काफ़ी प्रभाव था। सन् १९३१ में जापानी आक्रमण के प्रतिरोध-आन्दोलन के समय, नाट्य समितियों ने जनता को राष्ट्रीय खतरे से सावधान करने के लिये देश का भ्रमण किया। उसके बाद, सन् १९४२ में माओ त्से तुंग के साहित्य और कला सम्बंधी भाषणों को सुनकर, येनान में अनेक नाटक लिखे और खेले गये। सुप्रसिद्ध 'सफ़ेद बालों वाली कन्या' नाट्य इसी स्थान की उपज है, जो येनान की लू शुन कला-मण्डली के चिंग चू और तिंग यि आदि सदस्यों द्वारा लिखा गया था।

आजकल चीन के जन नाट्यों की लोकप्रियता बहुत बढ़ गई है। चीन में सब मिलाकर १०० से अधिक प्रकार के नाट्य खेले जाते हैं। चिंग च्यू (पीकिंग ऑपेरा), फिंग च्यू (उत्तर चीन का ऑपेरा), चुआन शु (शेचुआन स्स् छवान् च्यू ऑपेरा), चिंग च्यांग (शांसी ऑपेरा) आदि अनेक प्रान्तों के विभिन्न ऑपेरा है और सबकी अपनी-अपनी विशेषता है। इनमें पीकिंग ऑपेरा सबसे अधिक समृद्ध माना जाता है। यह ऑपेरा १८ वीं शताब्दी के पहले का है। इसमें क्यांग सु, अन्हवेई, हैन्को, शेचुआन और शान्सी के प्राचीन परंपरागत नाट्यों का संगीत सम्मिलित है। वस्तुतः पीकिंग ऑपेरा में अभिनय, संगीत, गद्य, काव्य सभी कुछ आजाता है। मंचुओं के ज़माने में स्त्रियों को नाटकों में भाग लेने की मनाही थी, इसलिये पुरुषों को ही उनका पार्ट करना पड़ता था। किन्तु, पिछले कई वर्षों से स्त्रियाँ भी नाटकों में भाग लेने लगी हैं। पूर्व काल में ऑपेरा राजदरबार और कुलीन लोगों को ही दिखाया जाता था, किन्तु अब यह सर्वसाधारण होगया है। स्त्रियों का पार्ट करने में सिद्धहस्त चीन के सुप्रसिद्ध अभिनेता मे लान् फ़ांग ने जबसे यह ऑपेरा जापान, अमरीका और खासकर सोवियत संघ में प्रदर्शित किया है, तबसे इसका महत्व बहुत बढ़ गया है।

चकियांग ऑपेरा जिसे पाव् शिंग ऑपेरा भी कहते हैं, शंघाई में बहुत लोकप्रिय है। यह किसानों का नाट्य है, इसलिये अन्य ऑपेराओं की अपेक्षा इसका संगीत बिलकुल भिन्न है। नाटक और सिनेमाओं के विशेषज्ञों ने इस ऑपेरा के प्रकाश, दृश्य तथा रंगमंच के प्रभाव आदि में सुधार किये हैं। इससे

इसकी यथार्थता बढ़ गई है। इस ऑपेरा में स्त्रियां ही पुरुष और स्त्री दोनों का पार्ट करती हैं। च्वान् श्युए फंग चेकियांग ऑपेरा की प्रसिद्ध अभिनेत्री हैं। ल्यांग शान् पो और चू यिंग थाय् इस ऑपेरा का प्रसिद्ध नाट्य है, जो ईसवी सन् की पांचवीं शताब्दी की एक वास्तविक जन कथा पर आधारित है। इसमें फ़ान् वें च्वान् और फू च्वान् श्यांग नामक चीन की प्रसिद्ध अभिनेत्रियों ने काम किया है। चू यिंग थाय् अठारह वर्ष की एक लड़की थी, जो एक लड़के के वेष में रहकर हैंगचो के स्कूल में पढ़ने के लिये अपने पिता की अनुमति प्राप्त करती है। हैंगचो पहुंच कर, वह ल्यांग शान पो नामक अपने सहपाठी के साथ तीन वर्षों तक उसका भाई बनकर रहती है। तीन वर्षों के बाद, वह अपने पिता का पत्र पाकर घर लौटती है, किन्तु लौटने से पहले अपने लड़की होने का भेद वह अपने अध्यापक की स्त्री से बता देती है और साथ ही ल्यांग शान पो के प्रति अपना प्रेम भी व्यक्त करती है। चू यिंग थाय् के वापिस लौट जाने पर, ल्यांग शान पो को जब इसका पता लगता है तो वह बहुत निराश होता है। वह अपनी प्रेमिका के घर पहुंचता है, लेकिन उसकी शादी किसी दूसरे व्यक्ति से होजाती है। पो बीमार होकर प्राण त्याग देता है। इस समय चू यिंग थाय् डोली में बैठ कर अपने पति के घर जाते समय रास्ते में अपने प्रेमी की कब्र के पास जाती है। कब्र फट पड़ती है और वह उसमें समा जाती है। तत्पश्चात, दोनों तितलियाँ बनकर आकाश में उड़ने लगते हैं। इस नाटक में स्त्री-पुरुष के निर्बाध प्रेम का सुन्दर चित्रण किया गया है, इसलिये लोग इसे पसंद करते हैं।

कैण्टन ऑपेरा क्वांग तुंग, हॉंगकॉंग, मलाया और इण्डोनेशिया आदि स्थानों में बहुत लोकप्रिय है। इसमें पुराने चीनी वाद्ययंत्रों के साथ वायोलिन, मैण्डोलिन, गिटार (एक प्रकार का सितार) आदि विदेशी वाद्यों का भी प्रयोग किया जाता है।

पहले, नाटकों में काम करने वाले अभिनेताओं की सख़्त निगरानी रखी जाती थी। ज़रा सी ग़लती होने पर, उन्हें बेंत आदि से सज़ा दी जाती थी। कभी उन्हें देश छोड़ कर जाना पड़ता था, नाट्य-देवता के समक्ष घुटने टेक कर प्रार्थना करनी पड़ती थी और उसके सामने धूप जलानी पड़ती थी। इन लोगों को नियमित आहार पर रहना पड़ता तथा रात को जल्दी सोना और सुबह जल्दी उठना पड़ता था। उस्ताद उन्हें इस शर्त पर अभिनय सिखाने के

लिये राज़ी होता था कि यदि शिक्षा ग्रहण करते हुए उनकी मृत्यु भी हो जाय तो उसके लिये वह जिम्मेदार नहीं है। अभिनय की शिक्षा प्राप्त करने के बाद, अभिनेताओं को गुरु के ऋण से मुक्त होने के लिये कई वर्षों तक सारी कमाई उस्ताद की नज़र करनी पड़ती थी। इन लोगों का सामाजिक स्तर अत्यंत निम्न समझा जाता था और उनकी गणना वेश्याओं की कोटि में होती थी। मंगोल राजाओं के काल में, अभिनेता का पुत्र तीन पीढ़ियों तक किसी सरकारी परीक्षा में सम्मलित नहीं हो सकता था। नाटक में स्त्रियों का निषेध था। इसलिये, उनका पार्ट ११ से २० वर्ष तक के नौजवान लड़कों द्वारा किया जाता था। मंचु राजकुमार इन लड़कों के बहुत शौक़ीन थे और उनके बिना वे अपने मित्रों को दावत आदि नहीं देते थे। ये लोग अच्छी पोशाकें पहिनते, इत्र-फुलैल लगाते और परदे में चलते थे। सन् १९३३ में, इन लड़कों का इतना नैतिक अधःपतन हुआ कि जनता की नैतिकता के लिये ये ख़तरनाक समझे जाने लगे। चेकियांग ऑपेरा में काम करने वाली स्त्रियों को भी बहुत अपमान सहना पड़ता था। परन्तु, अब ये सब बातें पुरानी हो गई हैं। नये चीन के नाट्य और ऑपेरा में काम क़रने वाले अभिनेता आज देश के पथ-प्रदर्शक समझे जाते हैं; उन्हें जनता की राजनीतिक सलाहकार समिति का सदस्य बनाया जाता है और उनकी उन्नति के लिये सरकार की ओर से सब प्रकार की सुविधायें दी जाती हैं।

चीनी ऑपेरा जन साधारण की अभिव्यक्ति का एक तरीक़ा होने पर भी उसमें कनफ्यूशियस और ताव् धर्मों के सिद्धांतों को अपनाया गया है तथा पितृप्रेम, राजभक्ति, परिवार-सेवा और भाग्य सम्बंधी बातों की ही इसमें प्रायः मुख्यता रही है; परन्तु चीन की परिवर्तित सामाजिक दशाओं का इन बातों से मेल नहीं खाता। नये चीन की जनता उसी नायक को स्वीकार करने को तैयार है जो प्रतिक्रियावादी शक्तियों के विरुद्ध संघर्ष करता हो, चाहे फिर इन शक्तियों का सम्बंध राजनीतिक दमन से हो या प्रेम से। इस दृष्टिकोण को सामने रखते हुए, चीन के नाट्यों में अनेक आवश्यक सुधार किये जारहे हैं। स्टेज आदि के सम्बंध में भी सुधार होरहे हैं।

अभी पीकिंग में 'क्लासिकल' और जन नाट्यों का राष्ट्रीय समारोह मनाया गया था, जो एक मास के बाद १ नवम्बर, १९५२ को समाप्त हुआ। इसमें कुल मिलाकर २१ प्रकार के नाट्य आदि प्रदर्शित किये गये, जिनमें

१,६०० अभिनेताओं ने भाग लिया। कुछ नाट्य प्राचीन ऐतिहासिक कहानियों पर आधारित थे। नाट्य कला में सुधार करने के लिये, तथा 'क्लासिकल' थियेटर के स्तर को उन्नत करने के लिये अनेक आलोचक, लेखक, एक्टर, कम्पोजर, नर्तक तथा संगीतज्ञों में परस्पर विचार-विनिमय किया गया और समाचार-पत्रों में आलोचनात्मक लेख छपे। केन्द्रीय नाट्य संस्था के अध्यक्ष प्रसिद्ध नाट्यकार औ यांग यू छिएन आदि ने भी इस चर्चा में भाग लिया। इस अवसर पर चीनी नाट्य संस्था के डीन सुप्रसिद्ध मे लान् फ़ांग, काय् च्याव थ्येन् तथा च्वान् श्युए फंग और हूनान ऑपेरा में सुधार करनेवाली छांग् श्यांग् य्वू नामक अभिनेत्रियों को उनके सुन्दर अभिनय के उपलक्ष्य में पारितोषिक वितरण किये गये। निर्णायकों में अनेक आलोचक, लेखक, अभिनेता तथा अभिनेत्री आदि चुने गये थे। नौ जन-नाट्यों पर पारितोषिक दिये गये, जिनमें 'ल्यांग शान पो', 'चूं यिंग थाय्' तथा 'सेनापति और प्रधान मंत्री का समझौता' मुख्य हैं। इस अवसर पर, प्रधानमंत्री चाऊ एन लाई ने अपने भाषण में पूर्वकाल में उपेक्षित 'क्लासिकल' और स्थानीय नाटकों में सुधार करते हुए चीनी नाट्यकला में नया जीवन संचारित करने तथा ऐतिहासिक नाटकों को आधुनिक रूप देने पर जोर दिया है।

नये चीन में जन नाट्य और जनगीतों को अधिकाधिक लोकप्रिय बनाने का प्रयत्न किया जारहा है। इस समय चीन में २,००० नाटक करनेवालों के ग्रुप हैं और दो लाख अभिनेता और अभिनेत्रियाँ हैं। आधुनिक नाट्यों को जनता तक पहुंचाने के लिये २५० कम्पनियां गांवों, कारखानों और सेनाओं की टुकड़ियों में काम कर रही हैं। लेखकों द्वारा अनेक नाट्य और ऑपेरा लिखे जारहे हैं। 'सफ़ेद बालों वाली कन्या' नाटक चीन में सुप्रसिद्ध है। इसके अतिरिक्त 'महाप्रयाण,' 'लियू हू लान्,' 'बुद्धिमान लड़की लिउ', 'अध्यापक', 'मछुए का बदला,' 'सेना में मू लान' (मू लान युद्ध में लड़ने वाली एक लड़की का नाम है), 'मंग च्यांग नू', 'चिन् आक्रमणकारियों के ख़िलाफ़ युद्ध,' 'आकाश गंगा के प्रेमी,' 'चू के गाँव पर तीन धावे', 'लाल झण्डे का गीत', 'लि श्यांग श्यांग,' 'नाग दाढ़ी गर्त', 'नई असलियत के आमने-सामने' आदि नाट्य मुख्य हैं। बालकों के लिये नाटकों का अलग प्रबन्ध है। उनके नाट्य-गृहों में बालकोपयोगी नाटक खेले जाते हैं।

चीनी नाट्यों के देखने से चीनी जनता के सीधे-सादे, परिश्रमी और साहसपूर्ण जीवन का पता लगता है। इन नाट्यों से मालूम होता है कि चीनी जनता ने शोषण और दमन का प्रतिरोध करने के लिये कितना संघर्ष किया है। चीन के कलाकार अत्यधिक प्रतिक्रियावादी, पुराने नाट्यों पर ही प्रतिबंध लगाने के पक्ष में हैं। उनकी नीति पुरातन को यथासंभव नूतन रूप देकर नाट्यकला को समृद्ध करने की ही है। यदि कोई नाट्य जनता के हृदय में देशभक्ति, साहस और श्रम की भावना का संचार करता है, प्रगतिशील सामाजिक शक्तियों को आगे बढ़ाता है, जनता की रचनात्मक शक्ति में विश्वास के लिये प्रेरणा देता है और साथ ही, भूतकालीन सांस्कृतिक परम्परा की रक्षा करता है तो वह अवश्य ग्राह्य है—इसी दृष्टि से चीन में नाट्य कला का विकास किया जारहा है।

सिनेमा

पहले, चीन के नगरों में ७५% हालीवुड के चलचित्रों की भरमार थी; जिससे सर्वसाधारण की प्रवृत्ति अपनी संस्कृति और कला की ओर उन्मुख न होकर दुराचार की ओर ही अधिक होती थी। परन्तु, आजकल चीनी जनता अपनी फिल्मों का निर्माण स्वयं करती है। नये चीन में इस कला को अधिक से अधिक जनोपयोगी बनाने का प्रयत्न किया जारहा है, जिससे जन साधारण राष्ट्रीय संस्कृति और कलात्मक परम्पराओं का समन्वय करके नई संस्कृति और नयी कला का विकास कर सके।

संस्कृति-मंत्रिमण्डल के सिनेमा-ब्यूरो की देखरेख में चलने वाले सिनेमा-स्कूलों में सिनेमा विषयक शिक्षा दी जाती है। सितम्बर सन् १९५० से, चीन में सिनेमा रिसर्च सम्बंधी संस्था काम कर रही है; जहां विद्यार्थियों को डाइरेक्टर, एक्टर, टैक्नीशियन और लेखक बनना सिखाया जाता है। इस संस्था में दो वर्षों का पाठ्यक्रम रखा गया है। पहले वर्ष के विद्यार्थियों को ४ मई, १९१९ के आन्दोलन से लगाकर अब तक के सिनेमाओं के साहित्यिक और कलात्मक विकास का ज्ञान कराया जाता है। इसके बाद जन जीवन का अध्ययन करने के लिये उन्हें गांवों, कारखानों और सेना की टुकड़ियों में भेजा जाता है। 'सफ़ेद बालोंवाली कन्या' नामक फिल्म अनेक किसानों को दिखाकर, इसी प्रकार निर्माण की गयी थी। द्वितीय वर्ष के विद्यार्थियों को नाटकों और सिनेमाओं में अभिनय करने का अभ्यास कराया जाता है

और उन्हें बोलने की शैली, धाराप्रवाह बातचीत, गाने, नाचने और मेकअप आदि करने की शिक्षा दी जाती है। फिर विद्यार्थी सिनेरियो, डायलॉग और नाटक लिखने का अभ्यास करते हैं। ग्रेजुएट होने के पश्चात उन्हें किसी फिल्म स्टूडियो में भेज दिया जाता है।

नये चीन के अभिनेता और अभिनेत्रियों को अब कुत्सित और अपमानजनक जीवन व्यतीत नहीं करना पड़ता, इसलिये आजकल अनेक उत्साही नवयुवतियाँ जनभावना से प्रेरित होकर सिनेमा कला की ओर आकृष्ट होरही हैं। एक लड़की ने लिखा है—'पहले मैं समझा करती थी कि गायक, नर्तक और अच्छा खिलाड़ी होना ही सिनेमा स्टार बनने के लिये पर्याप्त है, किन्तु नये चीन में जन कलाकारों का मार्ग निश्चय ही इससे भिन्न है।' एक दूसरी लड़की का मनोभाव देखिये—'हम श्रमजीवियों को अपनी नई फिल्में, विशेषकर कमकरों के जीवन सम्बंधी फिल्में, प्रिय हैं इसलिये मैं भी अभिनेत्री बनना चाहती हूं।'

शिन् फंग श्या चीन की एक प्रसिद्ध अभिनेत्री है। कई वर्षों पहले, उसके सौंदर्य पर मुग्ध होकर कोई बदमाश उसके पीछे पड़ गया था; जिससे शिन् को स्टेज छोड़ना पड़ा था। सन् १९४५ में, विजय-दिवस पर वह फिर से अभिनय करने लगी, किन्तु अबकी बार क्वो मिंतांग के सैनिकों ने उसे परेशान किया। शिन् को फिर स्टेज का परित्याग करने के लिये बाध्य होना पड़ा। शिन् ने विवाह कर लिया, किन्तु उसका पति क्वो मिंतांग का दलाल निकला। सन् १९४८ में, टीन्सटिन के मुक्त होने पर शिन् से कहा गया कि अब कलाकारों को युनिफार्म पहननी पड़ेंगी और सब नाटक तथा सिनेमा बन्द कर दिये जायेंगे। किन्तु एक श्रेष्ठ कलाकार होने के नाते, इस अभिनेत्री को पीकिंग में निमंत्रित कर उसका आदर सत्कार किया गया और उससे सिनेमा में काम करने के लिये कहा गया।

क्वो लान् यिंग 'सफ़ेद बालोंवाली कन्या' की प्रसिद्ध नायिका हैं। अपनी आत्मकहानी में वह लिखती हैं—'मेरे छोटे भाई और मेरी दो वहिनों को ग़रीबी के कारण बेच दिया गया था। आठ वर्ष की अवस्था में मैंने अभिनय करना सीखा। एक वर्ष के बाद, मैं एक अभिनेत्री के साथ काम करने लगी। ५ वर्षों तक मुझे दारुण यातनायें सहन करनी पड़ीं। मुझे मेरी मां तक से

नहीं मिलने दिया गया। मैंने अनेक वार भागने की कोशिश की, किन्तु सफल न हुई। सन् १९४५ में, जब चांग च्या खौ मुक्त हुआ तो मेरे दिनों ने पलटा खाया। कम्युनिस्टों ने नरक कुण्ड से निकाल कर मुझे इन्सान बनाया। शनैः शनैः मुझमें वर्ग चेतना जागृत की गई और मैंने अपनी सब कथा अपने साथियों के सामने खोल कर सुना दी। 'सफ़ेद बालोंवाली कन्या' की कहानी सुनकर, मेरे हृदय में अद्‌भुत स्फूर्ति उत्पन्न हुई। पिंजड़े के बंधन से मुक्त एक पक्षी के समान मेरी दशा होगई। मैं पार्टी के सदस्यों के साथ शीघ्र ही घुलमिल गई। 'सफ़ेद बालोंवाली कन्या' की कहानी से प्रभावित होकर, मैं सोचने लगी कि निश्चय ही इस कहानी द्वारा जन जागृति पैदा की जा सकती है। मैं कुछ समय तक किसानों के साथ रह कर भूमि-सुधार का कार्य करती रही; फिर मैंने लिखना-पढ़ना सीखा और उसके बाद अभिनय करना आरंभ किया। 'सफ़ेद बालोंवाली कन्या' के समान मैंने भी यातनायें सही थीं, जिससे शोषकों और ज़मींदारों के प्रति मुझे अत्यंत घृणा थी, इसीलिये मैं शी अर (नायिका) का पार्ट कुशलतापूर्वक कर सकी। किन्तु पितृविहीन होने के कारण, मैं पितृ प्रेम का पार्ट ठीक-ठीक करने में सफल न हुई। इसके लिये मैंने एक श्रमजीवी साथी को अपना पिता बनाकर उससे प्रेम करना सीखा और इस प्रकार मैं अपने अभिनय में सफलता पा सकी।"

मुक्ति के पश्चात चीन में होनेवाले सामाजिक और राजनीतिक परिवर्तनों को समझने के लिये, यह लघु आत्मकथा एक दिग्दर्शक का काम करेगी।

गत तीन वर्षों में चीन में अनेक विशिष्ट और डॉक्यूमेन्टरी फिल्में तैयार की गई हैं और साथ ही, सोवियत संघ तथा अन्य जनवादी देशों की फिल्मों का रूपान्तर किया गया है। चीनी जनता के क्रान्तिकारी संघर्ष और शान्तिपूर्ण रचनात्मक आन्दोलनों द्वारा निर्मित, जन वीरों के जीवन की प्रेरणादायक झांकी तथा देशभक्ति और अन्तर्राष्ट्रीय भावना की उत्कृष्टता की कहानी इन फिल्मों में देखने को मिलती है। विशेष फिल्मों में 'सफ़ेद बालोंवाली कन्या,' 'पुत्रियां और पुत्र,' 'इस्पात के योद्धा,' 'नये वीर और वीरांगनायें,' 'मंगोलिया की जनता की विजय,' 'जनता के लड़ाके,' 'छुई कांग पर्वत पर लाल झण्डा' आदि, डॉक्युमेन्टरी फिल्मों में 'मुक्त चीन,' 'यांगत्से नदी का विजयी पथ,' 'उत्तर पश्चिम का विजयी गीत,' 'चीन के अल्पसंख्यकों की महान् एकता,' 'सुखी

सिंक्यांग,' 'तिब्बत की मुक्ति,' 'चीनी जनता की विजय,' 'अमरीकी आक्रमण का विरोध तथा कोरिया की सहायता' आदि फ़िल्में उल्लेखनीय हैं।

'सफ़ेद बालोंवाली कन्या' नये चीन की सर्वोत्कृष्ट फिल्म कही जा सकती है। कहा जाता है सन् १९३८ में हो पेइ (ह पै) के उत्तर पूर्व में किसी मुक्त इलाक़े में श्वेता कन्या की कहानी सुनी गई थी। उस समय लोगों का विश्वास था कि श्वेत कन्या नाम की कोई यक्षिणी सचमुच किसी मंदिर में रहती है। एक दिन किसी कार्यकर्ता के प्रयत्न से उसकी गुफ़ा का पता लगा और तबसे श्वेत कन्या के सम्बंध में अनेक रिपोर्ताज, कहानियां और कवितायें लिखी जाने लगीं। सन् १९४४ में यह कहानी येनान पहुंची, जहां चौ यांग की सहायता से लू शुन कला समिति के सदस्यों द्वारा नाटक की दृष्टि से इसमें आवश्यक परिवर्तन किये गये। श्वेत कन्या नाटक येनान में खेला गया और फिर इसमें यथोचित सुधार होते रहे।

कहानी में आदि से अन्त तक ज़बर्दस्त एकाग्रता होने से दर्शक मंत्रमुग्ध बैठा रहता है। इसमें नायक और नायिका दोनों के जीवन-संघर्ष का सशक्त चित्रण है। नायिका अधिक कष्ट आने पर भी दुखी जीवन से निराश नहीं होती; कोई न कोई मार्ग ढूंढ कर आगे बढ़ती है। कहानी में ज़मींदारों के शोषण में धर्म के सहायक होने का सुन्दर चित्रण किया गया है। ज़मींदार अपने पापों के प्रायश्चित के लिये देवी के मंदिर में जाता है। वह नायक के घर में आग लगवाकर भी उसे दैवी-प्रकोप ही सिद्ध करने की चेष्टा करता है। बौद्ध क्रिया-काण्ड को माननेवाली ज़मींदार की वृद्धा मां का भी सुन्दर चित्रण किया गया है। एक ओर जी-तोड़ मेहनत करने पर भी किसानों का सदा ऋण के भार से ग्रस्त रहना तथा निकृष्टतम और घोर अपमान का जीवन व्यतीत करने के लिये बाध्य होना। दूसरी ओर उनकी गाढ़ी कमाई पर ज़मींदारों का गुलछर्रे उड़ाना, डंडे के ज़ोर से उनसे क़र्ज़ वसूल करना, ज़बर्दस्ती अंगूठा लगवाना और बाप के शव पर से उसकी लड़की को अपनी रखैल बनाने के लिये घसीट कर लेजाना। ये सब दर्दनाक घटनायें किसी भी देश में सामंती समाज के प्रति विद्रोह की अग्नि प्रज्वलित करने के लिये पर्याप्त हैं। चीन के जंगल, खेत, पहाड़, गुफ़ायें, गांव और भेड़-बकरियों के प्राकृतिक मनमोहक दृश्य, देवी की उपासना के ढंग तथा गाने आदि भारतीय वातावरण उत्पन्न कर देते हैं। अन्त में, दुष्कर्म की पराजय होती है।

नायक और नायिका शोषण का नाश करके सुखी जीवन यापन करते हैं। 'सफ़ेद बालोंवाली कन्या' जनता की रचना कही जा सकती है, जिसमें हज़ारों वर्षों के सामन्ती शोषण की हृदयद्रावक कहानी चीन के किसान अश्रुपूर्ण नयनों से स्टेज पर देखते हैं। इस कहानी से वे सामाजिक चेतना प्राप्त करके आत्मशक्ति का दर्शन करते हैं। वस्तुतः यह उनकी विजय की, मुक्ति की कहानी है जो उनमें आत्मविश्वास और शौर्य का संचार करती है। सीधी-सादी लोक भाषा में लिखी हुई, यह कहानी अंतस्तल के गंभीर उद्वेगों को अभिव्यक्त करती है। इसीलिये, भूमि-सुधार के आन्दोलन को बढ़ाने में यह अत्यंत प्रेरणा-दायक सिद्ध हुई है। टैकनीक आदि की दृष्टि से भी यह फिल्म सर्वश्रेष्ठ है। आशा है भविष्य में चीन के कलाकार इस प्रकार की अन्य फिल्मों का निर्माण करेंगे।

'मुक्त चीन' एक प्रभावोत्पादक रंगीन फिल्म है। चीनी जनता के इतिहास, शोषण, युद्ध और उसकी वीरता का इतिहास है—इसी बात को इस फ़िल्म में कलात्मक ढंग से उपस्थित किया गया है। शंघाई आदि नगरों में चीनी जनता के शोषण पर कितनी अमरीकी और ब्रिटिश कम्पनियां खड़ी होगई थीं! कला-कौशल में महान् होने पर भी विदेशियों के इसी उत्पीड़न के कारण चीन की जनता पंगु बनी हुई थी तथा माओ त्से तुंग के नेतृत्व में भूमि-सुधार की योजना कार्यान्वित करने पर उसने किस प्रकार आगे क़दम बढ़ाया—इसके अनेक मार्मिक और सुन्दर दृश्य इस फिल्म में प्रदर्शित किये गये हैं। विदेशों में इस फिल्म ने प्रशंसा प्राप्त की है।

'पुत्र और पुत्रियां' नामक फिल्म में भी शोषण और वीरता की जोशीली कहानी है। यह फिल्म खुंग छ्वे और उनकी पत्नी व्वान छिंग द्वारा लिखित उपन्यास के आधार पर निर्मित की गई है। चीन के किसानों ने चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के झण्डे के नीचे संगठित होकर, जापानी आक्रमणकारियों तथा देशद्रोहियों के खिलाफ़ किस प्रकार जी-तोड़ युद्ध किया—इसकी लोमहर्षक कहानी इस फिल्म में देखने को मिलती है। अन्तर्राष्ट्रीय फिल्म महोत्सव पर इस फिल्म को भी पारितोषिक मिला है।

सानफ़ान् आन्दोलन सम्बंधी फिल्म की चर्चा ऊपर की जाचुकी है। जनता के सहयोग से किस प्रकार भ्रष्टाचार और रिश्वतखोरी को नष्ट किया गया—इसका इस फिल्म में सुन्दर चित्रण है। ह्वाई नदी का बांध २२ लाख

किसान और मजदूरों ने स्वेच्छापूर्वक दिन-रात परिश्रम करके किस प्रकार निर्माण किया तथा शंघाई के १०० से अधिक कारखाने किस प्रकार धड़ाधड़ माल का उत्पादन करने में लग गये—इन सब बातों का ह्वाई नदी की फ़िल्म में दिग्दर्शन कराया गया है। 'जब अंगूर पक कर तैयार होजाते हैं' फ़िल्म में अंगूरों के उत्पादन में सहकारी संस्थाओं का महत्व है। 'रेल का इंजिन चलाने वाली महिलायें' फिल्म में इंजिन चलाने वाली सफल महिलाओं की कार्यशीलता और देशभक्ति का दिग्दर्शन है। यह फ़िल्म थ्येन् क्वै यिंग नाम की प्रथम इंजिन ड्राइवर चीनी महिला की सच्ची कहानी पर आधारित है। 'शान्ति अमर हो' नामक फिल्म अभी हाल में बनकर तैयार हुई है। इस प्रकार, चीन में विभिन्न दृष्टियों से सर्वसाधारणोपयोगी फिल्मों के निर्माण द्वारा राष्ट्र के रचनात्मक कार्य को आगे बढ़ाया जारहा है।

'पीकिंग फिल्म स्टूडियो' के अतिरिक्त, शंघाई की कतिपय प्राइवेट कम्पनियां भी फिल्म बनाने का कार्य करती हैं। चीन में सिनेमा देखनेवालों की संख्या दिन पर दिन बढ़ रही है। इस समय देश में जितने सिनेमा दिखाये जाते हैं वे काफ़ी नहीं हैं, इसलिये और अधिक फिल्मों के निर्माण के साथ उन्हें कारखानों और दूर गांवों में पहुंचाने की भी एक योजना सरकार बना रही है। आशा है कि इस योजना के पूर्ण होजाने पर, चीन की सर्वसाधारण जनता के सांस्कृतिक स्तर में अधिक उन्नति हो सकेगी।

गीत और नृत्यकला

संगीत और नृत्य मानव संस्कृति का एक महत्वपूर्ण अंग है। मनुष्य के हृदय में जब भावों का उद्वेग होता है तो वह गा और नाच कर उनकी अभिव्यक्ति करता है, इसलिये साहित्य के समान संगीत और नृत्य का भी जीवन में महत्वपूर्ण स्थान है।

नये चीन में संगीत और नृत्य का विशेष प्रसार होरहा है। किसी त्यौहार या छुट्टी के दिन या संध्या समय सार्वजनिक स्थानों में जाइये, आपको नर-नारी स्वच्छंद भाव से नृत्य और गान करते हुए मिलेंगे। जनमुक्ति सेना के सिपाही, विद्यार्थी और बालक-बालिकायें अवकाश पाते ही अपना सुरीला राग छेड़ देते हैं और तन्मय होकर नृत्य करने लगते हैं। पूर्वकाल में विद्यार्थियों को नाचने-गाने का शौक़ नहीं था, किन्तु अब अवकाश के समय अपनी कक्षाओं में सामूहिक गान की स्फूर्तिदायक तान छेड़ना और कक्षाओं के बाहर बरामदों में नृत्य करने लगना—यह विद्यार्थियों की दिनचर्या होगई है।

पहले, चीन में पुराने परम्परागत गीत गाने का ही रिवाज था। उस समय क्रांतिकारी जनगीतों का एक प्रकार से अभाव था। परन्तु ४ मई, १९१९ के आन्दोलन के पश्चात जनता की क्रांतिकारी शक्तियों का विकास हुआ। प्रगतिशील बुद्धिजीवियों ने सर्वहारा वर्ग के क्रांतिकारी आन्दोलन में हाथ बंटाकर, प्रेरणादायक अनेक गीतों की रचना की। सन् १९२५-२७ के क्रांतिकारी गृह-युद्ध काल में श्रमजीवी और विद्यार्थी श्रमजीवियों का 'अन्तर्राष्ट्रीय गीत' गाकर मार्च किया करते थे। 'नौजवान अग्रणी', 'मज़दूर और किसान एक हों,' 'साम्राज्यवाद का नाश हो'—आदि गीत भी इसी समय प्रचलित थे।

परन्तु, क्वो मिंतांग सरकार की ओर से इन गीतों पर शीघ्र ही रोक लगा दी गई। इन्हीं दिनों स्वर्गीय न्येह अर् तथा लियू चि आदि गीतकारों ने शंघाई में गुप्त रूप से वामपक्षीय नाटककारों की परिषद के अन्तर्गत संगीत-विभाग की स्थापना की। श्रमजीवियों के घनिष्ट सम्पर्क में आने के कारण, इन गीतकारों को संगीत कला की आधुनिक टैकनीक का भी ज्ञान था, इसलिये ये कलाकार साम्राज्यवाद और सामन्तवाद के ख़िलाफ़ विद्रोह की भावना जागृत करनेवाले जन गीतों की रचना कर सके। सन् १९३२-३४ के बीच, सर्वहारा संगीत के अग्रणी न्येह अर् ने तीस से अधिक गीतों की रचना की और १९३२ में प्रसिद्ध नाट्यकार, गीतकार थ्येन हान् की रचना के आधार पर चीन के सुप्रसिद्ध 'चुंग ह्वा रन् मिन कुंग हो क्वो क्वो' नामक राष्ट्रीय गान को गीतबद्ध किया। जापानी आक्रमणकारियों के विरुद्ध बनाया हुआ, यह गीत उस समय 'इ युंग च्चिन् चिन् शिन् छिव' के नाम से प्रसिद्ध था:

"उठो तुम लोग, जो गुलाम बनने से इन्कार करते हो !

"आओ, हम अपने रक्त और मांस द्वारा एक नई महान् दीवार का निर्माण करें ।

"चीन राष्ट्र इस समय बड़े खतरे में है, हर तरफ़ से ज़ोर की आवाज़ आरही है— उठो ! उठो ! उठो ! लाखों की संख्या में, एक मन से, शत्रु की गोलियों का सामना करते हुए, आगे बढ़ो ! आगे बढ़ो ! आगे बढ़ो !"

क्वो मिंतांग सरकार द्वारा दमन किये जाने पर भी कारखानों, गांवों, स्कूलों और सड़कों पर इस गीत की मधुर तान सुनाई देती रही और जापान-विरोधी जनयुद्ध काल में यह गीत देश भर में लोकप्रिय होगया । १७ वर्षों बाद सन् १९४९ में, इस गीत को चीन का राष्ट्रीय गीत स्वीकार कर लिया गया ।

च्यांग काई शेक के चुंगकिंग को अपनी युद्ध-काल की राजधानी बनाने पर, जन-संगीत का केन्द्र येनान पहुँच गया, जहां हज़ारों की संख्या में चीन के देशभक्त कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में चीनी जनता को शोषण से मुक्त करने के लिये संगठित कर रहे थे । इस समय युद्ध-प्रतिरोध आन्दोलन सम्बंधी और मुक्त क्षेत्रों में नूतन जीवन के विकास सम्बंधी अनेक जन गीतों की रचना की गई । ये गीत जापान-विरोधी अड्डों और गुरिल्ला क्षेत्रों तक सर्वत्र फैल गये । आठवीं मार्गसेना और नई चौथी सेना के सिपाहियों ने इन गीतों को दूर-दूर तक फैला दिया । निसन्देह, ये गीत जनता के आत्मविश्वास को सुरक्षित रखने और शत्रु के विरुद्ध जनवादी संघर्ष ज़ारी रखने में बहुत अंश तक समर्थ हुए ।

तत्पश्चात, माओ त्से तुंग के येनान में दिये हुए भाषणों से प्रेरणा प्राप्त कर, संगीतज्ञों ने जन गीतों की रचना करनी आरम्भ करदी । इस काल में रचनात्मक साहित्य के साथ अनेक रचनात्मक गीत रचे गये । उत्तर शान्सी के प्रसिद्ध जन गीतों पर आधारित, आन पो द्वारा रचित 'भाई और बहिन बिना जोती हुई भूमि को जोत रहे हैं', लि यू चृ द्वारा रचित 'लाल सेना का प्रत्याक्रमण' और लि च्ये फू द्वारा रचित 'विजयोत्सव' नामक क्रांतिकारी जन गीतों का यही काल है । किसान क्रांति के प्रतिनिधि 'सफ़ेद बालोंवाली कन्या' के जनगीतों ने तो जन साधारण में एक नया युग ही

ला दिया है। शताब्दियों से उत्पीड़ित लाखों किसानों के सुर में सुर मिलाकर, यह कन्या अपनी व्यथा को इन शब्दों में व्यक्त करती है :

" असंख्य चिथड़े और अनगिनत धागे !
" मेरे अन्तस्तल में अनन्त व्यथा है।
" निर्धन क्यों दुख पाते हैं ?
" धनवान क्यों इतने निर्दय हैं ?
" मेरी व्यथायें समुद्र के समान गंभीर हैं
" और, उनका किसी ने प्रतिशोध नहीं लिया !
" चाहे समुद्र क्यों न सूख जाये,
" चट्टान क्यों न चकनाचूर होजाये
" मेरी इन व्यथाओं का अन्त अवश्य होगा। "

फिर वह कहती है :

" आज, सूर्य के प्रकाश में सब अपराधों का हिसाब-किताब कर दिया जायेगा !

" एक सहस्र वर्ष के अपराधों का प्रतिशोध अवश्य लिया जायेगा !"

इस काल के 'कम्युनिस्ट पार्टी के बिना नया चीन न होता', 'हम श्रमजीवी मज़बूत हैं,' 'कपास ओटने वाले' आदि गीत भी महत्वपूर्ण हैं।

इस प्रकार, चीन में जन-संघर्ष की वृद्धि होने और नये जीवन का संचार होने के साथ-साथ अनेक स्फूर्तिदायक सुन्दर जन गीतों की रचना हुई है। इसी समय लु शुन कला समिति के सदस्यों ने गांवों में घूम-घूम कर ३,००० से अधिक जन गीतों का संग्रह किया और उनमें आवश्यक परिवर्तन कर, उन्हें आधुनिक रूप देने की योजना बनाई। 'तुंग फांग हुंग' इसी तरह का जन गीत है, जो लि यौ व्वान और लि चुंग चंग नामक शान्सी के रहने वाले दो किसानों द्वारा माओ त्से तुंग की प्रशंसा में लिखा गया था। यह गीत आजकल चीन में अत्यन्त लोकप्रिय होगया है। सोवियत संघ, चैकोस्लोवाकिया और हंगरी आदि के कलाकार भी इस गीत को बड़ी शान के साथ गाते हैं।

ज्यों-ज्यों साम्राज्यवाद, सामंतवाद और नौकरशाही पूंजीवाद के खिलाफ़ मुक्ति-युद्ध नज़दीक आता गया, संगीत में भी एक जोशीला क्रांतिकारी युग आता गया। पन् यौ वे इ के 'आक्रमण' नामक गीत को देखिये :

"यदि तुम शान्ति-वार्ता नहीं करना चाहते, तो तुम मेरे क्रोध के भाजन बनोगे।

"क्या तुम भूल गये हो कि तुम्हारी नाक खूनी है?

"अच्छा, तो मुझे एक और बन्दूक लाकर दो!"

तथा 'हाय् हाय् का युद्ध' में :

"मत डरो कठिनाई से, न सर्दी से, न भूख से;

"पार करो पर्वतों को, जहां वे चढ़ गये हैं; पार करो दरियाओं को, जहां वे तैरते हैं।

"शत्रु का पीछा करो! विजय पथ पर बढ़े चलो!"

इसके बाद १ अक्तूबर, १९४९ को चीन में जनवाद की स्थापना होने पर जनता के गीतों में रचनात्मक कार्य, शान्तिमय जीवन और अन्तर्राष्ट्रीयता का स्वर सुनाई देने लगा। इस काल के 'वांग ता मा शान्ति चाहती हैं' तथा 'दुनिया की समस्त जनता का हृदय एक है' नामक गीत विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इसमें आनन्दमग्न हुई चीनी जनता की आवाज़ सुनिये :

"विजय पताका आकाश में फहरा रही है,

"लाखों की हर्षध्वनि पृथ्वी को कंपित कर रही है और पहाड़ियों को हिला रही है।

"माओ त्से तुंग! स्तालिन!—

"आकाश में देदीप्यमान सूर्य के समान हैं।

"सामने लाल ध्वजा फहरा रही है।

"सारी दुनिया की जनता एक महान् उद्देश्य की ओर बढ़ी चली जा रही है—

"जनता की लोकशाही के लिये, स्थायी शान्ति के लिये!

"सारी दुनिया की जनता के हृदयों में एक ही स्पन्दन सुनाई दे रहा है।"

* आज यह गीत चीन में अधिक लोकप्रिय होगया है। बर्लिन के तृतीय विश्व युवक उत्सव पर, इस गीत को द्वितीय पुरस्कार दिया गया था।

चीन की मुक्ति के पश्चात, किसानों को जमींदारों के शोषण से मुक्त करने के लिये देश भर में भूमि-सुधार आन्दोलन चलाया गया। उधर कोरिया में अमरीकी आक्रमण होने के कारण, स्वराष्ट्र रक्षा के निमित्त चीनी जनता को अपने स्वयंसेवकों को युद्ध के मोरचे पर भेजना पड़ा। इन विषयों को लेकर भी इस काल में अनेक गीतों की रचना हुई है। चीनी स्वयंसेवकों का गीत सुनिये :

> "गर्व और निर्भीकता से यालू नदी को पार करो! विश्व की शान्ति-रक्षा के लिये, अपनी मातृभूमि की रक्षा के लिये, अपने घरों की रक्षा के लिये, तुम चीन की सर्वश्रेष्ठ पुत्रियो और पुत्रो! एक होकर और एक मन से अमरीकी आक्रमणकारियों का प्रतिरोध करो। कोरियायी जनता की मदद करो और महत्वाकांक्षी अमरीकी भेड़ियों को पराजित करो।"

बचे हुये क्रांति-विरोधी तत्वों को दूर करने के लिये तथा अपनी मातृभूमि और पर्वत-श्रेणियों की प्रशंसा आदि के सम्बंध में भी अनेक प्रेरणादायक गीत इस काल में लिखे गये। केन्द्रीय नाटक परिषद नाट्य-विभाग के प्रमुख मा-ख चीन के एक प्रसिद्ध संगीतज्ञ हैं। उन्होंने 'हम श्रमजीवी मजबूत हैं' नामक एक गीत लिखा है, जो चीन के श्रमजीवियों में अत्यन्त लोकप्रिय है। 'हम जनवादी एक हैं' गीत पर द्वितीय विश्व नवयुवकों और विद्यार्थियों के उत्सव पर सन् १९४९ में बुडापेस्ट में पुरस्कार मिल चुका है। श्रमजीवियों ने मिलकर 'सीमेण्ट मज़दूरों के दस गुण' और 'योग्य तरीक़ों की खोज करो' आदि गीतों की रचना की है। 'हे ला ला ला' गीत भी चीन में बहुत प्रसिद्ध है। माओ त्से तुंग की प्रशंसा में सिंक्यांग प्रान्तवासी मुसलमानों ने वीवर भाषा में गीत बनाये हैं। संगीतज्ञों की राष्ट्रीय परिषद तथा जनगीतों की चीनी समिति ने इस दिशा में प्रशंसनीय कार्य किया है।

प्रेरणादायक रूसी गाने भी चीनी जनता में लोकप्रिय होरहे हैं। शान्तुंग प्रांत के 'ख्याय् पान्' का भी चीन में बहुत प्रचार है। इसमें गायक लकड़ी के दो टुकड़ों को बजाता हुआ अनवरुद्ध गति से जल्दी-जल्दी तुकबन्दी करता जाता है। यही इस गीत की विशेषता है।

संगीत के समान, नृत्यकला में भी पिछले वर्षों में काफ़ी उन्नति हुई है। यां को (यांग क) नृत्य, सिल्क (रेशम) नृत्य (हुंग छौ), किसान नृत्य (नुंग च्वो वू),

व्यजन नृत्य आदि कितने ही जन नृत्य चीन में प्रचलित हैं; जो चीनी जनता में उत्साह और आत्मविश्वास की भावना प्रसारित करते हैं। यां को १,००० वर्षों से भी अधिक प्राचीन नृत्य है। यह नृत्य फ़सल वोने के समय का है और रंग-विरंगे वस्त्रों से सज्जित होकर, कटि पर लटकी हुई ढोलकी बजाकर किया जाता है। इस नृत्य की रचना शान्सी प्रांत के किसानों द्वारा की गयी थी। इसका आशय है कि खेत में फ़सल बोई जारही है और उसे काटने के लिये किसान आशा लगाये हुए हैं। नृत्य द्वारा शक्ति, विश्वास और प्रसन्नता की अभिव्यक्ति होती है। सन् १९४२ में, येनान की लु शुन कला समिति के सदस्यों को इस नृत्य का पता लगा था और तबसे यह नृत्य चीन के प्रमुख जन नृत्यों में गिना जाने लगा है। सिल्क नृत्य भी चीन में अत्यन्त प्रसिद्ध है, जो लाल सिल्क के एक लम्बे वस्त्र के साथ किया जाता है। सन् १९५१ में, वर्लिन के युवक-उत्सव पर इसका प्रदर्शन किया गया था। किसान नृत्य अपने खेतों में काम करते हुए किसानों द्वारा किया जाता है। व्यजन नृत्य शान्तुंग प्रांत का एक जन नृत्य है, जिससे गाँवों के सुखी जीवन की अभिव्यक्ति होती है। इस नृत्य में एक युवती तितली पकड़ने का प्रयत्न करती है।

कारख़ानों के मज़दूर भी जन नृत्यों में भाग लेते हैं और अव वे अपने खुद के नृत्य भी बनाने लगे हैं। 'सीमेन्ट के सुखी मज़दूर' नामक नृत्य लियुलिह के सीमेण्ट कारख़ाने के मज़दूरों ने बनाया है।

चीन की मंगोल, म्याव्, वीवर, शान् आदि अल्पसंख्यक जातियों के नृत्य सबसे अधिक आकर्षक हैं। इन जातियों के स्त्री-पुरुष रंग-बिरंगी विविध प्रकार की वेश-भूषा धारण कर, हस्तपाद संचालन द्वारा सुन्दर नृत्य करते हैं; जो भारतीय नृत्यों के समान प्रतीत होते हैं। चीनी जनता इन नृत्यों को बहुत पसंद करती है। दक्षिण पश्चिम की म्याव् आदि जातियां चार ऋतुओं का नृत्य, मित्रता का नृत्य, चन्द्र नृत्य आदि करती हैं। चन्द्र नृत्य प्रेम का प्रसिद्ध नृत्य है। सिंक्यांग की महिलायें अपनी नृत्य कला के लिये विशेष रूप से प्रख्यात हैं। अन्तर्मंगोलिया के कृपाण नृत्य से जनमुक्ति सेना के सिपाहियों की शक्ति, उत्साह और शूरता का प्रदर्शन होता है। इस जाति का दूसरा नृत्य जंगली हंस का नृत्य है, जिसके द्वारा मुक्ति-संघर्ष अभिव्यक्त किया गया है; हंस शान्ति का प्रतीक है। उत्तर-पूर्व की कोरियायी जाति 'कपड़ा धोना,' 'चावल कूटना' आदि जन नृत्यों के लिये प्रसिद्ध है। सिंक्यांग प्रान्त

के एक नृत्य का भाव देखिये : हम लाल झण्डे के नीचे मिलकर नृत्य करते हैं और वसंत का स्वागत करते हैं। हम सब मिलकर प्रसन्नता से नाचते हैं। सूर्य प्रकाशित होता है और अंधकार विलीन होजाता है। माओ त्से तुंग ने हमें सुख और प्रकाश प्रदान किया है।

'लाल तारे का नृत्य' चीन का एक दूसरा जन नृत्य है। इसमें अल्प-संख्यक जातियां भी नृत्य करती हैं। पहले, बालक और बालिकायें दीपयुक्त तारों को लेकर नृत्य करती हैं। इनके साथ पाँच या छ अल्पसंख्यक जातियों के नर्तक एक-एक करके नाचते हैं। इन नर्तकों की पोशाक तथा नृत्य के ढंग अलग-अलग होते हैं। फिर, सबके सब एक साथ मिलकर नृत्य करते हैं और नृत्य द्वारा अपने तारों को राष्ट्रीय झण्डे पर निर्मित तारिकाओं का रूप देकर नृत्य समाप्त करते हैं। थ्येन् आन् मन् मैदान को पृष्ठभूमि बनाकर यह नृत्य किया जाता है।

राष्ट्रीय नृत्यों के समान, अन्तर्राष्ट्रीय नृत्यों में भी चीनी जनता काफ़ी रस लेती है। कोरिया, हंगरी, चैकोस्लोवाकिया, सोवियत संघ आदि के कलाकारों के नृत्य चीन में विशेष अवसरों पर दिखाये जाते हैं। शनिवार के दिन विद्यार्थी युवक नृत्य (बॉलरूम डान्स) करते हैं।

अखिल चीन नर्तक समिति के अध्यक्ष वू श्याओ पांग तथा चीन की प्रसिद्ध नर्तकी ताय् आय् ल्येन्—दोनों आधुनिक चीनी नृत्य आन्दोलन के प्रणेता माने जाते हैं। इन्होंने चीनी जनता की क्रान्तिकारी भावना को अभिव्यक्त करनेवाली नृत्य कला को एक अभिनव रूप दिया है। इनके साथ, कोरिया की प्रसिद्ध नर्तकी चोइ सुंग ही भी काम करती हैं। 'शान्ति कपोत', 'कोरियायी जनता की विजय' आदि इनके नृत्य अत्यन्त लोकप्रिय हुए हैं। ताय् सिल्क नृत्य के अभिनय में भी अत्यन्त कुशल हैं। आजकल चीन में लगभग १३४ नर्तकों की पार्टियां और १,००८ नर्तक-नर्तकियां हैं, जिनके अनेक दल गांवों आदि में घूम-घूम कर लोक नृत्यों का प्रदर्शन करते हैं।

चीनी नूतनवर्ष के अवसर पर ताय् आय् ल्येन्, ल्यांग हान् क्वांग आदि गीत, नृत्य और नाट्यकला के अनेक विशेषज्ञों को सांस्कृतिक मंत्रिमण्डल की ओर से स्थानीय जन कला का अध्ययन करने के लिये चीन के भिन्न-भिन्न स्थानों में भेजा गया है। इससे मालूम होता है कि चीन की मौजूदा सरकार अपनी संगीत और नृत्य कला का विकास करने के लिये कितनी सतर्क है।
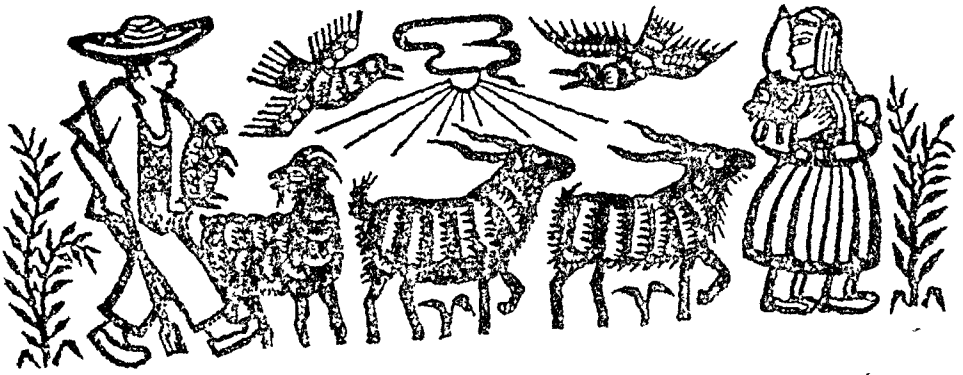
चित्रकला

मनुष्य की कल्पनात्मक रचनाओं में चित्र विद्या का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। चीनी लिपि एक प्रकार की चित्रकला ही है इसलिये, पुराने ज़माने में कलाकार का मतलब कवि और चित्रकार दोनों ही होता था। सुन्दर अक्षरों का लेखक चित्रकार माना जाता था। उस समय सुन्दर चित्र विद्या, सुन्दर काव्य रचना और सुन्दर हस्तलिपि की गणना तीन सौन्दर्यों में की जाती थी। उस काल के कवि और चित्रकार कल्पनाप्रधान होते थे। चीनी चित्रकला का अध्ययन करने के लिये चीनी जनता के निकट सम्पर्क में आना, उसके प्राचीन और अर्वाचीन इतिहास का अध्ययन करना तथा पर्वतों, नदियों, जंगलों और खेतों का निरीक्षण करने के लिये चीन का परिभ्रमण करना आवश्यक है, इसके बिना चित्रकला का रसास्वादन नहीं किया जा सकता।

चीन में चित्र विद्या का विकास हान् राजाओं के काल (२०६ ई. पू.—२१९ ई.) से आरंभ होता है। इस समय राजा लोग अपने प्रासादों को नाना प्रकार की चित्रकारी से सुशोभित किया करते थे। इन चित्रों में प्राचीन सम्राट तथा धर्मात्मा मंत्रियों आदि के चित्र रहते थे, जो तत्कालीन शासकों के लिए आदर्श माने जाते थे। युद्ध, उपहार-प्रेषक, गौरांगनायें तथा पौराणिक चित्रों की इस काल में प्रधानता थी। विद्वान लोग ही प्रायः चित्रकार होते

थे। ताव् धर्म ने चित्रकला को प्रभावित किया था और बौद्ध कला का उसमें प्रवेश होरहा था।

वेइ आदि छ राजवंशों का काल (२२०-५८८ ई०) युद्धों और षड्यंत्रों का काल था। इस काल में लाव् च् और बुद्ध शान्ति के अवतार माने जाते थे। लाव् च् के अनुयायी दुखों से छुटकारा पाने के लिये प्रकृति-उपासना को मुख्य मानते थे, जबकि बौद्ध धर्मानुयायियों का लक्ष्य त्याग, वैराग्य और निर्वाण था। ऐसी दशा में, ऐतिहासिक विषयों के स्थान पर मंदिरों की भित्तियां महान् पुरुषों की ध्वजाओं से चित्रित की जाने लगीं। ध्यानमुद्रा में अवस्थित बुद्ध के विविध चित्र आंके जाने लगे। कु खाय् चृ इस काल का सर्वप्रसिद्ध चित्रकार माना जाता है, जिसने चित्रकला में पर्वत और नदियों के प्राकृतिक चित्रण (पान् ष्वे) और मनुष्य की आकृति बनाने में कुशलता प्राप्त की थी। चुंग पिन् नामक चित्रकार ताव् धर्मानुयायी था और अपना बहुत सा समय उसने पर्वतों की एकान्त कन्दराओं में व्यतीत किया था। वह कागज़ और सिल्क पर हवा, जल, बादल आदि के दृश्यों का सुन्दर चित्रण करता था।

सुइ काल (५८९-६१९ई०) में चित्रकला में यही धार्मिक परम्परा जारी रही। भित्ति-चित्रों का निर्माण होता रहा और बौद्ध भिक्षुओं द्वारा भारत से लाये हुए अनेक चित्रों की नकल होने लगी। सम्राट यांग इस काल का एक प्रसिद्ध चित्रकार था। उसने अनेक राजभवनों का निर्माण करवा कर, उन्हें सुंदर चित्रों से सज्जित किया था। प्राचीन तथा आधुनिक कला पर उसने अनेक पुस्तकें लिखी हैं। इस समय चीनी कलाकारों का ध्यान अपने देश के प्राकृतिक दृश्यों की ओर आकर्षित होरहा था।

थांग राजाओं के काल में (६१८-९०५ई०) चित्रकला का व्यवस्थित रूप से विकास हुआ। येन् लि त और येन् लि पन् इस काल के मनुष्य आकृति के कुशल चित्रकार माने जाते हैं। सम्राट श्वान् चुंग के काल में ब्रश द्वारा चित्र बनाने की नयी पद्धति को स्वीकार किया गया। श्वान् चुंग स्वयं एक चित्रकार था, जो रात्रि के समय चन्द्र की चन्द्रिका में सिल्क पर प्रतिबिम्बित वंश के चित्रण का अभ्यास किया करता था। उसने वंश-चित्रण की अनेक रेखाओं का आविष्कार किया था। वू ताव् च् थांग काल का एक सुप्रसिद्ध चित्रकार था, जो करुणा की देवी क्वान् यिन् (बौद्ध धर्म का अवलोकितेश्वर) के सुन्दर चित्र का चितेरा कहा जाता है। बुद्ध की निर्वाण प्राप्ति का प्रसिद्ध चित्र

भी इसी चित्रकार द्वारा माना जाता है; जिसमें भिक्षुगण छाती पीटकर रुदन करते हुए और जंगल के पशु-पक्षी दुख से लोट-पोट होते हुए दिखाये गये हैं। चू लाव् च् ने पर्वत और नदी के प्राकृतिक दृश्यों के चित्रण में भी सुधार किया है। वांग वेइ दक्षिणी विचारधारा का संस्थापक माना जाता है। उसे दुनिया के शोरगुल से दूर, पर्वतों का शान्त वातावरण बहुत प्रिय था। उसने स्याही और पानी के उपयोग से चित्र विद्या को एक नया रूप दिया था। हान् कान् ने घोड़ों की चित्रकारी में कुशलता प्राप्त की थी। उसने बोधिसत्वों के अनेक चित्रों की भी रचना की है। हान् कान् की चित्रकला का जापानी चित्रकला पर काफ़ी प्रभाव पड़ा है। वस्तुतः, इस काल में पारस्परिक चर्चा और आलोचना आदि के कारण चित्रकला का पर्याप्त विकास हुआ, जिससे कलाकार पुरातन परंपराओं से अपना सम्बंध विछिन्न कर अपने ब्रश को स्वच्छंदतापूर्वक चलाने लगे।

यहां तुन् ह्वांग की सहस्रबुद्ध गुफ़ाओं का उल्लेख करना भी आवश्य है। ये गुफ़ायें कान् सू प्रान्त के पश्चिमी भाग में तुन ह्वांग नगर के दक्षिण-पश्चिम में अवस्थित हैं। तुन् ह्वांग हान् काल से लगाकर थांग राजवंशों के काल तक व्यापार और संस्कृति का केन्द्र रहा है। सर्वप्रथम सन् ३६६ में, यहां एक साधु द्वारा कतिपय गुफ़ाओं का निर्माण हुआ था। य्वान् राजवंशों के काल तक इन गुफाओं का निर्माण होता रहा और इनकी संख्या १,००० तक पहुंच गई थी। इन गुफ़ाओं की भित्तियों और छतों पर इतने अधिक चित्र निर्मित हैं कि यदि इन्हें एक जगह बिछा दिया जाय, तो ये १५ मील तक फैल जायें। यहां की चित्रकला पर भारतीय चित्रकला का प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। इन गुफ़ाओं में दसियों हज़ार बुद्धों की मूर्तियां हैं। गुफ़ाओं के बाहर मंदिरों में अनेक धार्मिक पुस्तकें तथा ध्वजायें आदि मौजूद हैं। यहां की अनेक गुफ़ायें और मंदिर नष्ट होचुके हैं। चीन की मुक्ति के बाद, तुन् ह्वांग संशोधक मण्डल की सहायता से केवल ४७० गुफ़ाओं का पता चल सका। सन् १९०० में यहां रहने वाले ताव् धर्मानुयायी एक साधु को एक बन्द गुफा मिली, जिसमें अनेक पुस्तकें, बुद्ध-मूर्तियां तथा सिल्क और काष्ठ पर निर्मित अनेक चित्र आदि थे। इस संग्रह में उत्तरीय वेइ काल (३८६-५३५ ई०) से लगाकर उत्तरीय सुंग काल (लगभग ९९५ ई.) तक की विविध प्रकार की बहुमूल्य सामग्री मौजूद थी, तथा अनेक पुस्तकें

तिव्वती, संस्कृत आदि भाषाओं में लिखी हुई थीं। परन्तु, इस साधु ने इस संग्रह की बहुत सी चीज़ों को अनेक राजकर्मचारियों और धनिकों को लुटा दिया था। बहुत सी अत्यन्त मूल्यवान सामग्री औरल स्टाइन, पैलिओट, वारनर आदि विदेशी और जापानी उठा कर ले गये।

पांच राजवंशों के काल (९०५–९६० ई०) में पुष्प, पक्षी तथा प्राकृतिक दृश्यों की लोकप्रियता बहुत बढ़ी थी। इस समय चिंग हाव् और क्वान् थुंग ने नये ढंग से प्राकृतिक दृश्यों को चित्रण करने में कुशलता प्राप्त की। शू शि और ह्वांग छ्वान् इस काल के दो भिन्न शैलियों के जन्मदाता प्रसिद्ध चित्रकार माने जाते हैं। शू शि ने वंश, पुष्प, वृक्ष, तितली आदि के सुन्दर चित्रों का निर्माण किया तथा ह्वांग छ्वान् ने वंश, पक्षी, चट्टान तथा ऋतुओं के दृश्य अंकित किये। इस काल में, मंदिरों की भित्तियों पर धार्मिक विषयों के साथ-साथ मनुष्य जीवन की कहानियां तथा प्राकृतिक दृश्यों का भी चित्रण होने लगा था।

सुंग काल (९६०-१२७६ ई०) में आकृति और धार्मिक विषयों के स्थान पर प्राकृतिक दृश्यों और खासकर पक्षी और पुष्पों की चित्र-रचना में उन्नति हुई। सम्राट हुई चुंग स्वयं पुष्पों और पक्षियों के पंखों का एक प्रसिद्ध चित्रकार था। लि लुंग म्येन् अपने किसी साथी के साथ एकांत पर्वत या जंगल में जाकर समय व्यतीत किया करता था। हान् कान् की भांति, उसने भी घोड़ों तथा भिन्न-भिन्न मुद्राओं वाले अनेक लोहानों (अर्हतों) के सुन्दर चित्र बनाये हैं। चीनी चित्रकला में नयी शैली का जन्मदाता मा य्वान् प्राकृतिक दृश्य, मनुष्य आकृति तथा पुष्प और पक्षियों का सुन्दर चित्रकार माना जाता है। अपने तीन धर्म नामक चित्र में उसने लाओ त्स, बुद्ध और कनफ्यूशियस को साथ-साथ चित्रित किया है। इस समय एक ओर पूर्वी टर्की, ईरान, भारत, जापान और कोरिया के साथ चीन के व्यापारिक सम्बंधों में उन्नति होने से इन देशों से अनेक चित्र आदि चीन में पहुंच रहे थे और दूसरी ओर कोरिया और जापान के चित्रकार चीनी चित्रकला से आकर्षित होकर, चित्रकला की शिक्षा प्राप्त करने के लिये चीन में आरहे थे।

य्वान् राजवंशों के काल (१२७७–१३६७ ई०) में चित्र विद्या का विशेष विकास नहीं हुआ। इस काल में काव् ख कुंग वंश-चित्रण, ह्वांग कुंग

वांग पर्वत आदि प्राकृतिक दृश्यों तथा च्याव् मंग फू घोड़ों के सफल चित्रकार माने जाते हैं।

मिंग राजाओं के काल में (१३६८-१४६३ ई०) प्रायः चित्रकला की पुरानी ही पद्धतियों का अनुकरण किया गया। इस काल में षंग च् चाव् प्राकृतिक दृश्य, मानवी आकृति, पुष्प तथा पक्षियों के और लिन् ल्यांग पुष्प, फल तथा पक्षियों के सुन्दर चित्रकार माने जाते थे। मिंग राजाओं का अन्तिम काल लड़ाइयों का काल था, इसलिये इस समय चीन के अनेक कलाकार जापान में जाकर रहने लगे; जिससे जापान की चित्रकला चीनी चित्रकला से बहुत अंशों में प्रभावित हुई। मंचु राजवंशों (१६४४-१९११ ई०) के चित्रकारों ने भी प्रायः पुरातन काल के चित्रकारों का ही अनुकरण किया है। इसलिये, इस काल में चित्रकला में विशेष उन्नति नहीं हुई।

चित्रकला के उपर्युक्त संक्षिप्त इतिहास से पता लगता है कि सामन्ती युग में चित्रकला कतिपय विद्वान चित्रकारों तक सीमित रहने के कारण सामन्तों और धनिकों के भोग का साधन बनी हुई थी, इसीलिये इस युग में सर्वसाधारण के जीवन का चित्रण नहीं हुआ, वरन् किसी सम्राट, कवि, धर्म-संस्थापक या दानी आदि का ही चित्रण होता था। परन्तु नये चीन में साहित्य, नाटक, संगीत आदि के समान, चित्रकारी को भी जनोपयोगी बनाने की चेष्टा की जारही है। आजकल चीन में भोग-विलास या कल्पनाप्रधान चित्रों की अपेक्षा जन-संघर्ष, जनता की सहनशीलता और उसकी विजय के द्योतक यथार्थवादी चित्रों की मांग बहुत बढ़ गई है। इस मांग को पूरी करने के लिये, बड़े कैलेण्डर के आकार के चित्र और चित्रमय कहानियों आदि का बहुत बड़ी संख्या में प्रकाशन होरहा है। इन चित्रों में ऐतिहासिक और आधुनिक काल के जन वीरों, मजदूरों, किसानों, बालकों और स्त्रियों के साधारण जीवन के चित्रण की प्रधानता रहती है। खासकर नये वर्ष पर इस प्रकार के मनोरंजक और शिक्षाप्रद चित्र करोड़ों की संख्या में बिकते हैं।

इसके सिवाय, काष्ठ-चित्र और कागज़ को काटकर चित्र बनाने की जनकला में भी बहुत उन्नति होरही है। पेपर कट की कला कई सौ वर्ष पुरानी है। चीन की स्त्रियां कैंची या किसी दुधारे तेज़ चाकू से कागज़ को काटकर उसके चित्र बना कर, उन्हें खिड़कियों, दरवाजों और दीवारों पर

चिपकाती हैं। दैनिक जीवन से सम्बंध रखनेवाले पशु, पक्षी, फूल, पौधे तथा कहानियों आदि के चित्र काग़ज़ पर बनाये जाते हैं।

पीकिंग के प्रसिद्ध वयोवृद्ध चित्रकार छी पाय् ष्ट को चीनी चित्रकला की यथार्थवादी परम्परा का प्रतिनिधि माना जाता है। 'क्लासिकल' परम्परा का आधार लेते हुए भी, आपकी चित्रकला कुलीन विद्वान चित्रकारों के सीमित विषय और उनके खास शैलीगत चित्रण से भिन्न है। आपके चित्रों में सादगी, यथार्थता और प्रगाढ़ मानवी भावना रहती है; इसलिये आप जनता के कलाकार कहे जाते हैं। गत दो वर्षों से शान्ति कपोत आपकी कला का मुख्य विषय रहा है। पीकिंग की शान्ति परिषद के अवसर पर, 'अमर शान्ति' नामक आपका बृहदाकार चित्र प्रदर्शित किया गया था। जनवरी सन् १९५३ को सांस्कृतिक मंत्रिमण्डल की ओर से छी पाय् ष्ट की ९३ वीं वर्षगांठ मनाई गई है।

चू चो रन् चीन के दूसरे प्रगतिशील चित्रकार हैं। आपने विदेशों में रहकर चित्रकला का अध्ययन किया है। आपके अनेक चित्र मॉस्को, प्राग, लंदन, पेरिस आदि की प्रदर्शनियों में दिखाये जाचुके हैं। आपने अभी कुछ दिन पूर्व सिंक्यांग प्रान्त के जनजीवन के कतिपय चित्र प्रकाशित किये हैं। घोड़ों के प्रसिद्ध चित्रकार श्यु पै हुंग की गणना भी चीन के आधुनिक चित्रकारों में की जाती है। आप अखिल चीन कलाकार परिषद और केन्द्रीय ललित कला समिति के अध्यक्ष हैं।

चीनी चित्रकला की परम्परा अत्यन्त समृद्ध है और चीन के आधुनिक चित्रकार इसका अध्ययन करने में व्यस्त हैं। पीकिंग की ललित कलाओं की केन्द्रीय संस्था इस ओर विशेष रूप से प्रयत्नशील है। चीनी चित्रकारों को अपनी पुरानी कला को नूतन रूप देने में कहां तक सफलता मिली है, इस सम्बंध में अभी कुछ कहना कठिन है। भविष्य में इस कला का रूप निखरने पर ही कोई निश्चित मत क़ायम किया जा सकेगा।

भूमि-सुधार आन्दोलन

चीन का भूमि-सुधार आन्दोलन संसार की एक महान् घटना है। पिछले २,५०० वर्षों से गुलामी और अपमान का जीवन व्यतीत करनेवाले करोड़ों किसान सामन्ती शोषण से मुक्त होगये हैं। गांवों में ज़मींदारों की आबादी १०% से कम होने पर भी, वे ७०-८०% खेती के योग्य ज़मीन के मालिक थे; ज़बकि गांवों के ९०% किसानों के पास कुल २०-३०% ही ज़मीन थी। किसानों को अपनी फ़सल का ५०-८०% ज़मींदारों को लगान के रूप में दे देना पड़ता था। किसानों को जो दुख-दारिद्र और कष्टमय जीवन बिताना पड़ता था, उसकी झांकी चीन के एक वृद्ध किसान के इस गीत से मिल सकती है :

"ग़रीबों के सिर पर,
"लटक रही हैं भारी तलवारें तीन,
"भारी लगान, भारी ब्याज और भारी पेशगी की रक़म।
"ग़रीबों के सामने
"हैं केवल मार्ग तीन;
"दुष्काल से भागना, नदी में डूब कर मरना
"या जेल में सड़ते रहना।"

सामंती समाज में ज़मीदार और किसान दो वर्ग थे। ज़मीदार शोषक था, जो किसानों का शोषण और उत्पीड़न करके समाज की राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक प्रगति में बाधा उपस्थित करता था। गांवों में ज़मींदारों की संख्या अत्यन्त कम थी। ज़मींदार स्वयं खेती न करके, दूसरों से खेती करवाता और किसानों को जोतने के लिये दी हुई ज़मीन से अधिक से अधिक लगान वसूल करता था। वह किसानों से ब्याज-बट्टा खाता और अनाज एकत्रित करके, अधिक क़ीमत पर बेचता था। किसान चार श्रेणियों में बंटे हुए थे—सम्पन्न किसान, मध्यम किसान, ग़रीब किसान और दूसरों के खेतों में मज़दूरी करने

प्रचार कार्य

वाले खेतिहर। सम्पन्न किसानों की आबादी ५% से अधिक नहीं थी, इनके पास ज़मीन और हल आदि पर्याप्त मात्रा में थे। ये लोग अपने खेतों में स्वयं काम करते और दूसरों से भी काम कराते थे। बहुत से किसान अपनी ज़मीन दूसरों को लगान पर दे देते और ब्याज-बट्टे का भी धंधा करते थे। ये औसतन १०% खेती के योग्य ज़मीन के मालिक थे। मध्यम किसान अपनी खेती-बारी स्वयं करते थे। उनका गुज़ारा किसी तरह चल जाता और अपना श्रम बेचने के लिये बाध्य नहीं होना पड़ता था, यद्यपि ज़मींदारों और ऊंचे पूंजीपति वर्ग द्वारा उनका भी शोषण किया जाता था। लेकिन, ग़रीब किसानों की हालत अत्यन्त ख़राब थी। उनके पास प्रायः थोड़ी सी ज़मीन थी और हल वगैरह नहीं थे। कुछ इधर-उधर का काम करके, वे अपने पेट भरने का प्रयत्न करते, किन्तु फिर भी उन्हें आधे पेट रहना पड़ता और लगान, कर्ज़ तथा ब्याज के भार से हमेशा दबे रहते थे। कहने को तो बहुत से किसानों से उनकी फ़सल का ४०-५०% लगान ही वसूल किया जाता, लेकिन वास्तव में उन्हें ६०-७०% देना पड़ता था। हर किसान को अपनी सालभर की सारी फ़सल की क़ीमत पेशगी चुकानी पड़ती और पेशगी न देने पर, इस रक़म पर ७५% ब्याज वसूल किया जाता था। ग़रीब किसानों से भी दयनीय दशा खेतिहरों की थी। इनके पास ज़मीन नहीं थी और दूसरों के खेतों में काम करके इन्हें अपना निर्वाह करना पड़ता था। ये लोग सुबह से शाम तक जानवरों की भांति पिले रहते और अपने मालिकों के क्रूर दमन का शिकार बनते थे। ज़रा सी बात पर भी, मालिक इनकी तनख़्वाह काट लेता और उन्हें अधिक क़ीमत पर अनाज बेचता। वह अपनी होशियारी से अपने खेतिहर की खुराक आदि काट कर, साल भर के अन्त में उसे कुछ भी न देता था।

दो हज़ार वर्षों से भी अधिक काल से किसान ज़मींदारों के इस क्रूर दमन के विरुद्ध संघर्ष करते आये हैं। २०९ ईसवी पूर्व में, किसानों ने ज़मींदारों के विरुद्ध विद्रोह किया और १९ वीं शताब्दी के ताइपिंग (थाय् फिंग) विद्रोह तक इस प्रकार के अनेक विद्रोह होते रहे: जिससे तत्कालीन सामन्ती समाज पर करारे प्रहार हुए। इससे समाज की उत्पादन-शक्ति के विकास में कुछ उन्नति भी हुई। परन्तु, कुशल नेतृत्व के अभाव में ये आन्दोलन सफल न होसके। साम्राज्यवादियों का बल पाकर, सामन्तवादियों ने निर्धन जनता पर अपने नियंत्रणों को और अधिक कस दिया। सामन्ती आर्थिक सम्बंध तथा

सामन्ती राजनीतिक व्यवस्था बुनियादी रूप में वही बनी रही। सन् १९२७ के बाद क्वो मिंतांग के शासन-काल में, लगान घटाने की बात होती रही, परन्तु लगान हमेशा बढ़ता ही गया। सन् १९३७-४५ में मुद्रा-स्फीति के कारण, च्यांग काई शेक ने रुपये के बजाय माल के रूप में लगान इकट्ठा करना शुरू किया। ज़मींदारों ने भी इसी पद्धति का अनुसरण किया। ग़रीब और खेतिहर किसानों की स्थिति और भी भयंकर होगई।

आज से ३० वर्षों पहले ही, माओ त्से तुंग इस बात को भली भांति समझ गये थे कि जब तक भूमिरहित किसानों की भूख शान्त नहीं की जाती, तब तक चीन का पुनःसंगठन और पुनरुत्थान होना असंभव है। माओ त्से तुंग की इसी विचारधारा का अनुसरण करके, चीनी कम्यूनिस्ट पार्टी ने भूमि की हालतों को बदलकर ग़रीब किसानों और खेतिहर मज़दूरों की मांगों को पूरा करने के लिये संघर्ष किया। च्यांग काई शेक की नीति के विरुद्ध, कम्युनिस्ट पार्टी ने भूमि-सुधार की नीति अपनाई और मुक्त क्षेत्रों में लगान और ब्याज में भारी कमी करदी गई। कुछ स्थानों पर जापान के साथ मिलकर काम करनेवाले देशद्रोहियों की भूमि को भूमिरहित किसानों में वितरित कर दिया गया, जिसके फलस्वरूप इन क्षेत्रों का उत्पादन बढ़ गया। यह भूमि-सुधार की नीति का ही परिणाम था कि जनमुक्ति सेना की संख्या बढ़ने लगी और इस सेना ने जापानियों को पराजित करके उत्तर, उत्तर-पूर्व, उत्तर-पश्चिम और मध्य चीन के इलाक़ों को मुक्त कर दिया। परन्तु जापानी युद्ध समाप्त होते ही, चीन की जनता को अमरीकी साम्राज्यवादियों के पद-चिह्नों का अनुसरण करनेवाले, च्यांग काई शेक के साथ लोहा लेना पड़ा। मई सन् १९४६ में, चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने लगान और ब्याज कम करने की नीति के स्थान पर, ज़मींदारों की भूमि ज़ब्त करके उसे किसानों में बांट देने की नीति को अपनाया। इससे उत्तर-पूर्व और शान्तुंग प्रान्त में भूमि-सुधार के आन्दोलन ने ज़ोर पकड़ा। चीन में जनवादी सरकार की स्थापना होने के आठ महीनों बाद, जून सन् १९५० में केन्द्रीय सरकार ने भूमि-सुधार क़ानून पास कर दिया और देहातों में किसानों की श्रेणियाँ निर्धारित कर दी गई। इससे सदियों से सामंती शोषण के शिकार बने हुये किसानों ने अपने गुलामी के जीवन से मुक्ति पाकर, पहली बार सुख की सांस ली।

चीन के छ क्षेत्रों में से सबसे पहले उत्तर-पूर्व और उत्तर में भूमि-सुधार का कार्य सम्पन्न हुआ। भूमि-सुधार सम्बंधी क़ानून पास होजाने पर भी उत्तर-पश्चिम, मध्य. दक्षिण और पूर्व के कई इलाक़ों में भूमि-सुधार का कार्य आरंभ नहीं हुआ था। इन क्षेत्रों में यह सुधार धीरे-धीरे और बड़ी शान्तिपूर्ण हालतों में हुआ। आरंभ में कुछ गांवों को ट्रेनिंग के लिए चुना गया। जनवरी-मार्च सन् १९५१ में समस्त कार्यक्रम अच्छी तरह चलने लगा और मई तक भूमि-वितरण का कार्य समाप्त होगया। दक्षिण-पश्चिमी इलाक़े में पहले लगान और ब्याज को कम करने की नीति निर्धारित की गई थी, लेकिन आगे चलकर अनुकूल परिस्थितियां होने से मार्च सन् १९५१ में ही इस इलाक़े की ६२% भूमि को ७०% किसानों में बांट दिया गया।

चीन का भूमि-सुधार आन्दोलन सामन्तवादी शोषण के विरुद्ध भयंकर तथा अंतिम युद्ध था। यह आन्दोलन किसान वर्ग का आन्दोलन था, जो ज़मींदार वर्ग को ख़तम करके उसकी ज़मीन पर अपना अधिकार करने के लिये चलाया गया था। इसमें संदेह नहीं कि भूमि-सुधार का यह देशव्यापी आन्दोलन अत्यंत व्यवस्थित और मनोवैज्ञानिक ढंग से सम्पन्न किया गया है, जिससे चीनी नेताओं की अद्भुत कुशलता का परिचय मिलता है। इस आन्दोलन में, ऐसे उदाहरण मुश्किल से मिलेंगे जब जनता ने मिलकर ज़मींदारों के घर लूट लिये हों, उनके मकान जला डाले हों, उनका गल्ला नष्ट कर दिया हो या उनके बाग़-बग़ीचे काट डाले हों। यद्यपि ज़मींदारों के अत्याचार मानवी सीमा का उल्लंघन कर गये थे और किसानों की बहू-बेटियां तक उनके क्रूर अत्याचारों से नहीं बची थीं। हां, अत्यंत निर्दय और अस्त्र-शस्त्रों की सहायता से आन्दोलन का दमन करने के लिये कटिबद्ध ज़मींदारों को जनता की अदालतों द्वारा कठोर दण्ड जरूर दिया गया। साधारणतया, ज़मींदारों ने अपनी माल-मिलकियत को किसान सभाओं में साफ़-साफ़ ज़ाहिर करने में ही अपना हित समझा। ऐसी हालत में किसानों और ज़मींदारों में ख़ासकर ज़मींदारों के अत्याचारों की दृष्टि से, जितने तीव्र संघर्ष की आशा की जानी चाहिये थी उतना नहीं हुआ। माओ त्से तुंग का आदेश था कि लोगों के साथ साधारणतया नरमी का बर्ताव किया जाये और बेसमझे-बूझे हिंसा न की जाये। वस्तुतः, किसानों की ज़मींदार-विरोधी मनोवृत्ति व्यक्तिगत प्रतिशोध की अपेक्षा सामूहिक प्रतिशोध के रूप में ही अधिक उद्भूत हुई थी।

जनता की राजनीतिक सलाह-मशविरा देने वाली परिषद की अखिल चीन कमिटी के अधिवेशन के अवसर पर, जून सन् १९५० को ल्यू शाओ ची ने जनवादी सरकार की नीति निर्धारित करते हुए, निम्नलिखित घोषणा की थी: "आनेवाले भूमि-सुधार के सम्बंध में हमारी कार्यप्रणाली ग़रीब किसानों और खेतों में मज़दूरी करनेवाले खेतिहरों पर निर्भर करने, मध्यम किसानों से मेल करने और सम्पन्न किसानों को प्रभावहीन करने की होगी; जिससे हम सामन्ती शोषण को शनैः शनैः नष्ट कर सकें और खेती के उत्पादन में वृद्धि कर सकें।"

वास्तव में देखा जाय तो गांवों में रहने वाले ७०% ग़रीब किसान और खेतिहर ही भूमि-सुधार आन्दोलन के मुख्य स्तम्भ थे; क्योंकि भूमिविहीन होने के कारण, वे भूमि-सुधार के संघर्ष में अत्यंत सक्रियता और दृढ़ता पूर्वक भाग ले सकते थे। स्थानीय किसान-सभाओं के अधिकांश नेता यही किसान थे। भूमि-सुधार कार्यान्वित होने के पश्चात, इन लोगों को लगभग ६०% ज़मीन वितरित की गई। मध्यम किसानों की आबादी २०% थी। भूमि-सुधार क़ानून द्वारा, इनकी ज़मीन तथा अन्य मिलकियत की रक्षा करने की घोषणा करदी गई। इसके सिवाय, जिन मध्यम किसानों के पास काफ़ी ज़मीन नहीं थी उन्हें ज़मीन दे दी गई; जिससे पहले की अपेक्षा कुल मिलाकर उनकी ज़मीन में वृद्धि ही हुई। किसान-सभाओं में भी उनके प्रतिनिधियों को स्थान दिया गया। इन सब बातों से, मध्यम किसानों का ग़रीब किसानों और खेतिहरों के साथ संयुक्त मोर्चा क़ायम होगया। सम्पन्न किसानों के प्रति भी उदारता की नीति बरती गई। स्वयं और खेतिहरों द्वारा जोते हुए उनके खेत और उनकी अन्य मिलकियत की रक्षा के लिये क़ानून पास कर दिया गया। कतिपय स्थानों में तो उनके द्वारा दूसरों को जोतने के लिये दिये हुए खेतों को भी उन्हीं का मान लिया गया। पहले, सम्पन्न किसानों और ज़मींदारों का एक गुट था, लेकिन भूमि-सुधार आन्दोलन के पश्चात उनका ज़मींदार वर्ग से सम्बंध विच्छिन्न होगया।

चीन की जनवादी सरकार सामन्ती ज़मींदारों को वर्ग के रूप में ही 'ख़तम' करना चाहती थी, व्यक्ति के रूप में नहीं। इसलिये भूमि-सुधार क़ानून की १० वीं धारा के अनुसार, अन्य किसानों के समान उन्हें भी ज़मीन देने की व्यवस्था की गई, जिससे वे श्रम द्वारा अपना सुधार कर सकें।

इसके सिवाय, ज़मींदारों के औद्योगिक और व्यापारिक धंधों में भी सरकार ने हस्तक्षेप नहीं किया। जैसा कहा जा चुका है, जो ज़मींदार अपने क्रूर और भयंकर दुष्कृत्यों द्वारा जनता के कोपभाजन बने हैं, जिन्होंने क़ानूनों का उल्लंघन किया है और जिन्होंने भूमि-सुधार आन्दोलन को असफल बनाने का प्रयत्न किया है--केवल ऐसे ही ज़मींदार क़ानून के अनुसार दण्ड के पात्र हुए हैं। अपराध अधिक गंभीर होने पर ही उन्हें मृत्युदण्ड दिया गया है। इस नीति का अनुसरण करने से, ज़मींदार वर्ग की प्रतिरोध-शक्ति कमज़ोर पड़ी और भूमि-सुधार का आन्दोलन सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ।

परन्तु, इतने बड़े देश में व्यवस्थित ढंग से भूमि-सुधार के क़ानूनों को लागू करना आसान काम नहीं है। इसके लिये देश का शासन जनता के हाथों में होना चाहिये, जनता में राजनीतिक चेतना की जागृति तथा संगठन होना चाहिये और नियोजित रूप से कार्यकर्ताओं को शिक्षा मिलनी चाहिये, जो गांवों में जाकर किसानों के साथ भूमि-सुधार आन्दोलन में भाग ले सकें। इस कारण आन्दोलन को सफल बनाने के लिये, एक वर्ष में ३ लाख से अधिक भूमि-सुधार की शिक्षा पाये हुए कार्यकर्ताओं को देहातों में भेजा गया। इन लोगों ने किसानों को संगठित कर, उनकी अध्यक्षता में किसान-सभायें स्थापित कीं। इन सभाओं द्वारा किसानों को सरकार की नीति अच्छी तरह समझा कर, उनमें राजनीतिक चेतना जागृत की गई। इससे किसान समझने लगे कि ज़मींदार की ज़मीन वास्तव में उनकी है, जिसे ज़मींदार वर्ग ने उनसे ज़बर्दस्ती और धोखे से छीन लिया था। किसान और ज़मींदार वर्गों का संघर्ष आरंभ हुआ और ज़मींदारों की ज़मीन, हल, बैल तथा अनाज किसानों में बांट दिये गये। ज़मींदारों को किसी प्रकार का मुआवज़ा नहीं दिया गया, सिवाय इसके कि अन्य किसानों की भांति उन्हें भी अपने खाने-कमाने लायक कुछ ज़मीन दे दी गई। ज़मींदारों की ज़मीनों के पुराने पट्टे तथा हक़ों की सामूहिक होली जलाई गई और किसानों को नई ज़मीनों के पुराने पट्टे मिल गये। ज़मींदार वर्ग का कोई सहायक अथवा हितैषी नहीं था और राज्य की सारी ताक़तें किसानों के साथ थीं। इसलिये, ज़मींदारों को क़ानून मानने के लिये बाध्य होना पड़ा।

भूमि-सुधार के ऐतिहासिक और क्रान्तिकारी आन्दोलन में पीकिंग विश्वविद्यालय के ८०० विद्यार्थी तथा अध्यापक और अन्य अनेक लेखकों

तथा कलाकारों ने १०० से अधिक गांवों के दो लाख किसानों में काम किया है। अगस्त सन् १९५२ तक, चीन के ३० करोड़ किसानों में भूमि-सुधार सफलतापूर्वक सम्पन्न होचुका है, जिसके परिणामस्वरूप ११ करोड़ ७५ लाख एकड़ भूमि का वितरण किया जा चुका है। जमीन का वंटवारा होने के पश्चात, नये चीन का किसान अत्यंत उत्साहपूर्वक अपने देश के धन में वृद्धि करता हुआ, मुक्त कंठ से गान करता है :

" मैं अस्सी वर्षों तक जिया,
" मैं अस्सी वर्षों तक रोया।
" अब मेरे पास खेत है,
" यह खेत है—शहद से भी मीठा।
" शहद पैदा करता है क्षणिक मिठास
" किन्तु खेत देता रहता है सदा मिठास।"

एक गांव में

थाय् फिंग छ्याओ पीकिंग के पश्चिम में लगभग दो हज़ार की आबादी का एक छोटा सा गांव है। भारत के गांवों जैसा ही मालूम होता है। जब हम गांव में पहुंचे तो ग्रामवासी पुलिस की भांति हाथ दिखाकर हमारी मोटर को मार्ग बता रहे थे। शीत ऋतु में उत्तरी चीन में खेती नहीं होती, इसलिये खेत सूखे पड़े थे, मिट्टी खुदी हुई थी और डूबते हुये सूर्य की सुनहली किरणें उसे और भी पीत बना रही थीं। सरदी से खेतों की रक्षा करने के लिये, उनमें बाड़ें लगी हुई थीं। वृक्ष बहुत कम थे और जितने भी थे, सरदी के कारण फूल-पत्तियों के अभाव में ठूंठ होगये थे। घर काफ़ी दूर-दूर फैले हुए थे। कहीं कूड़े-कचरे के ढेर या गन्दे गढ़े न दिखाई देते थे। जब हम गांव के मुखिया के घर पहुंचे तो स्त्री-पुरुष और बाल-वृद्ध करतल-ध्वनि से हमारा स्वागत कर रहे थे। स्वागत के उत्तर में, हम भी तालियां बजाने लगे। किसानों के प्रफुल्लित चेहरों से सरलता और श्रमशीलता टपक रही थी।

गांव का मुखिया एक नौजवान खेतिहर किसान है, जो पहले दूसरों के खेतों में मजूरी करके अपना पेट भरता था। आतिथ्य–सत्कार के पश्चात, हम लोगों को गांव से परिचित कराया गया।

गांव में लगभग ३३६ एकड़ जमीन है, जिसमें साग-सब्जी पैदा की जाती है। शीत ऋतु में खेती नहीं हो सकती, इसलिये घरों को आग द्वारा गरम रखकर उनमें साग-सब्जी बोई जाती है अथवा पहले की साग-सब्जी को जमीन के अन्दर सुरक्षित रखा जाता है। इस ऋतु में, किसान लोग खाद इकट्ठी करते हैं और शहर में माल ढोकर लेजाते हैं। मुक्ति के पहले, जमींदारों के २१ घर थे, जिनमें छोटे-बड़े सब मिलाकर १७६ आदमियों के पास सारे गांव की ५०% जमीन थी और हर आदमी के हिस्से में '०५ एकड़ जमीन पड़ती थी। १६९ घर भूमिरहित और गरीब किसानों के थे, जिनके पास सब मिलाकर ११८ एकड़ जमीन थी और प्रत्येक के हिस्से में '०८ एकड़ जमीन आती थी। भूमि-सुधार के पश्चात, प्रत्येक भूमिरहित किसान को '१८ एकड़ जमीन मिली है। भूमि प्राप्त करने के बाद, किसान अत्यन्त परिश्रम और
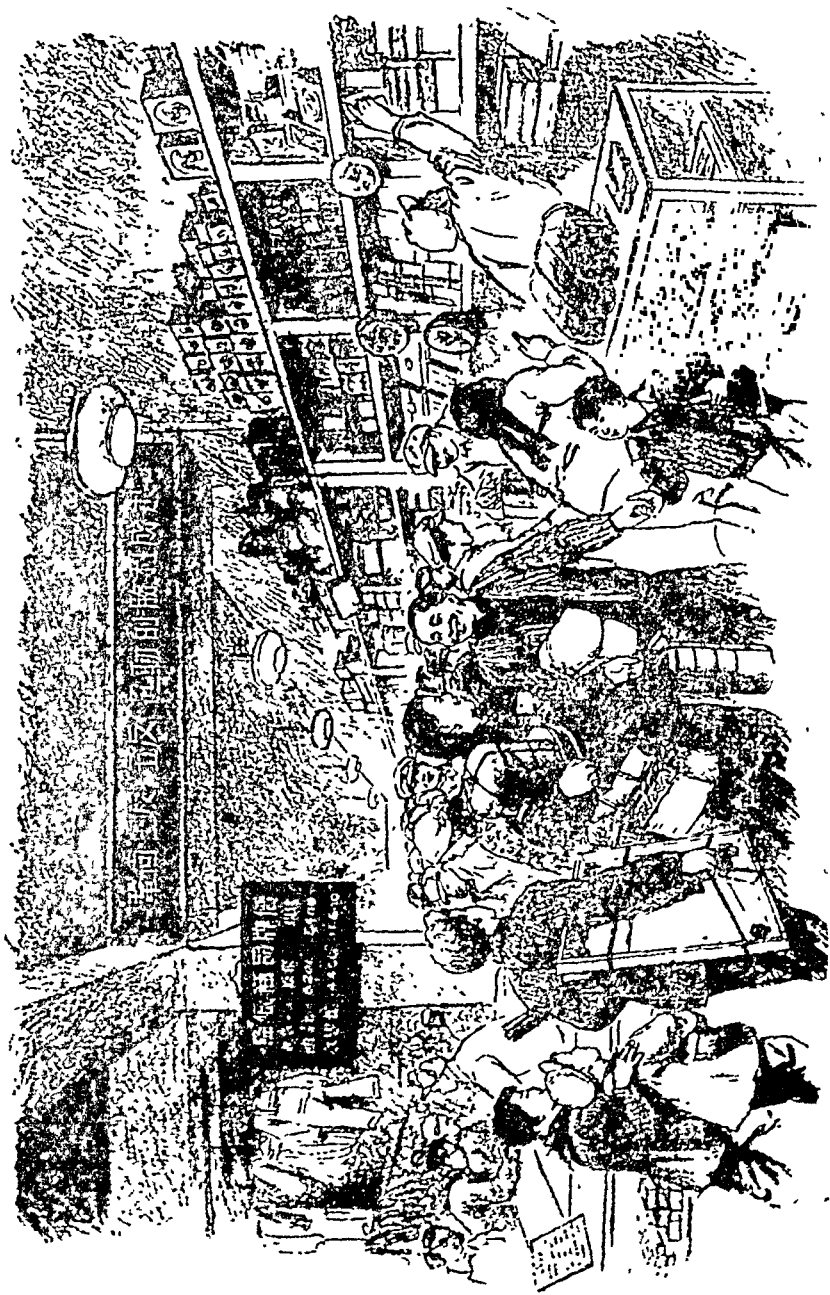
गांव के बाज़ार में

गले में लाल रुमाल बंधा हुआ था; वह 'पायोनियर' कहलाती थी। उसने बताया कि वह मेहनत से पढ़ती है। मेहनत करना उसे अच्छा लगता है और सब कामों में भी वह आगे रहती है, इसलिये उसे 'पायोनियर' बनाया गया है। सब लड़के और लड़कियाँ नृत्य कर रहे थे। सबके बदन प्रफुल्लित थे। सदियों से पीड़ित कृषकों के बालक आशा और उमंग से पूर्ण जीवन की ओर क़दम बढ़ाते हुए प्रतीत होते थे।

गांव में एक सहकारी संस्था भी है। उसमें प्रतिदिन लगभग ४०० रुपये का माल बिक जाता था। १ मई और १ अक्तूबर के राष्ट्रीय त्यौहारों के अवसर पर, एक दिन में १०० से अधिक आटे के थैले खप जाते हैं। चावल, आटा, मकई, काव् ल्यांग, चाय, बिस्किट, कपड़े, सुई, डोरा आदि अनेक प्रकार की छोटी-बड़ी चीजें यहाँ बिकती हैं। वस्तुओं की क़ीमतें शहर की अपेक्षा १० % कम थीं। सहकारी संस्था छोटी और साधारण ढंग की होने पर भी अत्यन्त व्यवस्थित है।

जब हम गांव के एक नवयुवक—पहले के एक मामूली ज़मींदार—के घर पहुंचे, तो उसने भी ताली बजाकर हमारा स्वागत किया। हमारे प्रश्नों का उत्तर देते हुए, वह ज़रा भी नहीं हिचकिचाया। पहले, वह स्वयं खेत में काम न करके पांच खेतिहरों से काम करवाता था। उस समय, उसके पास १२ एकड़ ज़मीन थी और रहने के लिये १३ कमरे। भूमि-सुधार के पश्चात, ६ एकड़ से कुछ अधिक ज़मीन रह गई है और रहने के लिये अभी भी ६ कमरे हैं। अब वह स्वयं, उसके माता-पिता और स्त्री सब खेत में काम करते हैं। शीत ऋतु में साग-भाजी बोने के लिये, उसका एक छोटा सा गोदाम है। यह गोदाम आग से गरम था और सर्द हवा से साग-भाजी की रक्षा करने के लिये पौधों को लकड़ी के तख़्तों से ढांका गया था। ज़मींदार की स्त्री गोदाम में काम कर रही थी। गोदाम के बाहर, माल ढोकर शहर में लेजाने के लिये गधे और गाड़ियां खड़ी हुई थीं। भूमि-सुधार आन्दोलन के समय ही, यह ज़मींदार समझ गया था कि उसे स्वेच्छापूर्वक अपनी कुछ ज़मीन दे देनी चाहिये। इस कारण, उसे जनता की आलोचना का पात्र नहीं बनना पड़ा। पहले वह गांव के बहुत से लोगों को नहीं जानता था, किन्तु अब सबको जानता है। सब उसके साथ आज़ादी से बातचीत करते, हंसते-बोलते हैं। उसके चेहरे की मुस्कराहट और रहन-सहन से विदित होता था कि उसे अपने वर्तमान जीवन से असंतोष नहीं है। अवश्य ही पहले उसकी आमदनी अधिक थी, किन्तु

अब वह स्वयं श्रम करता है, जिससे गांववालों की नज़रों में उसका आदर बढ़ गया है।

पास ही एक सम्पन्न किसान का घर था। घर के बाहर सूअर बंधे हुए थे और गाड़ियां खड़ी थीं। पहले की अपेक्षा इस किसान की भूमि में कोई अन्तर नहीं पड़ा; जितनी भूमि पहले थी उतनी अब भी है। हां, पहले की अपेक्षा उसे तीन गुना कम टैक्स देना पड़ता है और उत्पादन बढ़ गया है। पहले उसके खेत में दो खेतिहर और एक लड़का काम करता था, अब एक मज़दूर और एक लड़का काम करता है। अब वह और उसके परिवार के सभी व्यक्ति मिलकर काम करते हैं। उत्पादन की वृद्धि में यही सबसे बड़ा कारण है। इस किसान के रहन-सहन और घर-बार से, उसके सुखी जीवन का आभास मिलता था।

इसके पश्चात, हम लोग मध्यम वर्ग के किसान के घर गये। साधारणतया १ एकड़ ज़मीन में १६६ कैटी (१ कैटी=१$\frac{१}{३}$ पौण्ड) शाक-भाजी पैदा की जाती है, पर यह किसान उतनी ही ज़मीन में ३०० कैटी पैदा करने में सफल हुआ है, इसलिये यह 'श्रमवीर' कहाता है। पहले भी उसके पास १॥ एकड़ ज़मीन थी और अब भी उतनी ही है, परन्तु परिवार के सब लोग बहुत श्रम करते हैं। सरकार भी खेत के लिये खाद वगैरह देती है। पहले, पारस्परिक सहयोग-समिति में ५ परिवार शामिल थे और अब २१ परिवार मिलकर काम करते हैं। इन सब कारणों से उत्पादन में वृद्धि होने पर, यह किसान बहुत खुश है। उसके परिवार का जीवन पहले की अपेक्षा बेहतर है, विशेषकर उसे 'श्रमवीर' का पद प्राप्त होने से सारे परिवार को आत्मगौरव का अनुभव होता है।

गांव में सबसे अधिक प्रसन्न च्यांग फू है। यह किसान पहले भूमिरहित था। १६ वर्ष की अवस्था में इसके पिता का देहान्त होगया और वह अपनी मां के साथ एक ज़मींदार के घर नौकरी करने लगा था। उस समय उसका जीवन अत्यंत दुःखी था। उसके पास न खाने को अन्न था और न पहिनने को कपड़ा। वह एक छोटे से पुराने घर में रहा करता था। ये सभी बातें उसके स्मृतिपटल पर अभी भी ज्यों की त्यों अंकित हैं। लेकिन चीन की मुक्ति के साथ, उसकी भी मुक्ति हुई और उसे आधा एकड़ ज़मीन मिली। इस के लिये उसे एक ज़मींदार के विरुद्ध संघर्ष करना पड़ा। ज़मींदार को किसान-सभा में बुलाकर, उससे ज़मीन देने के लिये कहा गया। पहले, बहुत से

ज़मींदार च्वो मिंतांग सरकार की मदद करते थे। कुछ ने गम्भीर अपराध भी किये थे। ये लोग जनता का राज्य नहीं चाहते थे, क्योंकि इसमें उनका हित नहीं था। फिर भी, कभी उनके साथ किसी तरह की मारपीट या कोई ज़्यादती नहीं की गई; क्योंकि किसी को भी ऐसा करने की इजाज़त नहीं थी। हां, ऐसे लोगों के बारे में सभाओं में ज़रूर चर्चा की जाती थी और उन्हें पुनर्शिक्षण का अवसर प्रदान किया जाता था। इन लोगों को दण्ड देने का अधिकार केवल जनता की अदालतों को ही था; किसी व्यक्ति विशेष को नहीं। यदि किसी ज़मींदार को मृत्युदण्ड भी दिया जाता, तो उसके कुटुम्ब को खाने-कमाने लायक़ ज़मीन देने की व्यवस्था की जाती थी। ज़मीन के अतिरिक्त, च्यांग फू को पशु भी मिले और खेत में पानी देने के लिये मशीन भी। बीज आदि ख़रीदने के लिये, उसे सरकार की ओर से कर्ज़ दिया गया। उसने अपने खेत में जी-तोड़ परिश्रम करना आरंभ किया और अतिरिक्त समय में स्कूल में पढ़ने जाने लगा। उसके खेत की पैदावार बढ़ने लगी और मार्च सन् १९५१ में, उसने अपने रहने के लिये दो नये कमरे बनवा लिये। च्यांग फू को अपने सुखी जीवन में अब एक साथी की आवश्यकता महसूस होने लगी और इसे उसने एक सुंदर कन्या से विवाह करके पूरा किया। पहले बहुत इच्छा होने पर भी, वह द्रव्याभाव के कारण विवाह करने में असमर्थ था। च्यांग फू का वर्तमान पारिवारिक जीवन अत्यन्त सुखमय है।

च्यांग फू की बातों और उसकी मुखचेष्टाओं से प्रतीत होता था कि उसमें कितनी वर्ग चेतना आगई है। पहले, वह एक ज़मींदार का गुलाम था। ज़मींदार उसकी कमाई पर मौज़ करता था, किन्तु आज वह स्वयं अपने श्रम का मालिक है। राजनीतिक और आर्थिक दृष्टि से वह उन्नत होगया है। अब वह जनता का प्रतिनिधि है, गांव की सुरक्षा-समिति का सदस्य है और पारस्परिक सहयोग-समिति का प्रधान है। सामूहिक कृषि में सम्मलित होने की च्यांग फू की हार्दिक अभिलाषा है। वह आनेवाले समाजवादी समाज के बारे में बड़ी गंभीरता से सोचता है। उस समाज का स्वरूप उसे अभी ठीक तो मालूम नहीं है, लेकिन उसे विश्वास है कि उस समाज में उसके जीवन-स्तर में और उन्नति होगी, वह बड़े मकान में रहेगा और उसके बाल-बच्चों के विकास के लिये पूरा अवसर दिया जायगा। जीवन कितना सुखी होगा, जब देश सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व में आगे बढ़ेगा!—यह विचार च्यांग फू के हृदय में एक अद्भुत आल्हाद उत्पन्न कर देता है।

भूमि-सुधार के पश्चात

पिछले २०० वर्षों से खाद्यान्न के लिये परमुखापेक्षी, 'एशिया का रुग्ण देश' चीन आज अनाज का निर्यात करने लगा है! इसे संसार के महान् आश्चर्य के सिवाय और क्या कहा जा सकता है? सन् १८८८ में, चीन में बाहर से आयात होनेवाली वस्तुओं में अनाज का छठा नंबर था; १९३० में दूसरा और दो वर्षों पश्चात, यानी १९३२ में अनाज सबसे पहले नंबर पर आगया था। सैकड़ों वर्षों से गुलामी का जीवन वितानेवाले चीनी किसानों की आर्थिक स्थिति जापानी युद्ध तथा मुक्ति-संग्राम काल में अत्यन्त दयनीय हो गई थी। सन् १९४९ में राष्ट्र का कृषि सम्बंधी उत्पादन शांतिकाल की अपेक्षा घटकर ३/४ रह गया; कहीं तो २/३ तक पहुंच गया था! करोड़ों एकड़ ज़मीन बाढ़ के कारण बेकार होगई थी, जिससे ४ करोड़ किसानों की आजीविका को ज़बर्दस्त धक्का पहुंचा था। तारीफ़ यह थी कि योरुप और अमरीका के तथाकथित विशेषज्ञ चीन की जनसंख्या की वृद्धि को ही अनाज की कमी का मुख्य कारण बताते थे!

सन् १९४९ में मुक्ति के पश्चात, चीन ने विदेशों से अनाज और कपास का आयात सर्वथा बन्द कर दिया। सन् १९५१ में, चीन ने

अनाज में केवल आत्मनिर्भरता ही प्राप्त नहीं की, बल्कि ५,१६,००० टन अनाज भारत को निर्यात भी किया ! आज चीन की आमदनी का अधिकांश भाग कृषि से आता है, इससे चीन की कृषि सम्बंधी उन्नति का अनुमान लगाया जा सकता है।

चीन का भूमि-सुधार ही इस उन्नति का मुख्य कारण है, जिसके फल स्वरूप करोड़ों एकड़ ज़मीन किसानों में वितरित कर देने से कई करोड़ टन गल्ले की बचत हुई है। पहले, इस गल्ले का अधिकांश भाग ज़मींदारों की कोठियों में जमा होजाता था और उससे सारे देश के व्यापार का नियंत्रण किया जाता था। चीनी किसानों ने सदियों तक ज़मींदारों के निर्दय उत्पीड़न का शिकार बने रह कर पशुओं से भी बदतर जीवन व्यतीत किया है। उसने शकरकंद खाकर, घास-पात भक्षण कर, निराहार रह कर, कड़ाके की सरदी में ठंडे घरों में निवास कर, फटे-पुराने अथवा बाप-दादाओं के ज़माने की जीर्ण-शीर्ण रुई के वस्त्र पहिन कर और ज़मींदार के दिल दहलानेवाले अपमान और अत्याचार सहन करते हुये पीढ़ियां गुज़ार दी हैं; परन्तु अब शोषण से मुक्त होने पर, वह स्वयं अपनी भूमि का मालिक होगया है। इसलिये, वह अपने खेत में अधिक से अधिक फ़सल उगाने के लिये अत्यंत प्रयत्नशील है। अब वह मकई और काव् ल्यांग की जगह, चावल और गेहूँ खाना पसंद करता है, रात को बिजली की रोशनी में काम करने का इच्छुक है, समाचार-पत्रों द्वारा देश-विदेशों का हाल जानना चाहता है और फाउण्टेन पेन, थर्मस बोतल, साइकिल, रेडियो तथा सीने की मशीनें खरीद कर अपने श्रम का आनंद उठाना चाहता है।

अपने खेत में अकेले काम करने की अपेक्षा, दूसरों के साथ मिलकर काम करने में उत्पादन में अधिक वृद्धि हो सकती है। इसलिये, चीन के किसानों ने सहकारी समितियों की स्थापना की है। स्थायी सहकारी समितियों की संख्या ५ लाख से ऊपर पहुँच गई है। इन समितियों में ४०% से अधिक किसानों के परिवार शामिल होगये हैं और होते जारहे हैं। सहकारी समितियों द्वारा किसान जोतने, बोने, नयी टैकनीक द्वारा उत्पादन बढ़ाने और फ़सल काटने आदि में एक दूसरे की सहायता करते हैं। सहकारी संस्थाओं ने भी किसानों के उत्पादन को बढ़ाने में मदद की है। इन संस्थाओं की मारफ़त किसान फ़सल सम्बंधी औज़ार, खाद, कृमिनाशक पाउडर आदि आवश्यक वस्तुयें घर बैठे

प्राप्त कर सकता है। बाज़ार भावों के स्थिर होने में सहकारी संस्थाओं से काफ़ी सहायता मिली है। सामूहिक खेती भी चीन में एक नया प्रयोग है। इसमें किसानों के सम्मिलित परिवार काम करते हैं। सबसे पहले, फरवरी सन् १९५२ में सिंक्यांग प्रान्त में इसका प्रयोग आरंभ किया गया था। सरकार की ओर से इन किसानों की सहायतार्थ कृषि-विशेषज्ञ भेजे गये और बीज की व्यवस्था की गई थी। धीरे-धीरे अन्य परिवार भी इस खेती में सम्मिलित होरहे हैं। इस प्रकार के सामूहिक खेत अभी ज़्यादा संख्या में नहीं हैं। इसके अलावा, यंत्रों द्वारा खेतीवाले भी कुछ खेत हैं, जिनमें ट्रैक्टरों से खेती की जाती है। ये खेत अभी प्रयोग के रूप में ही हैं। सफलता होने पर, इस प्रकार के खेतों में और वृद्धि की जायेगी।

कृषि सम्बंधी उत्पादन की वृद्धि के लिये, सरकार किसानों को प्रोत्साहित करती है। सरकार की ओर से उनके हितों की रक्षा के लिये क़ानून बना दिये गये हैं। क्वोमिंतांग के ज़माने में किसानों को ५० से ८० या ९०% तक टैक्स ज़मींदारों को देना पड़ता था; बाक़ी बचे हुए का ३० से ६०% तक सरकार ले लेती थीं; किन्तु अब टैक्सों में कमी कर दी गई है। कम से कम टैक्स ७% है और अधिकांश किसान ११ से १५% तक टैक्स देते हैं। जिन्हें कोई आर्थिक कठिनाई हो या जिनके परिवार के लोग जनता के स्वयंसेवक हों, उनसे कम टैक्स लिया जाता है। प्रत्येक किसान से उसकी आय के हिसाब से ही टैक्स वसूल किया जाता है। यदि किसान अधिक उत्पादन करते हैं, तो औसत से अधिक उत्पादन पर टैक्स नहीं लिया जाता। औद्योगिक धंधों को बढ़ाने के लिये कपास, तमाखू, सन आदि की क़ीमतें अन्य फ़सलों की अपेक्षा अधिक रखी जाती हैं। सहकारी संस्थायें पेशगी रुपया देकर, फ़सलें कटने के पहले ही किसानों की फ़सलें ख़रीद लेती हैं। इससे किसानों को फ़सलों के दाम गिर जाने का डर नहीं रहता। इसके अलावा, किसानों को कृषि सम्बंधी उचित सलाह-मशविरा देकर और सस्ते दामों में खाद, बीज, पशु और हल आदि जुटाकर भी सरकार उनकी सहायता करती है। इन कामों के लिये सरकारी कार्यकर्त्ता गांवों में दौरे करते रहते हैं।

प्राकृतिक नियमों को समझकर, उनका पूरा उपयोग करके, चीन के किसानों ने उत्पादन में वृद्धि की है। पहले यांगत्से, ह्वांग हो (पीली नदी) और ह्वाई नदियों की भीषण बाढ़ों के कारण, जान-माल को भयंकर क्षति

पहुंचती थी। सन् १९३२ में, यांगत्से नदी में बाढ़ आने से ५ लाख आदमी बेघरबार होगये और ढाई हज़ार को अपनी जान से हाथ धोना पड़ा था। मंचु राजाओं ने किसानों से अनेकों प्रकार के टैक्स वसूल किये और बाढ़ों से उनकी रक्षा करने के लिये, नदी के पास बहुत से लोहे के बैल बैठा कर संतोष करा दिया था! क्वो मिंतांग सरकार ने भी बांधों को दुरुस्त कराने के लिये किसानों से बहुत सा द्रव्य ऐंठा, परन्तु कुछ न किया था। नये राज्य की स्थापना होते ही, यांगत्से नदी की बाढ़ रोकने के लिये ३ लाख श्रमिक जुट पड़े, जिनमें हज़ारों किसान और जनमुक्ति सेना के सिपाही भी थे। जून सन् १९५२ को संसार की एक महान् नदी के बांध-निर्माण का कार्य समाप्त होगया। हिसाब लगाने पर पता लगा है कि इस निर्माण-कार्य से १३,५०० एकड़ ज़मीन में कृषि होने लगी है और १५ लाख टन चावल सुरक्षित किया जासका है, जिससे लाखों प्राणियों का भरण-पोषण हो सकेगा।

पहले 'चीन का शोक' कही जानेवाली, पीली नदी में सन् १९३३,१९३४ और १९३५ में अत्यन्त भयंकर बाढ़ें आई थीं। सन् १९३८ में, जापानी आक्रमण को रोकने में असमर्थ च्यांग काई शेक ने इस नदी के बांध को तोड़ देने का आदेश जारी किया था, जिससे आक्रमणकारियों के मार्ग में पानी भर जाय। परन्तु, इससे चीन के कई लाख आदमी मर गये और बहुत से स्थानों पर बाढ़ का यह पानी बरसों तक भरा रहा! इस नदी के बांध का निर्माण-कार्य मार्च सन् १९५१ से आरंभ हुआ था और अप्रैल १९५२ को समाप्त हुआ है। आजकल इस नदी के पानी से ३७,५०० एकड़ ज़मीन की सिंचाई की जारही है। इस कार्य में लगभग १ लाख श्रमजीवियों ने कार्य किया था। इसी प्रकार, सन् १९५० की शीत ऋतु में माओ त्से तुंग का आदेश पाकर, १० लाख श्रमजीवी और किसान ह्वाई नदी की योजना को कार्यान्वित करने में जुट गये थे। यह कार्य भी जुलाई सन् १९५२ को समाप्त होगया है। इस नदी से लाखों टन अनाज नष्ट होजाता था, परन्तु अब इनके ऊपरी भागों में बांधों के निर्माण से चीन की भूमि का सातवाँ हिस्सा सदा के लिये बाढ़ों से मुक्त होगया है। ह्वाई नदी की योजना का दूसरा हिस्सा अभी पूर्ण नहीं हुआ है। सन् १९५५ में इस योजना के पूर्ण होजाने पर, इससे ८६ लाख एकड़ ज़मीन की सिंचाई हो सकेगी। इसके द्वारा चावल और कपास की पैदावार में आशातीत वृद्धि होगी। यि षू के बांध-निर्माण में भी २० लाख से अधिक श्रमजीवियों

और किसानों ने परिश्रम किया है। इन नदियों की योजनायें भी पूर्ण होचुकी हैं।

इसके अतिरिक्त, जहां नदी-नहरों के पानी से सिंचाई नहीं हो सकती, वहां कुएँ खोदकर और पम्प लगाकर सिंचाई की जाती है। शीत ऋतु में खेतों में किसानों द्वारा जमीन में गाड़ी हुई बरफ़ का भी इस काम में उपयोग किया जाता है। सन् १९५१ में, हानिकारक कीड़े-मकोड़े तथा टिड्डी दलों ने २ करोड़ एकड़ जमीन में होनेवाली फ़सल बरबाद कर दी थी, किन्तु अब किसानों ने अत्यंत परिश्रमपूर्वक इन जन्तुओं को नष्ट कर दिया है। सेना ने हवाई जहाजों से कृमिनाशक पाउडर आदि छिड़क कर इस कार्य में सहायता पहुंचाई है।

पहले ,किसान पुराने तरीकों से खेती करते थे। लेकिन, अब वे उत्पादन बढ़ाने के लिये वैज्ञानिक उपायों को काम में लेते हैं। इस सम्बंध में सन् १९४९ में ' उत्तरीय कृषि सम्बंधी रिसर्च संस्था ' की स्थापना की गई थी। शे चुआन् की कृषि सम्बंधी प्रयोगशाला के अनेक विशेषज्ञ स्यु् छ्वान् यून् नान्, क्वै चौ सिंक्यांग आदि प्रान्तों के गांवों में कार्य कर रहे हैं। वैज्ञानिक ढंग से तैयार की हुई खाद को खेत में डालने से फ़सल में १५% प्रति एकड़ वृद्धि हुई है। बीज की पसंदगी भी पैदावार बढ़ाने में सहायक हुई है। इस सम्बंध में सोवियत संघ के अनेक प्रयोगों को काम में लाया जारहा है। खेतों में घनी बुआई और गहरी जुताई के कारण उत्पादन में काफ़ी उन्नति हुई है। इसी प्रकार, नये ढंग के हल तथा खेती करने के औज़ारों का उपयोग करने से शारीरिक श्रम में कमी होने के साथ-साथ फ़सल में भी वृद्धि हुई है।

भूमि-सुधार के पश्चात, जबसे किसान अपनी भूमि के मालिक स्वयं होगये हैं, उत्पादन बढ़ाने के लिये उनमें होड़ लग गई है। उदाहरण के लिये, शान्सी प्रान्त के एक किसान ने एक एकड़ में ६,४६८ पौण्ड मकई का उत्पादन किया, दूसरे किसान ने एक, एकड़ में ७,२९६ पौण्ड कपास पैदा की (पहले की अपेक्षा दस गुनी), शांसी प्रान्त के किसान ने एक एकड़ में ५,३४६ पौण्ड गेहूं पैदा किया (पहले की अपेक्षा नौ गुना), और क्यांग सू प्रान्त के किसान ने एक एकड़ में ९,४५८ पौण्ड चावल (पहले की अपेक्षा पांच गुने) उगाये हैं। चावल की खेती के लिये हूनान प्रान्त के २ लाख किसानों ने इस प्रकार की प्रतियोगिता में भाग लेकर चावल की पैदावार बढ़ाई है। चीन में उत्पादन में वृद्धि

करनेवाले कृषकों को 'आदर्श श्रमजीवी' कहा जाता है और ये लोग सम्मान की दृष्टि से देखे जाते हैं। उन्हें तमग़े वग़ैरह दिये जाते हैं।

कृषि उत्पादन में वृद्धि होने से, चीन के किसानों की क्रय-शक्ति बढ़ गई है। उनका जीवन-स्तर ऊंचा होगया है और वे पढ़ने-लिखने तथा देश-विदेश की राजनीति समझने में अधिक रस लेने लगे हैं। सन् १९५१ के बाद, चीन जून १९५२ में १ लाख टन और अक्तूबर १९५२ में ५० हज़ार टन चावल भारत को दे चुका है। लंका को भी उसने ८० हज़ार टन चावल भेजा है। यह अनाज अपने देशवासियों का पेट काटकर नहीं दिया गया, बल्कि भारत के प्रति अपनी सद्भावना व्यक्त करने और दोनों देशों की समानता तथा पारस्परिक लाभ के सिद्धान्त पर व्यापारिक सम्बंधों में वृद्धि करने के लिये दिया गया है।

जनता की राजनीतिक सलाह-मशविरा देनेवाली राष्ट्रीय कमिटी के दूसरे अधिवेशन पर, अपनी रिपोर्ट पेश करते हुए जून सन् १९५० को ल्यू शाओ ची ने भूमि-सुधार के आर्थिक और सामाजिक लक्ष्य को स्पष्ट करते हुए, अपने महत्वपूर्ण भाषण में कहा था: "भूमि-सुधार के मौलिक कारणों के बारे में हमारा दृष्टिकोण और हमारा उद्देश्य इस विचार से भिन्न है कि केवल ग़रीब जनता के उद्धार के लिये यह भूमि-सुधार किया जारहा है। कम्युनिस्ट पार्टी हमेशा से ही श्रमिक जनता के हितों की रक्षा के लिये संघर्ष करती आई है, लेकिन कम्युनिस्टों की विचारधारा लोक-हितैषियों के विचारों से सदा भिन्न रही है। भूमि-सुधार दरिद्र श्रमिक-किसानों के हक़ में लाभदायक है और इससे किसानों की दरिद्रता का प्रश्न भी कुछ अंशों में हल हो सकता है। किन्तु, भूमि-सुधार का मौलिक उद्देश्य केवल ग़रीब किसानों को राहत देना ही नहीं है। इसका प्रयोजन है—गांव की उत्पादन शक्तियों को मुक्त करना, अर्थात् गांव के श्रमिकों, भूमि तथा उत्पादन के अन्य साधनों को ज़मींदार वर्ग की सामन्ती अधिकार-व्यवस्था के शिकंजों से छुड़ाना, जिससे कृषि सम्बंधी उत्पादन की वृद्धि हो और चीन के औद्योगीकरण का मार्ग खुल जाये। किसानों की दरिद्रता का प्रश्न आख़िरी रूप में तभी हल किया जा सकता है, जबकि कृषि सम्बंधी उत्पादन में बहुत वृद्धि होजाय, नये चीन का औद्योगीकरण होजाय, समस्त देश की जनता का जीवन-स्तर उन्नत होजाय तथा अन्त में चीन समाजवादी विकास के मार्ग की ओर अभिमुख होजाय। भूमि-सुधार मात्र से किसानों की सभी समस्यायें आंशिक रूप में ही हल हो सकती हैं, सर्वांश में नहीं।"
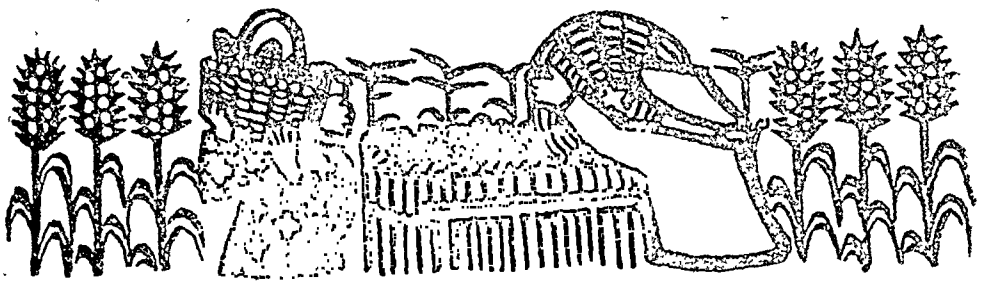
सहकारी संस्थायें

सामान्य कार्यक्रम में कहा गया है: "सहकारी संस्था की अर्थ-व्यवस्था अर्द्ध-समाजवादी ढंग की अर्थ-व्यवस्था है, जो कुल मिलाकर जनता की अर्थ-व्यवस्था का एक महत्वपूर्ण अंग है। जनवादी सरकार इस विकास को प्रोत्साहित करेगी और इसे प्रथम अवसर देगी।" आजकल चीन में जगह-जगह सहकारी संस्थायें खुल रही हैं, जिनके १० करोड़ ६० लाख सदस्य हैं और ३६,४८२ सोसायटियां हैं, जो १,४९५ संस्थाओं में विभक्त हैं। यह संख्या दिन प्रति दिन वढ़ती जारही है। सन् १९५२ के अन्त तक सप्लाई और मार्केटिंग की सहकारी संस्थायें ३४,००० तक पहुंच गयी थीं, जिनके सदस्यों की संख्या १४ करोड़ से भी अधिक है।

भूमि-सुधार आन्दोलन के पश्चात, राष्ट्रीय सम्पत्ति और बाजार भाव में स्थिरता आने से औद्योगिक तथा कृषि - सम्बंधी उत्पादन में वृद्धि होने से, जनता की क्रय-शक्ति बढ़ गई है। साथ ही, यातायात सम्बंध व्यवस्थित हो जाने से शहरों और गांवों के वीच माल के आदान-प्रदान में वृद्धि हुई है। चीन में सहकारी संस्थाओं की संख्या के वढ़ने का यही कारण है। इससे भ्रष्टाचार और मुनाफ़ाखोरी को दूर करने में वहुत सहायता मिली है। राज्य की व्यापारिक कम्पनियां सहकारी संस्थाओं को कमीशन देती हैं। उन्हें वैंकों से कर्ज़ मिलता है, सरकारी टैक्सों में कमी कर दी गई है और रेलवे तथा व्यापारिक कम्पनियां इन संस्थाओं को रेल और जहाज़ आदि की सुविधायें देती हैं।

अखिल चीन संघ की अध्यक्षता में, आजकल तीन प्रकार की सरकारी संस्थायें कार्य कर रही हैं—गांववालों के लिये आवश्यक वस्तुयें ख़रीद कर

देनेवाली संस्थायें, शहरों में ग्राहकों की संस्थायें और औद्योगिक उत्पादन-कर्त्ताओं की संस्थायें। इनमें गांवों की सहकारी संस्थायें सबसे महत्व की हैं। ये संस्थायें किसानों को बाज़ार भाव की अपेक्षा कम दामों में माल ख़रीद कर देती हैं और किसानों के माल को उचित दामों में ख़रीदती हैं। माल बेचने और ख़रीदने का काम पारस्परिक सहायक-समितियों की मारफ़त किया जाता है, जिससे अनावश्यक लिखा-पढ़ी की ज़रूरत नहीं रहती। किसानों को खाद और खेती के औज़ार आदि ख़रीदने के लिये पेशगी रुपया देकर, उनकी खड़ी फ़सल को ख़रीद लिया जाता है। इससे, सहकारी संस्थायें उद्योग और कृषि सम्बंधी माल की अदला-बदला करने की तथा देश का माल निर्यात आदि करने की योजनायें पहले से ही बना सकती हैं। साथ ही, किसानों को भी अपना माल बेचने में दिक़्क़त नहीं उठानी पड़ती और वे इन संस्थाओं को सामूहिक रूप से अपना माल बेचते हैं।

शहरों की सहकारी संस्थाओं का मुख्य उद्देश्य है—अपने सदस्यों के लिये अच्छी क़िस्म के खाद्यान्न तथा अन्य आवश्यक वस्तुओं को बाज़ार भाव से कम क़ीमत पर बेचना। पीकिंग, टीन्सटिन, शंघाई, वूहान्, मुकदन, कैण्टन और चुंगकिंग में इस प्रकार की अनेक संस्थायें कार्य कर रही हैं। पहले, छोटे-मोटे उद्योग करनेवाले—लुहार, जुलाहे, दर्ज़ी आदि—कारीगरों की हालत बड़ी ख़राब थी और बीच के दलालों के मुनाफ़े के कारण, वे आधुनिक उद्योगों की प्रतियोगिता में खड़े नहीं रह सकते थे। परन्तु, अब सरकार ने इन लोगों को संगठित करके इनकी सहकारी संस्थायें क़ायम कर दी हैं, जहां व्यक्तिगत उत्पादन की जगह सामूहिक उत्पादन को प्रोत्साहित किया जाता है। इन कारीगरों की आर्थिक दशा अब पहले की अपेक्षा अच्छी है। बहुत से जुलाहों के पास लकड़ी के करघों के स्थान पर बिजली के करघे होगये हैं। ये लोग आंशिक रूप में आधुनिक ढंग के औद्योगिक उत्पादन की दशा को पहुंच गये हैं और आशा की जाती है कि शीघ्र ही पूर्ण रूप से आधुनिक ढंग के औद्योगिक उत्पादन तक उन्नति कर सकेंगे।

पीकिंग के तुंग तान् क्षेत्र की सहकारी संस्था पीकिंग शहर की एक बड़ी संस्था है। इसके सदस्यों की संख्या लगभग १ लाख है। इसका काम है—दूसरी सहकारी संस्थाओं से माल ख़रीद कर अपने क्षेत्र में वितरित करना। इस संस्था की ५९ शाखायें हैं, जिनमें २१ शाखायें स्कूलों, कालेजों तथा

सरकारी संस्थाओं में काम करती हैं। इसके उत्पादन-विभाग में पाव रोटी बिस्किट, चाकलेट आदि तैयार किये जाते हैं। इसके एक शेअर की क़ीमत पहले लगभग एक रुपया थी, अब तीन रुपये होगई है। शेअरों की कुल पूंजी लगभग २५ हज़ार रुपये थी, अब पांच गुनी बढ़ गई है। सहकारी संस्था के कार्यकर्त्ता अपनी संस्था के सदस्यों से निकट सम्पर्क रखते हैं और यथाशक्ति उनकी कठिनाइयों को हल करने का प्रयत्न करते हैं। सदस्यों को संगठित करना, उनकी ज़रूरतों को समझना और नया माल आने पर उन्हें सूचित करना आदि कामों के लिए ख़ास कमिटियां बनी हुई हैं। साधारणतया इस संस्था में उधारखाता नहीं चलता, लेकिन किसी सरकारी संस्था या शिक्षा-विभाग आदि में काम करनेवालों को किश्तों पर माल मिल सकता है। १०० से अधिक वस्तुयें यहां बाज़ार भाव से ४% कम क़ीमत पर ग्राहकों को मिल सकती हैं। १५% मुनाफ़ा सदस्यों में बांटकर, बाक़ी को संस्था के बढ़ाने में लगाया जाता है। सरकार सहकारी संस्था को रुपया उधार देती है और राज्य की व्यापारिक कम्पनियों द्वारा इसे कमीशन भी मिलता है। यह संस्था अपनी ख़रीद-फरोख़्त की योजना बनाकर, पहले व्यापारिक विभाग को देती है और फिर यह विभाग इस योजना को राज्य की व्यापारिक कम्पनी के पास पहुंचाता है।

लि इस सहकारी संस्था के सप्लाई विभाग के मैनेजर हैं। बहुत सीधे-सादे और सरल मालूम होते हैं। कई वर्षों तक आप रिक्शा चलाने का काम करते थे। उस समय दिन-रात मजदूरी करके भी पेट नहीं भरता था। कई बार आप क्वो मिंतांग के सिपाहियों की लातों और ठोकरों के शिकार हुए थे। एक बार किसी सिपाही के साथ क़िराये की बाबत झगड़ा होजाने से, आपको बहुत अपमान सहना पड़ा था। सन् १९४७ में क्वो मिंतांग सेना में जबर्दस्ती भरती कर लिये जाने के डर से, आप भाग कर उत्तर-पूर्वी चीन में चले गये थे। अपने बीते हुए जीवन को याद करके, अभी भी आपके होंठ जोश से फड़कने लगते हैं।

मुक्ति के पश्चात, लि के दिनों ने पलटा खाया। रिक्शावालों को संगठित किया गया और उनकी ट्रेड यूनियनें क़ायम हुई। अगस्त सन् १९४९ में उक्त सहकारी संस्था स्थापित होने पर, लि ट्रेड यूनियन द्वारा कार्यकर्त्ता चुने

गये। उस समय इस संस्था के पास रुपया-पैसा नहीं था। आटा वगैरह रखने के लिये थैले तक नहीं थे। लि ने रिक्शा मजदूरों से कुछ चंदा इकट्ठा करके और राज्य की व्यापारिक कम्पनी से कुछ रुपया उधार लेकर, अपने अथक परिश्रम से इस संस्था को खड़ा किया।

नवम्बर सन् १९४९ से लि राजनीतिक शिक्षा प्राप्त करने के लिये एक रात्रि स्कूल में भरती होगये, वहाँ उन्होंने समाज के विकास सम्बंधी ज्ञान को हासिल किया। उन्होंने कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यक्रम का अध्ययन किया और फरवरी सन् १९५० में पार्टी के सदस्य बन गये। क्वो मिंतांग के लोग कम्युनिस्ट पार्टी की बहुत निन्दा किया करते थे, परन्तु लि को धीरे-धीरे मालूम हुआ कि पार्टी ने जनता के लिये कितना बलिदान किया है, उसके ही कारण जनता में पार्टी की भारी प्रतिष्ठा है।

माओ त्से तुंग ने कहा है—"सहकारी संस्थाओं का सार है—जनता की सेवा; अर्थात् संस्थाओं को सदा जनता के बारे में सोचना चाहिये, उसके लिये योजना बनानी चाहिये और अन्य बातों के मुक़ाबिले में उसके हित का पहले ध्यान रखना चाहिये। यही हममें और क्वो मिंतांग में मौलिक भेद है।"—लि अपने नेता के इस कथन का अक्षरशः पालन करते हैं। जुलाई सन् १९५२ के पहले, यह संस्था प्रति दिन केवल ८ से १२ और २ से ६-३० बजे तक के लिये खुलती थी, जिससे सदस्यों को इसका पूरा लाभ नहीं मिल पाता था। अधिकतर बिक्री सुबह ६–११. ३० तक और शाम को ४–६. ३० तक होने के कारण, कुछ कार्यकर्त्ताओं को अधिक काम रहता था और कुछ को बहुत कम। लि ने इस समय को इस प्रकार विभक्त किया कि कार्यकर्त्ताओं की संख्या में बिना वृद्धि किये हुए ही स्टोर सारे दिन खुला रहने लगा। इस विभाजन के अनुसार, ८–९ बजे तक काम करनेवालों के समय में कमी कर दी गई, क्योंकि इस समय काम बहुत कम रहता था। काम के घंटों को पुनः विभाजित करने की नई पद्धति का आविष्कार करने के कारण, लि अब 'आदर्श श्रमजीवी' कहे जाते हैं। अन्य संस्थाओं में भी उनकी इस पद्धति का अनुकरण किया गया है। जी-तोड़ परिश्रम करने के कारण, लि अपने साथियों में बहुत प्रिय हैं। लि इस बात को भली भांति समझते हैं कि चीन की नई लोकशाही में ही

एक रिक्शा-कुली को किसी सहकारी संस्था के संचालक बनने का सौभाग्य प्राप्त हो सकता है।

तू इस संस्था के डाइरेक्टर हैं। आप एक उत्साही नौजंवान हैं। आपने १४ वर्षों तक चीन के क्रांतिकारी युद्ध में काम किया है। जापानी और क्वो मिंतांग के सैनिकों की गोलियों से घायल हुए हैं। सहकारी संस्था का निरीक्षण करने के बाद, तू ने संस्था को उन्नत बनाने के लिए हम लोगों से सुझाव मांगे। फिर, विनम्र भाव से कहने लगे : "आप जानते हैं, अभी हमारे कार्यकर्त्ताओं में सेवा-भाव की कमी है। हम अपनी त्रुटियों को धीरे-धीरे दूर कर रहे हैं। हमें आशा है कि भविष्य में हम जनता की अधिक सेवा कर सकेंगे।"

उत्पादनकर्त्ता श्रमजीवी

चीनी क्रांति की सफलता और उसके बाद होनेवाली औद्योगिक उत्पादन की वृद्धि से, चीन के श्रमजीवी अब मशीनों के गुलाम नहीं रह गये हैं। उनमें नई चेतना और नये जीवन का उदय होगया है। उन्होंने अनुभवों से सीखा है कि उत्पादन की वृद्धि से ही उनकी तथा उनके राष्ट्र की उन्नति हो सकती है। अतएव, अब वे अपने देश के मालिक की हैसियत से ही अपना कार्य करते हैं। इस नई दृष्टि के कारण, देश का उत्पादन बढ़ाने में उन्होंने काफ़ी सफलता प्राप्त की है।

ग्राम्य अर्थ-व्यवस्था की अर्द्ध-सामन्ती और अर्द्ध-औपनिवेशिक हालत के कारण, सदियों से चीन औद्योगीकरण की ओर नहीं बढ़ सका था। चीन को इन हालतों से आगे न बढ़ने देने में प्रधान कारण थी—विदेशियों की साम्राज्यवादी नीति। उस समय, देश के महत्वपूर्ण उद्योग-धंधे विदेशी पूंजीपतियों के अधिकार में थे। ख़ास तौर से कोयला, लोहा, कपड़ा, तम्बाकू और साबुन के उद्योगों में जापान और ब्रिटेन की पूंजी लगी हुई थी। इसके अलावा, साम्राज्यवादियों के एजेण्ट—देश के नौकरशाही पूंजीपति तथा ज़मींदार—मजदूरों के सस्ते श्रम का लाभ उठाकर विदेशी पूंजीपतियों के लिये माल तैयार करके उन्हीं के हित का साधन कर रहे थे। देश का औद्योगीकरण न होने देने के लिये, मशीन-निर्माण आदि भारी उद्योग-धंधों के स्थान पर हलके उद्योग-धंधों में ही वृद्धि की जा रही थी। समुद्रतट के कतिपय नगरों में ही औद्योगिक उत्पादन होरहा था, जिससे साधारण जनता को कोई लाभ न होता था; कतिपय व्यक्तियों तक ही यह लाभ सीमित था। उदाहरण के लिये, सन् १९४८ में रेशम, डिब्बों का भोजन आदि ऐश-आराम की वस्तुओं का उत्पादन करने के लिये शंघाई में ३,००० कारख़ाने काम कर रहे थे। ऐसी हालत में चीन को बड़े-बड़े कर्ज़ देकर तथा अपने बैंक क़ायम करके, इस देश की अर्थ-व्यवस्था पर साम्राज्यवादी ताक़तों ने कब्ज़ा कर लिया था।

माओ त्से तुंग और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में चीनी क्रांति की सफलता के पश्चात, राष्ट्र के नौकरशाही पूंजीपतियों और प्रतिक्रियावादी क्वोमितांग की सारी सम्पत्ति ज़ब्त करके, राज्यों की सम्पति बना दी गई। आज राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था के आधारभूत और समाजवादी ढंग के बड़े-बड़े उद्योगधंधे राज्य के अधिकार में हैं। इन उद्योग-धंधों में मनुष्य द्वारा मनुष्य का शोषण बन्द होगया है, जिससे श्रमजीवियों की दशा बदल गई है। नयी जनवादी अर्थ-व्यवस्था में निजी उद्योग-धंधों का भी महत्वपूर्ण स्थान है और यदि इनसे राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था में तथा सर्वसाधारण की आजीविका में मदद मिलती है, तो इन्हें राज्य की ओर से प्रोत्साहित किया जाता है। क़ानून के अनुसार, इन उद्योग-धंधों के मालिकों को श्रमजीवियों का दमन करने या उनके प्रति किसी प्रकार का दुर्व्यवहार करने की मनाई है। श्रमजीवी इन उद्योग-धंधों की देख-रेख करते हैं, जिससे उद्योग-धंधों के मालिक सरकारी क़ानूनों को भंग न कर सकें।

सन् १९२१ में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना के साथ ही, चीन में श्रमजीवी कांग्रेस के अवसर पर 'अखिल चीन श्रमिक संघ' की स्थापना हुई। इसके बाद सन् १९२५ में, द्वितीय राष्ट्रीय श्रमिक कांग्रेस में निश्चय किया गया कि श्रमजीवियों को विदेशी साम्राज्यवादियों और सामंतों के विरुद्ध क्रांति-आंदोलन में भाग लेना चाहिये। आगे चलकर जापान-विरोधी युद्ध-काल में (सन् १९३७-४५) यद्यपि श्रमिक संघ संगठित रूप से कार्य न कर सका, फिर भी संघ के कार्यकर्त्ता श्रमजीवियों को आक्रमणकारियों के विरुद्ध संगठित करने के लिये गुप्त रूप से कार्य करते रहे और कुछ गुरिल्ला युद्ध में सम्मिलित होगये। इसके बाद अनेक स्थानों पर जनता का मुक्ति-युद्ध सफल होने पर, सन् १९४८ में हारबिन में होने वाली 'अखिल चीन श्रमिक कांग्रेस' की बैठक में श्रमिक संघ की प्रवृत्तियों को पुनरुज्जीवित किया गया। चीन में नयी सरकार की स्थापना के पश्चात, श्रमजीवियों का आन्दोलन देश भर में फैला और सदियों के शोषण से मुक्त हुए चीन के श्रमजीवियों ने करवट बदली।

नये जनवादी पुनर्निर्माण में संगठित रूप से भाग लेने के लिये, श्रमजीवियों के हितार्थ जून सन् १९५० में ट्रेड यूनियन के क़ानून बनाये गये, जिससे उनकी शक्ति दृढ़ हुई। इस समय औद्योगिक कारख़ानों में काम करने वाले ९०% से अधिक तथा छोटे-बड़े शहरों के समस्त व्यापारों के ६०-८०% श्रमजीवी ट्रेड यूनियनों के सदस्य हैं। रेलवे मज़दूर, कोयले की खानों के मज़दूर, कपड़े के कारख़ानों के मज़दूर, डाक-तार आदि विभागों में काम करनेवाले, गोलाबारूद बनानेवाले मज़दूर, बिजली विभाग में काम करनेवाले मज़दूर, हवाई जहाज़ बस-ट्राम आदि चलानेवाले मज़दूर, शिक्षा-विभाग के कार्यकर्त्ता, खाद्य उद्योगों में काम करनेवाले तथा दूकानों के क्लर्कों की राष्ट्रीय यूनियनें आज कल चीन में काम कर रही हैं। इन ट्रेड यूनियनों की १ लाख ८० हज़ार शाखायें हैं, जिनके सदस्यों की संख्या लगभग १ करोड़ तक पहुंच गई है।

ट्रेड यूनियनें जनवादी सरकार के क़ायदे-क़ानूनों का पालन करने के लिये, श्रम के प्रति नया दृष्टिकोण बनाने के लिये, सार्वजनिक सम्पत्ति की रक्षा करने के लिये, भ्रष्टाचार, अपव्यय और नौकरशाही का विरोध करने के लिये तथा निजी उद्योग-धंधों में श्रमिकों और पूँजीपतियों—दोनों के हितार्थ, उत्पादन में वृद्धि करने की नीति स्वीकार करने के लिये श्रमजीवियों को शिक्षित और सुसंगठित बनाती हैं। नये चीन के श्रमजीवियों को, जिन

कारखानों में वे काम करते हैं, वहां के जनतांत्रिक अधिकार प्राप्त हैं। ये लोग सरकारी कारखानों की शासन-व्यवस्था में भाग लेते हैं और निजी उद्योग-धंधों की श्रम तथा पूंजी सम्बंधी समस्याओं को निबटाने के लिये सलाह-मशविरा देते हैं। उदाहरण के लिये, कोयले की खानों के अनेक मज़दूर तथा अन्य कार्यकर्त्ता अपने विभागों के प्रधान और खानों के डाइरेक्टर बना दिये गये हैं। पूर्वी चीन में भी २ हज़ार से अधिक श्रमजीवी कारखानों के डाइरेक्टर या सहायक डाइरेक्टर बना दिये गये हैं। ट्रेड यूनियनों द्वारा श्रमजीवियों को जनता की राजनीतिक सलाह-मशविरा देनेवाली सभा, विधान परिषद तथा कार्यकारिणी समिति आदि में भेजा जाता है, जहां उन्हें राष्ट्र की भावी नीति आदि के निर्माण करने का हक़ मिलता है। पूर्वी चीन में यूनियनों के ८,००० सदस्य सरकारी व्यवस्था-विभाग में कार्य करने के लिये चुने गये हैं।

नये चीन के श्रमजीवियों के जीवन-स्तर में उन्नति होने से उनमें राजनीतिक चेतना आगई है; जिससे वे अपने आपको देश का मार्ग-दर्शक समझने लगे हैं। इससे देश के उत्पादन की वृद्धि करने में बहुत सहायता पहुंची है। उत्पादन-वृद्धि के लिये, अब श्रमजीवियों में होड़ लगती है और समय से पहले ही वे अपने उत्पादन का नियत भाग पूरा करते हैं। सन् १९५१ के पहले भाग में उत्पादन वृद्धि में २२,३३,००० श्रमिकों ने भाग लिया था, जिनमें ८६,००० 'आदर्श श्रमजीवी' घोषित किये गये। मुक्ति के बाद सन् १९५२ के अन्त तक, २ लाख से अधिक साधारण श्रमिक आदर्श और उन्नत बन चुके हैं। चीन के हर कारखाने तथा उद्योग-धंधों में इसी प्रकार के श्रमजीवी रहते हैं, जिनका राष्ट्रीय त्यौहारों आदि के अवसर पर विशेष सम्मान किया जाता है। फरवरी सन् १९५३ में, अपने-अपने उत्पादन के अनुभवों का आदान-प्रदान करने के लिये पीकिंग में 'आदर्श श्रमजीवियों' की एक परिषद हुई थी। शासन सम्बंधी और टैकनीक में सुधार के सम्बंध में भी श्रमजीवी सलाह-मशविरा देते हैं। सन् १९५१ में, उत्पादन में वृद्धि करने के लिये श्रमजीवियों की ओर से सब मिलाकर एक लाख से अधिक मुख्य सुझाव रखे गये थे, जिनमें से अधिकांश स्वीकार कर लिये गये थे। नये आविष्कार आदि के द्वारा भी उत्पादन में वृद्धि की जाती है तथा उत्पादन बढ़ाने के उपलक्ष में कारखानों की ओर से श्रमजीवियों को विशेष पुरस्कारों आदि के द्वारा सम्मानित किया जाता है।

उत्पादन-वृद्धि के साथ-साथ श्रमिकों के वेतन में भी वृद्धि हुई है। क्वो मिंतांग के शासन के समय मुद्रा-स्फीति के कारण, मजदूर के बाजार पहुंचने तक उसके रुपये की क़ीमत आधी रह जाती थी। परन्तु, अब बाजार भाव स्थिर होगया है। पहले विविध उद्योग-धंधों में काम करनेवाले श्रमजीवियों को मालिक की इच्छानुसार भिन्न-भिन्न वेतन मिलते थे, जो उनके जीवन-निर्वाह के लिये पर्याप्त नहीं थे। किन्तु, नये चीन में मज़दूरी के बदले उचित वेतन मिलने का विधान बना है। हिसाब लगाने पर पता चला है कि सन् १९४९ में यदि किसी श्रमजीवी का वेतन ६० रुपये था, तो १९५२ के अन्त तक वह १२० रुपये होचुका है।

श्रमजीवियों को वृद्धावस्था, बीमारी तथा विकलांग दशा आदि के समय आराम करने के लिये, सरकार की ओर से मई सन् १९५१ से श्रम-बीमे की भी व्यवस्था की गई है। क्वो मिंतांग शासन-काल में उनके वेतन में से ही कुछ रुपया काटकर उसे बीमे के फण्ड में जमाकर लिया जाता था और वेतन में से जितना रुपया कटता, उसकी अपेक्षा उन्हें कम ही रुपया बीमे-फण्ड में से वापिस मिलता था। इस बीमे-फण्ड के रुपयों की चोरी यहां तक बढ़ी कि इस फण्ड को बन्द कराने के लिये सन् १९२५ में शंघाई के श्रमजीवियों को हड़ताल करनी पड़ी थी! २ जनवरी, १९५३ से श्रम-बीमे में कुछ और सुधार किये गये हैं, जिनके अनुसार कारखानों के मालिक अपनी ओर से श्रमजीवियों के वेतन का ३% प्रति मास बीमे-फण्ड में जमा करने के अलावा, उनकी बीमारी आदि का ख़र्च भी देंगे। इसी प्रकार, कारख़ाने में काम करते हुए श्रमजीवी को चोट लग जाने, उसके विकलांग होजाने या वृद्धावस्था के कारण रिटायर्ड होजाने आदि सम्बंधी नियमों में भी परिवर्तन किये गये हैं। श्रम-बीमे के फण्ड पर ट्रेड यूनियनों का सीधा नियंत्रण रहता है। साधारणतया, इस फण्ड में से ३०% केन्द्रीय फण्ड में जमा होजाता है, जिसमें से 'अखिल चीन श्रमिक संघ' द्वारा श्रमिकों के लिये विश्राम-गृह, अनाथालय आदि बनवाये जाते हैं; बाक़ी ७०% हर एक कारख़ाने की ट्रेड यूनियन कमिटियों के हाथ में रहता है। इस रुपये में से उन्हें पेन्शन आदि देने की व्यवस्था की जाती है। इस समय ३२ लाख से अधिक श्रमजीवियों को बीमा-क़ानून लाभ पहुँच रहा है। यदि इस संख्या में उनका परिवार भी शामिल कर लिया जाय, तो यह संख्या १ करोड़ तक पहुँच जाती है।

मुक्ति के पश्चात, महिला श्रमिकों को भी उचित वेतन मिलने लगा है। अब वे अपमान और लज्जा का जीवन व्यतीत न करके, सम्मान का जीवन बसर करती हैं। पहले, गर्भवती महिलाओं को अपना काम छोड़ देने के लिये बाध्य होना पड़ता था, लेकिन अब कारखानों में उनकी विशेष देख-भाल की जाती है और उन्हें हलका काम करने को दिया जाता है। प्रसूति के समय, उन्हें ५६ दिनों और नये क़ानून के अनुसार इससे भी अधिक समय का सवैतनिक अवकाश मिलता है। कतिपय भारी उद्योग-धंधों में भी महिलायें काम करती हैं। अनेक महिलायें इंजिन चलाती हैं और ह्वाई आदि नदियों पर इंजीनियर आदि के काम भी करती हैं। उन्हें व्यवस्थापक बनने की ट्रेनिंग विशेष रूप से दी जाती है। पोर्ट आर्थर (ल्यू शुन) और डैरेन (ता ल्येन्) में अनेक महिलायें कारखानों की डाइरेक्टर और टैकनीक की विशेषज्ञों के पदों पर नियुक्त हैं या अपने दलों की अग्रणी हैं।

श्रमजीवियों की स्वास्थ्य-रक्षा के लिये, नये चीन में सैनेटोरियम, विश्राम-गृह, व्यायामशालायें, अस्पताल तथा क्लिनिक आदि स्थापित किये गये हैं। खानों आदि में काम करनेवाले मज़दूरों के स्वास्थ का विशेष ध्यान रखा जाता है। उत्पादन के लिये प्रयत्नशील रहने के कारण उन्हें हैंगचौ, छिंगताव्, डैरेन, पैताय् ह आदि स्थानों में विश्राम करने के लिये भेजा जाता है। उन्हें शिक्षित बनाने तथा उनके सांस्कृतिक जीवन को उन्नत करने के लिये, अनेक स्कूल, सांस्कृतिक भवन, क्लब तथा पुस्तकालय आदि खोले गये हैं। सन् १९५२ के अन्त तक, कारखानों और खानों में काम करनेवाले ३० लाख से अधिक मज़दूर अतिरिक्त समय में चलनेवाले साक्षरता के स्कूलों में शिक्षा प्राप्त करते थे। टैकनिकल स्कूल अलग हैं। अखिल चीन श्रमिक संघ की ट्रेड यूनियनों द्वारा भी श्रमजीवियों के लिये स्कूल चलाये जाते हैं। सरकार की ओर से ख़ास तौर पर श्रमजीवियों और किसानों के लिये मिडिल स्कूलों की व्यवस्था है। पीकिंग के जनता विश्वविद्यालय में श्रमिकों के शिक्षा-ग्रहणकाल में भी उनका वेतन बराबर मिलता है। पीकिंग, टीन्सटिन आदि नगरों में श्रमिकों के लिये सांस्कृतिक भवन स्थापित किये गये हैं, जहां वे लोग अवकाश के समय नृत्य, नाटकों आदि के द्वारा मनोरंजन करते हैं।

पहले, मज़दूरों को रहने के लिये मकान नहीं मिलते थे और मिलते भी थे तो उनके रहने के लिये काफ़ी नहीं थे। लेकिन अब टीन्सटिन, पीकिंग,

शंघाई, कैण्टन आदि नगरों में कारखानों की ज़मीन पर या कारखानों के पास ही, उनके लिये आधुनिक ढंग के हज़ारों घर बनाये जारहे हैं। अनेक कारखानों ने अपने श्रमजीवियों के लिये इस ढंग के नये घरों का निर्माण किया है। गृह-निर्माण का खर्च म्युनिस्पल जनता की सरकार, पब्लिक तथा निजी कारखानों में बांट दिया जाता है। मकानों के निर्माण के समय, श्रमजीवियों की भी सलाह ली जाती है। शंघाई में बनाये हुए घरों में बिजली, फ्लश तथा बगीचों आदि की भी व्यवस्था है। इन मकानों के साथ सहकारी संस्था, क्लिनिक, स्कूल तथा क्लब आदि भी रहते हैं।

साम्राज्यवाद और सामन्तवाद के जुए से मुक्त, चीन का श्रमजीवी भली भांति समझता है कि दुनिया के श्रमजीवियों के संगठन के बिना विश्व में शान्ति क़ायम नहीं रह सकती और साम्राज्यवादी आक्रमण को नहीं रोका जा सकता; इसीलिये 'अमरीकी आक्रमण को रोको और कोरिया की मदद करो' तथा भ्रष्टाचार-विरोधी राष्ट्रीय आन्दोलनों में भाग लेने के साथ-साथ, वह सदा समस्त दुनिया के श्रमजीवियों की एकता का समर्थक रहा है।

श्रमजीवी और कृषक—इन दोनों वर्गों के सहयोग से ही चीनी कम्युनिस्ट पार्टी साम्राज्यवाद तथा क्वो मिंतांग के प्रतिक्रियावादी गुट को पराजित कर सकी है। इन क्रांतिकारी शक्तियों द्वारा ही चीन नई लोकशाही से समाजवाद की ओर अग्रसर हो सकेगा। इसलिये, चीनी क्रांति में श्रमजीवी वर्ग का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है।

अर्थ-व्यवस्था का पुनर्निर्माण

सदियों से एक अर्द्ध-औपनिवेशिक और अर्द्ध-सामन्ती देश रहने के कारण, चीन की अर्थ-व्यवस्था में उन्नति नहीं होसकी और लगातार युद्धों से क्षत-विक्षत होगई थी। क्वो मिंतांग काल की मुद्रा-स्फीति के कारण, सन् १९३७-४८ के बीच वस्तुओं के दाम ६० लाख गुने बढ़ गये थे। 'गोल्ड य्वान्' नोट चला कर मुद्रा-प्रसार रोकने की कोशिश की गई थी। परन्तु, आठ महीनों के अन्दर इन नोटों की क़ीमत भी काग़ज़ के टुकड़ों से अधिक नहीं रह गई और वस्तुओं की क़ीमत १,००,००,००० गुनी बढ़ गई थी। क्वो मिंतांग के सिपाही भागते समय सोना, चांदी, कपड़े-लत्ते आदि जो कुछ भी साथ ले जा सकते थे ले गये और बाक़ी को नष्ट-भ्रष्ट कर गये थे। उन्होंने रेलें तक नष्ट कर दी थीं। इसलिये, यातायात के साधन भी नहीं रह गये थे। जब जनमुक्ति सेना के सिपाहियों ने शंघाई को मुक्त किया, तो रुई और कोयले के अभाव के कारण सैकड़ों कारखाने बन्द थे, सूत और कपड़े की क़ीमत घटी हुई और चावल की बढ़ी हुई थी; जिससे देश का सारा व्यापार चौपट होगया था।

विदेशी साम्राज्यवादी बड़े खुश थे। उन्हें विश्वास था कि चीन की आर्थिक दशा को व्यवस्थित करना नयी सरकार के बूते का काम नहीं है। वे मज़ाक़ में कहा करते थे—'सैनिक सफलताओं में चीनी कम्युनिस्टों के १०० नम्बर, राजनीतिक मामलों में ८० और आर्थिक मामलों में १० !" वास्तव में, मुक्ति के बाद का काल चीन के लिये घोर आर्थिक संकट का काल था। यह ठीक है कि सन् १९४९ में कम्युनिस्ट पार्टी ने चीन का दो-तिहाई हिस्सा मुक्त किया था। लेकिन साथ ही, इस विजय को पाने के लिये उन्हें अपने ९० लाख सैनिकों आदि का भरण-पोषण करना पड़ता था और

आत्मसमर्पण करनेवाले तथा गिरफ़्तार किये जानेवाले क्वो मिंतांग के लाखों सैनिकों को भोजन-वस्त्र आदि देना पड़ता था। इन सब कारणों से, नयी सरकार की घोषणा होने के पश्चात भी सन् १९४९ में तीन बार वस्तुओं के मूल्य में वृद्धि हुई और १९५० के बजट को ११.५% बैंक नोट जारी करके पूरा किया गया। सन् १९३७-३८ में, क्वो मिंतांग सरकार के वार्षिक बजट में औसतन ८०% की कमी रहा करती थी और कुल बजट का ८०% फ़ौज पर व्यय किया जाता था। बजट की यह कमी ढेर के ढेर नोट छाप कर पूरी की जाती थी। इस दृष्टि से नई सरकार का बजट काफ़ी आशाजनक था।

जो कुछ भी हो, जनता का विश्वास प्राप्त करने के लिये मुद्रा-स्फीति को रोक कर वस्तुओं के दामों को निश्चित करना आवश्यक था, जिससे औद्योगिक और व्यापारिक दशायें सुधर सकें। कृषि सम्बंधी उत्पादन में सुधार और वृद्धि करने के लिये भूमि-सुधार आन्दोलन चलाना आवश्यक था, जिससे किसानों की जीविका में उन्नति हो और उनकी क्रय-शक्ति बढ़े। औद्योगिक उत्पादन पुनः स्थापित करना, राज्य-संचालित उद्योग-धंधों में विकास करना, निजी उद्योग-धंधों की सहायता करना और उनमें सुधार करना भी आवश्यक था; जिससे कि श्रमिकों और दफ़्तरों के कार्यकर्त्ताओं के जीवन को उन्नत बनाया जासके। इसी प्रकार, गांवों और नगरों के व्यापारिक सम्बंधों में वृद्धि करने के लिये यातायात को दुरुस्त करना और औद्योगिक तथा कृषि सम्बंधी उत्पादन में विकास करने के लिये चीन और विदेशों के व्यापार को बढ़ाना भी ज़रूरी था।

इन सब आवश्यक कार्यों को जनवादी सरकार ने अनेक सरकारी कर्मचारियों का वेतन कम करके, सरकारी संस्थाओं तथा सेना की टुकड़ियों को उत्पादन के काम में लगाकर, माल की मांग तथा उसके वितरण का संतुलन करके और राज्य बैंक स्थापित करके पूरा किया; जिससे मार्च सन् १९५० में मुद्रा-स्फीति रुक जाने से वस्तुओं की क़ीमतें स्थिर होगई। फल यह हुआ कि सन् १९५१ में राज्य को व्यय की अपेक्षा आमदनी अधिक हुई, १९५२ का बजट बराबर रहा जिसका आधे से अधिक भाग आर्थिक और सांस्कृतिक विकास में खर्च करने के लिये अलग रख दिया गया। चीन के इतिहास में इस प्रकार का यह पहला बजट था।

सन् १९५३ के बजट में आर्थिक, सांस्कृतिक और शिक्षा सम्बंधी निर्माण के लिये अधिक द्रव्य व्यय किया गया। निम्नलिखित आंकड़ों से इसका पता लगता है—

(रुपयों में : १ रुपया=५,२०० य्वान्)

आय

१. टैक्सों द्वारा कुल आमदनी	*२२,०५,४८,५६,१५४	राज्य की कुल आय का ४९. १२%
२. मुनाफ़ा तथा राज्य-संचालित व्यापार सम्बंधी माल के मूल्य में ह्रास की संभावना से अलग रखी हुई रक़म	१३,४५,८६,९२,३०७	,, ,, ,, ,, २९. ९७%
३. उधार तथा बीमा	१,९७,६७,३०,७६९	,, ,, ,, ,, ४.४%
४. अन्य आय तथा गत वर्ष की बची हुई रक़म	७,४१,२२,११,५३८	,, ,, ,, ,, १६. ५१%
कुल आय	४४,९०,३६,७३,०७६	

* इसमें ३७. ४६% औद्योगिक और व्यापारिक टैक्स, १०. ९९% कृषि सम्बंधी टैक्स, ०. ६७% अन्य टैक्स शामिल हैं।

व्यय

१. राष्ट्रीय निर्माण	*२६,६०,२९,०३,८४६	राज्य की कुल आय का ५९. २४%
२. राष्ट्रीय सुरक्षा	१०,०४,८७,८८,५६१	,, ,, ,, ,, २२. ३८%
३. शासन व्यवस्था	४,५७,३०,००,०००	,, ,, ,, ,, १०. १९%
४. अन्य	७०,१३,४६,१५५	,, ,, ,, ,, १. ५६%
५. रिज़र्व फण्ड	२,९७,७६,३४,६१५	,, ,, ,, ,, ६. ६३%
कुल व्यय	४४,९०,३७,७३,०७६	

* इसमें आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और शिक्षा सम्बंधी व्यय शामिल हैं।

तुलनात्मक बजट

आय

	१९५०	१९५१	१९५२	१९५३
१. क. औद्योगिक और व्यापारिक टैक्स	१००	१९५.७२	२३०.८८	२९२.७५
ख. कृषि सम्बंधी टैक्स	१००	११३.५८	१३४.०१	१३४.३२
२. राज्य सम्बंधी व्यापार	१००	३५१.२०	५३५.७१	८०४.९२
३. उधार और बीमा	१००	१७३.४३	७६.६१	३१३.७८
४. अन्य	१००	२९१.५५	५१८.२१	४५४.३१
कुल	१००	२०४.६३	२७२.६०	३३६.२९

व्यय

	१९५०	१९५१	१९५२	१९५३
१. क. राष्ट्रीय आर्थिक निर्माण	१००	२०२.२९	४२१.०१	५९६.४९
ख. सामाजिक, सांस्कृतिक, शिक्षा सम्बंधी निर्माण	१००	१७७.९१	२९५.७०	४६०.८९
२. राष्ट्रीय सुरक्षा	१००	१७८.९९	१५१.३०	१८४.८१
३. शासन-व्यवस्था	१००	१३२.९३	१८७.२५	१८१.०८
४. अन्य	१००	१३६.५५	३२२.६४	२०६.३५
कुल	१००	१७४·८२	२३९·७४	३४२.९७

बजट को संतुलित करने के लिये राज्य की ओर से अनेक प्रयत्न किये गये हैं। सर्व प्रथम, वस्तुओं की क़ीमतें स्थिर करने के लिये राज्य-संचालित व्यापार-संस्थायें स्थापित की गई। इन संस्थाओं के ज़रिये सर्वसाधारण के लिये ज़रूरी अनाज, कोयला, रुई, सूत, कपड़ा, लोहा, तेल, नमक आदि वस्तुओं को पर्याप्त मात्रा में जनता के पास पहुंचाया गया; जिससे इन वस्तुओं के दामों में वृद्धि नहीं हुई और काला बाज़ार रुक गया। दूसरी महत्त्वपूर्ण बात थी—

राज्य के बैंक द्वारा मुद्रा का नियंत्रण किया जाना। सरकारी विभागों और राज्य-संचालित व्यापारों की सब रक़म इस बैंक में जमा कर दी गई और मुद्रा-प्रसार को नियमित करने तथा बाज़ार भाव को स्थिर रखने का कार्य बैंक के सुपुर्द कर दिया गया। इससे, मार्च सन् १९५० से वस्तुओं की क़ीमतें धीरे-धीरे स्थिर होगईं। सन् १९५१ में क़ीमतों में १३.८% वृद्धि हुई थी, किन्तु अक्तूबर सन् १९५१ से क़ीमतें बढ़ने के बजाय कुछ घटीं। सन् १९५२ के पहले भाग में, प्रति दिन के काम में आनेवाली हज़ारों क़िस्म की औद्योगिक वस्तुओं की क़ीमतों में कमी होगई और साधारण मूल्य अनुक्रमणिका ५% घट गई।

आजकल राष्ट्र की अर्थ-व्यवस्था पर सरकार का पूर्ण नियंत्रण है, जिससे उद्योग-धंधों और व्यापार में काफ़ी उन्नति हुई है। पहले, कृषिप्रधान राष्ट्र होते हुए भी, चीन को बहुत बड़े परिमाण में अनाज और रुई विदेशों से मंगानी पड़ती थी, लेकिन अब वह आत्मनिर्भर होगया है और चावल आदि का कुछ निर्यात तक करने लगा है। यदि सन् १९४९ में अनाज के उत्पादन का परिमाण १०० मान लिया जाय, तो १९५१ में यह संख्या १२८ और १९५२ में १४० तक पहुंच गई थी। इसी तरह, सन् १९५१ में रुई का उत्पादन २५२ और १९५२ में ३०० तक पहुंच गया था।

पहले, औद्योगिक उत्पादन का भी बुरा हाल था। युद्ध काल में, चीन के उद्योगधंधों को जापान और क्वो मिंतांग ने नष्ट-भ्रष्ट कर दिया था। सन् १९३७ में, जापानी युद्ध आरंभ होने के समय राष्ट्र का औद्योगिक उत्पादन राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था का कुल १०% था और १९४९ में युद्ध-पूर्व काल का लगभग आधा रह गया था। मुक्ति के पूर्व, चीन के अधिकतर कारख़ाने प्रायः कच्चा या आधा तैयार किया हुआ माल बनाते थे, जो जापान आदि देशों को भेज दिया जाता था। चीन में लोहे की खानें थीं और कच्ची धातु को अशुद्ध लौह में पिघलाने की मशीनें भी थीं। परन्तु, इस्पात बनाने की मशीनों का अभाव था। मुक्ति के पश्चात, कुल मिलाकर उद्योग-धंधों के उत्पादन में दुगुनी वृद्धि हुई है। कोयले और बिजली के उत्पादन में लगभग दुगुनी तथा लोहे, इस्पात और मशीनों में सात-आठ गुनी वृद्धि हुई है। आजकल कोयला काटने की मशीनें, इलेक्ट्रिक मोटरें, एयर कम्प्रेसर, ट्रैक्टर, औटोमोबाइल, लोकोमोटिव इंजिन, चीरफाड़ के औज़ार, नदियों के पानी को रोकने के लिये भारी फाटक और रेल की पटरियाँ आदि चीज़ें चीन के कारख़ानों में ही तैयार होने लगी

हैं। सूत, रेशम, कागज़, सिगरेट, तम्बाकू, दियासलाई आदि हलके उद्योग-धंधों में भी चीन ने आशातीत उन्नति की है।

गत तीन वर्षों में, चीन ने यातायात को विस्तृत करने में प्रगति की है। सन् १९४९ में, चीन के मज़दूरों ने ५० हज़ार मील रेलवे लाइन और बहुत से पुल दुरुस्त किये थे। सन् १९५० के अन्तिम भाग में, सरकार ने नई रेलें बनाने में भी काफ़ी द्रव्य व्यय किया है। छंग तू चुंग चिंग रेलवे का निर्माण करने के लिये शे चुआन के लोग पिछले ४० वर्षों से प्रयत्न करते रहे, परन्तु सफल न होसके थे। अब जून सन् १९५२ में, यह रेल-मार्ग बनकर तैयार हो गया है। दक्षिण-पश्चिमी चीन के निर्माण में इससे काफ़ी उन्नति हुई है। थ्येन् ष्वै लान् चौ रेल-मार्ग भी अगस्त सन् १९५२ को बन चुका है। इस मार्ग के बनाने में पहाड़ काटकर अनेक सुरंगें बनाई गई हैं, जिसमें सोवियत के विशेषज्ञों से विशेष सहायता मिली है।

उत्पादन वृद्धि और मितव्ययिता आन्दोलनों के कारण भी राष्ट्र-निर्माण कार्य में उन्नति हुई है। इससे कोयले की खानों और कपड़े की मिलों में काम करनेवाले मज़दूरों की उत्पादन शक्ति में वृद्धि हुई है। उत्पादन वृद्धि के कारण, श्रमिकों के जीवन में उन्नति होने से बेकारी धीरे-धीरे खतम होरही है। यदि सन् १९४९ में श्रमिकों का वेतन १०० रुपये मान लिया जाय, तो १९५२ में यह औसतन १६० से २२० रुपये तक होगया है।

चीन का घरेलू व्यापार भी इन दिनों काफ़ी बढ़ा हुआ है। मुक्ति के पूर्व युद्ध तथा मुद्रा-स्फीति के कारण, गांवों और नगरों का पारस्परिक व्यापार एक प्रकार से नष्ट होगया था, लेकिन अब इस व्यापार को बढ़ाने में राज्य की व्यापारिक संस्थायें, सहकारी संस्थायें तथा निजी व्यापार-धंधे—तीनों की सहायता मिल रही है। सहकारी संस्थाओं आदि की मारफत किसान अपनी पैदावार बेचते हैं और शहरों का बना हुआ औद्योगिक सामान खरीदते हैं।

विदेशों से भी व्यापार दिन प्रति दिन बढ़ रहा है। रोज के काम में आने वाली विदेशी वस्तुओं पर नियंत्रण लगाने से, घरेलू उद्योग-धंधों में वृद्धि हुई है; जिससे देश की संचित पूंजी बढ़ी है। पहले, चीन को चावल, कपास, तम्बाकू, सन और बोरी आदि बाहर से मंगानी पड़ती थीं, लेकिन अब ये चीन में ही काफ़ी मात्रा में पैदा होने लगी हैं। अमरीका की नाकेबंदी के बावजूद, सोवियत संघ, पूर्वी योरुप के जनवादी देश, भारत, पाकिस्तान, बरमा, लंका, इण्डोनेशिया आदि देशों के साथ चीन का व्यापार दिन पर दिन बढ़ रहा

है । कोयला, कच्ची धातु, नमक, सोयाबीन आदि खरीदने के लिये तथा अपनी मशीनें आदि बेचने के लिये जापान चीन के साथ व्यापार-सम्बंध बढ़ाना चाहता है, किन्तु अमरीका की नाकेबंदी के कारण लाचार है ।

पहले, चीन का व्यापार तथा औद्योगिक उत्पादन के मुख्य-मुख्य विभाग साम्राज्यवादियों के अधिकार में थे । परन्तु, अब उनके विशेषाधिकार समाप्त होगये हैं । विदेशी पूंजी से चलने वाली कम्पनियों को अपना व्यापार चीन में चालू रखने की इजाजत दे दी गई थी, बशर्ते वे सरकारी नियमों का पालन करने को तैयार हों । इनमें से बहुत सी कम्पनियों ने नई परिस्थितियों के कारण अपना व्यापार बन्द कर दिया है । अमरीकी बैंकों में जमा चीनी सम्पत्ति पर अमरीका के अधिकार कर लेने पर, चीन में लगी हुई अमरीकी पूंजी पर भी चीनी सरकार का अधिकार होगया है ।

चीन में भूमि-सुधार के कारण, ढाई हज़ार वर्षों से चली आनेवाली सामन्ती व्यवस्था खतम कर दी गई है । भूमि-सुधार का कार्य सम्पन्न होने के पश्चात, लगभग २ करोड़ ज़मींदारों को जोतने के लिये जमीन वितरित की गई । इनमें से अधिकांश ज़मींदार अपना सामन्ती पद त्याग कर श्रमजीवी बन रहे हैं । चीन की सामाजिक अर्थ-व्यवस्था में यह एक क्रांतिकारी परिवर्तन कहा जा सकता है ।

नौकरशाही पूंजीवादी अर्थ-व्यवस्था पर अपना पूर्ण नियंत्रण करके, सरकार ने अब इसे राज्य-संचालित अर्थ-व्यवस्था का रूप दे दिया है । पिछले तीन वर्षों में राज्य-संचालित अर्थ-व्यवस्था में तीन गुनी वृद्धि हुई है । राज्य के अधिकार में इस समय लगभग ८०% भारी उद्योग-धंधे, लगभग ४०% हल्के उद्योग-धंधे और हल्के उद्योग-धंधों के अनेक महत्वपूर्ण विभाग हैं । समस्त रेलों और लगभग ६०% जहाजों पर राज्य का अधिकार है । ७०% ऋण और जमा राज्य बैंक के आधीन है ।

राज्य की व्यापारिक संस्थाओं में वृद्धि होरही है और लगभग ९०% आयात-निर्यात इन्हीं संस्थाओं द्वारा किया जाता है । प्रति दिन के काम में आनेवाली अथवा औद्योगिक विकास की दृष्टि से महत्वपूर्ण वस्तुओं का ४० से १००% तक थोक व्यापार राज्य द्वारा ही संचालित होता है । इस तरह, बाजार भाव पर राज्य नियंत्रण रखता है और निजी उद्योग-धंधों, व्यापार और कृषि सम्बंधी उत्पादन के विकास में सहायता पहुंचाता है ।

राज्य की व्यापारिक संस्थाओं के साथ-साथ, राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था तथा जनता की जीविका के लिये हितकर निजी उद्योग-धंधों और व्यापार में भी उन्नति हुई है । शंघाई, टीन्सटिन, पीकिंग, वूहान्, कैन्टन, चुंगकिंग, शी आन्

और मुक्दन नगरों में जनवरी सन् १९५० से दिसंबर १९५१ तक ९२,००० अथवा २७% निजी उद्योग-धंधों की वृद्धि हुई है।

किसानों और दस्तकारों के व्यक्तिगत उद्योग-धंधों को सहकारी संस्थाओं के रूप में संगठित किया जारहा है। जून सन् १९५२ तक, चीन में इस प्रकार की मुख्य संस्थाओं की संख्या ३६,००० थी, जिसके सब मिलाकर १० करोड़ से अधिक सदस्य थे। नये जनवाद द्वारा स्वीकृत राज्याधिकृत अर्थ-व्यवस्था, राज्य की पूंजीवादी अर्थ-व्यवस्था, निजी पूंजीवादी अर्थ-व्यवस्था, तथा किसानों और दस्तकारों की वैयक्तिक अर्थ-व्यवस्था के साथ, सहकारी संस्थाओं का भी पूरी अर्थव्यवस्था में एक महत्वपूर्ण स्थान है।

राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था में राज्याधिकृत अर्थ-व्यवस्था मुख्य है, जो अर्थ-व्यवस्था सुनियोजित समाजवादी ढंग की होने से दिन प्रति दिन उन्नत होरही है और देश की अन्य मुख्य अर्थ-व्यवस्थाओं पर इसका नियंत्रण बढ़ रहा है। कुल मिलाकर देखा जाय तो राज्य की व्यापारिक संस्थाओं की अपेक्षा निजी व्यापार-धंधों की संख्या अधिक है, लेकिन ये निजी व्यापार-धंधे धीरे-धीरे राज्य की व्यापारिक संस्थाओं के आधीन होते जारहे हैं और राज्याधिकृत अर्थ-व्यवस्था के नियोजित उत्पादन में भाग ले रहे हैं। यह अर्थ-व्यवस्था सहकारी संस्थाओं के जरिये किसानों और दस्तकारों की वैयक्तिक अर्थ-व्यवस्था को सहायता पहुंचा रही है, जिससे ये उद्योग-धंधे भी राज्य की योजनानुसार उत्पादन की वृद्धि करने में लगे हैं। इस प्रकार, नियोजित आर्थिक निर्माण द्वारा राष्ट्र को समाजवादी व्यवस्था की ओर अग्रसर किया जारहा है।

सोवियत संघ की मदद से चीनी अर्थ-व्यवस्था उन्नति कर रही है। लेकिन, चीन के कृषिप्रधान देश होने के कारण टैकनीक आदि की दृष्टि से चीन अभी पिछड़ा हुआ है। अभी चीनी सरकार द्वारा राष्ट्रीय निर्माण के लिये एक पंचवर्षीय योजना तैयार की गई है। इस सम्बंध में चीनी जनता की राजनीतिक सलाह मशविरा देनेवाली परिषद की प्रथम राष्ट्रीय कमिटी के चतुर्थ अधिवेशन पर जो प्रस्ताव स्वीकृत किया गया है, उसमें कहा गया है: "उत्पादन की वृद्धि करने, मितव्ययी होने तथा सन् १९५३ के निर्माण की आर्थिक, राष्ट्रीय सुरक्षा तथा सामाजिक और सांस्कृतिक योजनाओं को पूर्ण करने और उन्हें नियत अवधि से पहले समाप्त करने के लिये हमें अपनी सारी शक्ति लगा देनी चाहिये, जिससे राष्ट्रीय निर्माण की पंचवर्षीय योजना को भली भांति आरम्भ किया जा सके।" आशा है, इस योजना के कार्यान्वित होने पर चीन औद्योगीकरण की ओर अधिक प्रगति करेगा और समाजवाद की ओर शीघ्रता से क़दम बढ़ायेगा।

निजी उद्योग-धंधे

कुछ लोग समझते हैं कि चीन में कम्युनिज़्म आजाने से चीन के पूंजीपतियों की सम्पत्ति का राष्ट्रीयकरण होगया है और निजी उद्योग-धंधों के लिये अब कोई स्थान नहीं रहा है। परन्तु मौजूदा हालत में, चीन की वर्तमान सरकार ने इन उद्योग-धंधों को समस्त राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था का आवश्यक अंग मानते हुए, राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था के लिये लाभप्रद व्यक्तिगत पूंजीपतियों के व्यापार की समस्त शाखाओं के विकास की आवश्यकता को स्वीकार किया है। सामान्य कार्यक्रम में निजी उद्योग-धंधों के मालिकों को उचित मुनाफ़ा कमाने की गारण्टी दी गई है।

सरकारी क़ानून के अनुसार, टैक्स आदि देने के बाद कुल मुनाफ़े का कम से कम १०% रिज़र्व फण्ड में जमा करना चाहिये और व्यापार में लगी हुई पूंजी पर अधिक से अधिक ८% के हिसाब से वार्षिक ब्याज भागीदारों को मिलना चाहिये। बाक़ी बची हुई रक़म का कम से कम ६०% भागीदारों का लाभांश, डाइरेक्टर की तनखा तथा निरीक्षक, मैनेजर और सुपरिण्टेण्डेण्ट आदि को बोनस के रूप में दिया जाना चाहिये। कम से कम १५% कारखानों और खानों में स्वास्थ और सुरक्षा के लिये तथा १५% श्रमजीवियों और कार्यकर्त्ताओं के सुरक्षा-फण्ड और विशेष पुरस्कार आदि की मद में जमा करना चाहिये।

मुनाफ़े के इस बंटवारे से स्पष्ट है कि कुल मुनाफ़े का अधिकांश भाग उद्योगपति को और अपेक्षाकृत थोड़ा भाग श्रमिकों को मिलता है। इसके अतिरिक्त, यदि इन उद्योग-धंधों के मालिक वेतन, श्रम-बीमा, स्वास्थ तथा सुरक्षा आदि सम्बंधी नियमों का ठीक-ठीक पालन करें और ईमानदारी के साथ व्यापार करें तो उन्हें अधिक मुनाफ़ा भी हो सकता है। तात्पर्य यह है कि राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था के विकास में तथा देश के औद्योगीकरण में सहायक

निजी उद्योग-धंधों को हर प्रकार से प्रोत्साहित किया गया है। बुर्जुआ देशों की अर्थ-व्यवस्था में केवल पूंजीपतियों के हित का ही ध्यान रखा जाता है, जब कि चीन की जनवादी अर्थ-व्यवस्था में, समाज की उन्नति के अनुरूप, श्रमिक और पूंजीपति दोनों हीं के हितों का ध्यान रहता है। उद्योग-धंधों पर राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था का नियंत्रण रहता है। इसलिये, इनके द्वारा पहले की तरह सट्टे आदि का मनमाना व्यापार नहीं किया जा सकता।

पहले, वहुत से निजी उद्योग-धंधे चीनी जनता के शोषण द्वारा साम्राज्यवादियों, क्वो मिंतांग के नौकरशाही पूंजीपतियों और सामन्ती ज़मींदारों के हितों को साधते थे। इस प्रकार के उद्योग-धंधे, जब तक अपनी कार्य-प्रणाली में परिवर्तन करने को तैयार नहीं हों, तब तक नये चीन में उनका कोई स्थान नहीं हो सकता। पूर्वकाल में, व्यापारी ऐश-आराम की चीजों का व्यापार करते थे या मुद्रा अथवा माल का संग्रह कर उसे अधिक मुनाफ़े पर बेचते थे, जिससे बीच के आदमी को मुनाफ़ा नहीं मिल पाता था। परन्तु, आज व्यापार के लिये गांवों के विस्तृत क्षेत्र खुल गये हैं, जिनके साथ व्यापारिक सम्बंध स्थापित करके निजी उद्योग-धंधों के मालिक नव निर्माण के कार्यों में हाथ बंटा सकते हैं।

निजी उद्योग-धंधों को प्रोत्साहित करने के लिये, सरकार उन्हें माल तैयार करने के आर्डर देती है, जिससे उन्हें एक ओर तो आवश्यक कच्चा माल मिलता रहता है और दूसरी ओर अपने माल को बेचने के लिये बाज़ार मिल जाता है। इस प्रकार के सरकारी आर्डरों की संख्या बढ़ती जारही है। आज चीन के कपड़े, आटे, रबर, सीमेण्ट आदि के अनेक कारखाने प्रायः इन्हीं आर्डरों पर चल रहे हैं।

निजी उद्योग-धंधों को आवश्यकतानुसार जनता के बैंकों द्वारा कर्ज दिया जाता है। क्वो मिंतांग काल में मुद्रा-स्फीति के कारण प्रति दिन १२० % के हिसाब से व्याज चुकाना पड़ता था। व्याज की यह दर प्रति घण्टे घटती-बढ़ती रहती थी। उदाहरण के लिये, यदि कोई व्यक्ति प्रातःकाल १०० रुपये कर्ज़ लेता तो दोपहर तक उसे व्याज समेत २२० रुपये चुकाने पड़ते थे। मुक्ति के बाद भी, व्याज की दर काफ़ी बढ़ी हुई थी। सन् १९४९ में यह दर ९९·५% और १९५० के आरंभ में २३·५% थी। किन्तु जून सन् १९५० में

मुद्रा-स्फीति पर सरकारी नियंत्रण होजाने से, ब्याज की दर ३% तक गिर गई थी। आजकल १·०५% से १·६५% के हिसाब से औद्योगिक धंधों के लिये कर्ज़ दिया जाता है।

साधारणतया, पूंजीवादी देशों की अपेक्षा निजी उद्योग-धंधों पर लगने वाले टैक्सों में भी कमी कर दी गई है। व्यापारियों की अपेक्षा उद्योग-धंधों के मालिकों से और अनावश्यक माल की अपेक्षा आवश्यक माल तैयार करनेवालों से कम टैक्स वसूल किया जाता है। इनकम टैक्स (आयकर) की दर ५% से ३०% तक है। कोयले की खानों, मशीनों, यातायात की सामग्री बनानेवाले कारखानों और किताबों की दूकानों आदि से १० से ४०% तक कम टैक्स लिया जाता है। ग़रीब दस्तकारों के टैक्सों में भी आवश्यकतानुसार कमी की गई है।

इन सभी कारणों से, पिछले तीन वर्षों में चीन के निजी उद्योग-धंधों का पर्याप्त विकास हुआ है; जिससे सन् १९५०-५१ में शंघाई, पीकिंग, टीन्सटिन, कैण्टन और चुंगकिंग में हज़ारों कारख़ानों और दूकानों की वृद्धि हुई है। यदि इन नगरों में सन् १९४९ में निजी उद्योग-धंधों की संख्या १०० मान ली जाय, तो १९५० में यह संख्या ११२ और १९५२ में १४९ तक पहुंचती है।

सान्फ़ान् और वू फ़ान् आन्दोलनों के कारण भी, राष्ट्र के व्यापार-उद्योग में उन्नति हुई है। सान्फ़ान् से सरकारी तथा सार्वजनिक संस्थाओं में भ्रष्टाचार, रिश्वतख़ोरी और अपव्यय दूर करने में तथा वू फ़ान् से निजी उद्योग-धंधों से रिश्वतख़ोरी, टैक्स न देना, राज्य की चोरी, सरकारी ठेकों में छल तथा व्यक्तिगत लाभ के लिये सरकारी सूचनाओं का उपयोग आदि के दूर करने में मदद मिली है।

हमने पीकिंग में आटे की एक प्राइवेट मिल देखी। टीन्सटिन की बनी, आटा पीसने की बड़ी-बड़ी मशीनें लगी हुई थीं। थैली में आटा भरने तथा उन्हें तौलने और सीने का सब काम मशीनों द्वारा होरहा था। मिल में उत्पादन-वृद्धि आदि के नक़्शे टंगे हुए थे। राष्ट्र के उत्पादन को बढ़ाने के लिये, श्रमजीवियों द्वारा निम्नलिखित प्रतिज्ञा-पत्र बोर्ड पर लगा था : "काम करते समय, हम लोग किसी निजी काम से बाहर नहीं जायेंगे; समय से पहले काम नहीं छोड़ेंगे; माल ख़राब नहीं करेंगे; उत्पादन के स्तर को नीचे नहीं

गिरने देंगे।" जिस देश के श्रमजीवियों को मिल मालिकों से किसी प्रकार का भय न हो, उसी देश के श्रमजीवी इस प्रकार का प्रतिज्ञा-पत्र लिखकर दे सकते हैं।

उक्त मिल का मालिक एक ही व्यक्ति है, भागीदार कोई नहीं है। मिल मालिक ने बताया कि पहले अमरीका और कनाडा से आटा आयात होने के कारण उसका माल बहुत कम बिकता था, जिससे सन् १९४८ में उत्पादन बहुत घट गया था। इसके अलावा, १९ अगस्त, १९४८ को क्वो मिंतांग सरकार द्वारा 'गोल्ड य्वान्' जारी करके, वस्तुओं की क़ीमतें स्थिर करने की कोशिश की गई थी, जिससे उसे बहुत सा माल बाजार में कम क़ीमत पर बेचना पड़ा था। परन्तु, आजकल सरकार द्वारा मिल मालिकों के हितों की गारण्टी होजाने के कारण उत्पादन बढ़ गया है। मुक्ति के पूर्व, इस मिल में केवल आठ मशीनें थीं; अब चौदह हैं। मिल की दो मंजिलें तथा नये घर आदि भी बाद में ही बने हैं। पहले, सरकार अनेक प्रकार के टैक्स लेती थी लेकिन अब इनकम टैक्स के सिवाय, और टैक्स नहीं देने पड़ते। सबसे बड़ी बात यह है कि पहले समाज में व्यापारी का पद प्रतिष्ठित नहीं समझा जाता था, लेकिन अब नई जनवादी नीति के अनुसार देश की अर्थ-व्यवस्था में राष्ट्रीय बुर्जुआ का महत्वपूर्ण स्थान है।

पीकिंग में २५-३० वर्षों से रहनेवाले एक सिल्क के भारतीय व्यापारी से भेंट करके भी, हमने निजी उद्योग-धंधों की स्थिति का पता लगाया। उक्त व्यापारी ने बताया कि मौजूदा सरकार किसी भी व्यापार-धंधे को नहीं रोकती, बल्कि कुछ टैक्स माफ़ करके अथवा मामूली ब्याज पर कर्ज आदि देकर, हर तरह से व्यक्तिगत व्यापारियों की सहायता ही करती है; लेकिन शर्त यह है कि ईमानदारी और सचाई के साथ, उचित मुनाफ़ा लेते हुए व्यापार किया जाय। इस व्यापारी ने टैक्स सम्बंधी हिसाब-किताब की जांच-पड़ताल करने वाले सरकारी कर्मचारियों की नैतिकता की सराहना करते हुए, बताया कि ये लोग जनता से सिगरेट तक लेना बुरा समझते हैं।

व्यापार-उद्योग का केन्द्र : शंघाई

चीन की आर्थिक और व्यापारिक दशा का परिज्ञान करने के लिये, शंघाई देखना आवश्यक है। हमारे विद्यार्थी च्यांग क्वांग श्वे ने हमारे टिकट आदि की व्यवस्था करदी और हम स्टेशन पहुंचकर मुसाफ़िरों की क़तार में खड़े होगये। सीटी बजते ही, प्लेटफार्म पर अन्दर जाने का दरवाज़ा खुला और मुसाफ़िर रेल-कर्मचारियों की सहायता से बड़े क़ायदे से रेल में बैठते गये। चीन के मुसाफ़िर बहुत सामान साथ लेकर नहीं चलते। इसलिये, स्टेशनों पर कुलियों की भीड़ नहीं रहती। चीन में सिर पर सामान उठाकर ले जाने का भी रिवाज नहीं है। इसलिये, चीनी कुली एक ठेले में कई मुसाफ़िरों का सामान लाद लेते हैं। एक अदद का लगभग तीन आने से कुछ कम पड़ता है, जिसकी रसीद तुरन्त मिल जाती है।

शंघाई एशिया का एक सुप्रसिद्ध नगर है। विदेशों से आनेवाले टूरिस्ट इसे पूर्व का पेरिस कहते थे। पीकिंग यदि चीन का सांस्कृतिक नगर है, तो शंघाई व्यापारिक केन्द्र है। इसलिये पीकिंग की अपेक्षा, यहां के निवासी अधिक सुंदर वेश-भूषाओं में दिखाई दिये। पीकिंग में अंग्रेज़ी भाषा के इश्तिहार या साइन-बोर्ड ढूंढ़े न मिलेंगे, जबकि शंघाई की ट्रामों और अनेक दूकानों के बोर्ड अभी तक अंग्रेज़ी में ही हैं। यहां हाँगकाँग, सिंगापुर, कोलम्बो या बम्बई जैसा पश्चिमी वातावरण नहीं है। ब्रॉडवे मेन्शन, कैथे होटल, मैट्रोपोल होटल आदि की गगनचुम्बी इमारतें खड़ी हुई हैं। यहां की बण्ड रोड पहले ब्रिटिश दूतावास,

अमरीकी दूतावास और विदेशियों की बड़ी-बड़ी फर्मों तथा कम्पनियों के कारण संसार भर में विख्यात होगई थी। शंघाई के बाज़ार क्रोमियम क्लब, अमरीका की सिगरेट, स्कॉटलैण्ड की ह्विस्की, डेनमार्क की बियर, चकले और लिपस्टिक के लिये प्रसिद्ध थे। इस नगर को सुरा, कामिनी और संगीत का नगर कहा जाता था। चीनी मिट्टी के बरतनों के स्थान पर, प्लास्टिक के सामान की खपत ही यहां अधिक होती थी। एक ओर विदेशी बैंकों, क्लबों और रेस्तोरॉओं की भरमार थी और दूसरी ओर सूर्य की किरणों से अछूती, कीचड़ और दुर्गन्धमयी श्रमजीवियों की गलियां थीं; जहां बीमारी, भूख, अज्ञान और अन्धविश्वास का अटल साम्राज्य था। नगर के लाखों गृहविहीन नर-नारी रात को फुटपाथ पर सोते और प्रातःकाल कितने ही निश्चेष्ट अवस्था में पाये जाते थे। भिखारियों की टोलियां बाज़ारों और गलियों का चक्कर काटा करतीं तथा रिक्शा-कुली मज़दूरी के अभाव में रात्रि के समय राहगीरों की गाँठें काट कर अपने पेट भरते थे। शंघाई अपराधों की राजधानी के नाम से प्रसिद्ध होगया था।

वेश्याओं की हालत अत्यंत करुणाजनक थी। शाम को ५ बजे के बाद, किसी भले आदमी का उनके मुहल्लों से गुज़रना कठिन होजाता था। वे रास्ता-चलते को हाथ पकड़ कर ले जातीं थीं। देश-विदेशों की स्त्रियों को यहां पनाह मिलती थी। अनेक किसान-मजदूरों की बहू-बेटियां अपनी आर्थिक परिस्थिति के कारण असहाय होकर, यहां धनिकों के घर रखेल के रूप में रहती थीं। उनकी गुलामी या नौकरी करतीं, कारखानों या खानों में मज़दूरी करतीं और कुछ न मिलने पर, चकलों में अपनी दूकानें खोल देती थीं। शंघाई अपने चकलों के लिये संसार भर में विख्यात था। यहां आलीशान होटलों की अलग-अलग मंज़िलों में भिन्न-भिन्न प्रान्तों की युवतियां रखी जातीं थीं। यदि वे मालिक की आज्ञा मानने में आनाकानी करतीं, तो खाट से बांध कर जलती हुई सिगरेटों से उनके शरीरों को दागा जाता था!

ताइपिंग विद्रोह के समय शंघाई का विस्तृत 'रेसकोर्स' अंग्रेज़ों के अधिकार में आगया था, जिसके लिये उन्हें किसी प्रकार का सरकारी टैक्स नहीं देना पड़ता था। घुड़दौड़ के समय, यहां लाखों के वारे-न्यारे हुआ करते थे। जापानी युद्ध के समय, जापानी सैनिकों और बाद में अमरीकी सैनिकों ने इसका उपभोग किया। शंघाई विदेशी साम्राज्यवादियों का अड्डा बन गया था।

ट्राम, टेलीफोन, बस आदि की कम्पनियां, बड़े-बड़े कारखाने और मीलों लम्बे बाज़ार विदेशियों के ही हाथों में थे। फ्रेंच-आवास में केवल फ्रांस के निवासी और ब्रिटिश-आवास में अंग्रेज़ लोग ही रह सकते थे। अनेक स्थानों में चीनियों का प्रवेश निषिद्ध था। इनकी म्युनिस्पैलटियां और कचहरियां भी अपनी ही थीं। विदेशी व्यापारी बिना पूंजी के बड़ी-बड़ी कम्पनियां खोलते और शेअर-होल्डरों को थोड़ा सा पैसा देकर बाक़ी अपनी जेबों में भर लेते थे।

भ्रष्टाचार अपनी सीमा को पार कर गया था। रिश्वतखोर सरकारी कर्मचारी किसी आदमी को इनकम टैक्स से बरी करने के लिये दफ़्तर से फाइलों की फाइलें ग़ायब कर देते थे। मुद्रा-स्फीति का कोई हिसाब न था। आरम्भ में, च्यांग काई शेक के ३०० चीनी डॉलर अमरीका के १ डॉलर के बराबर होते थे। कुछ समय बाद, इनका दाम ३ लाख होगया और फिर ६० लाख तक पहुंच गया था! शंघाई की मुक्ति के समय, यहां ६,७९,४६,००,००,००,००० 'गोल्ड य्वान्' प्रचलित थे! ऐसी दशा में काग़ज़ के ये पुरज़े पितरों के समक्ष जलाकर केवल मनबहलाव की चीज़ रह गये थे! आख़िर क्वांग तुंग के किसी मिल मालिक ने इन नोटों के ८०० बक्सों को काग़ज़ बनाने के लिये ख़रीद लिया था!

मुक्त होने के कुछ दिन पूर्व, शंघाई में क्वो मिंतांग सरकार के प्रधान अधिकारी और नानकिंग-शंघाई-हैंगचो गैरिसन प्रधान कार्यालय के राजनीतिक विभाग के प्रमुख ने अपनी घोषणा में कहा था: "सैन्य सम्बंधी कतिपय कारणों से नानकिंग, वू शि और हैंगचो ख़ाली कर दिये गये हैं, किन्तु व्यापार और संस्कृति के केन्द्र—विश्व-विख्यात शंघाई नगर—की तब तक रक्षा की जायेगी, जब तक कि हमारा एक आदमी भी बाक़ी रहेगा। किन्तु २० अप्रैल, १९४९ को जनमुक्ति सेना के सिपाहियों ने यांगत्से नदी को पार करके, तीन दिनों के अन्दर क्वो मिंतांग सरकार की राजधानी नानकिंग को मुक्त किया और फिर नानकिंग, वू शि, वू हू और क्यांग यिन् एक के बाद एक मुक्त होते गये। क्वो मिंतांग के सेनापतियों ने अपनी सेनाओं की टुकड़ियों के साथ आत्मसमर्पण करना आरंभ कर दिया। जनमुक्ति सेना ने शंघाई पर घेरा डाल दिया। सू चौ की खाड़ी में छुटपुट गोलीबारी के पश्चात, क्वो मिंतांग की २३० वीं टुकड़ी के १,५०० सैनिकों ने हथियार डाल दिये और वे जनमुक्ति सेना में आ मिले। बाक़ी बचे हुये १ लाख ३० हज़ार सैनिकों को गिरफ़्तार

कर, उनसे शंघाई की सड़कों पर मार्च कराया गया। जनता ने यांग को नृत्य द्वारा जनमुक्ति सेना का अभिनन्दन किया। अमरीकी गोला-वारूद के वल पर, अपनी विजय की डींग मारनेवाला च्यांग पहले ही नानकिंग से चुपचाप पलायन कर गया था!

नगर की अर्थ-व्यवस्था और व्यापार तथा उद्योग-धंधों पर जनता की सरकार का अधिकार होगया। साम्राज्यवादी और उनके हाथों में खेलनेवाला, च्यांग काई शेक कहा करता था कि नगर पर कम्युनिस्टों का अधिकार होजाने से शंघाई की आर्थिक-व्यवस्था बरबाद हो जायेगी। लेकिन, माओ त्से तुंग ने निर्भीकतापूर्वक अपनी कमज़ोरियों को जनता के सामने रखकर, सहयोग के लिये अपील की।

शंघाई की आवादी लगभग ५० लाख है। स्त्री-पुरुष और बाल-वच्चे स्वछन्द भाव से चले जारहे हैं। फुटपाथों पर कांच के गिलासों में चाय बिक रही है। दूकानों पर मुर्ग़ी, वतख़ आदि का मांस टंगा हुआ है। सूखी मछलियां और अंडे विक रहे हैं। लोग तिपाइयों पर बैठे, भोजन-गृहों में खाना खारहे हैं। होटलवाला अपना सारा होटल वँहगी में उठाकर ले जारहा है। नाई हजामत का सारा सामान लिये, घंटी बजाता हुआ चला जारहा है। सुन्दर फूल-पत्तियों से दूकानें सजी हुई हैं। कारीगरों की दूकानों पर तलवार, बाजे, नाटक का सामान, विविध प्रकार के लोहे और लकड़ी के औज़ार टंगे हुए हैं। कुछ दूकानों पर झींगुर, टिड्डे, कीड़े-मकोड़े आदि जीव-जन्तु बिक रहे हैं, जो पिंजरों या मिट्टी की कुल्हियाओं में वन्द हैं। बच्चों की अधिक भीड़ है और इन जन्तुओं के द्वन्द्व-युद्ध को देखकर, वे खुशी से अपने-आप में खोये हुए हैं। गरमी के कारण, शाम के समय लोग अपने बाल-बच्चों के साथ फुटपाथों पर हवा खाने के लिये बैठे हुए हैं। महिलायें पीढ़ों पर बैठी हुई, निस्संकोच भाव से शिशुओं को स्तनपान करा रही हैं। ट्रामें और बिजली की बसें दौड़ रही हैं। अमरीकी पेट्रोल के अभाव में, बहुत सी बसें कोयले की सहायता से चल रही हैं। साइकिल और दो सीटों वाले रिक्शों के मज़दूर 'वै-वै' चिल्लाते हुए, द्रुत गति से आगे बढ़ रहे हैं। कहीं रिक्शे और साइकिल की टक्कर लग जाने पर पुलिसमैन दोनों पक्षों को समझा रहा है। मज़दूर हाथ-गाड़ी से माल ढोरहे हैं। एकाध ज्योतिषी भी कहीं दिखाई दे जाता है, जो ब्रश से कांच पर चीनी के अक्षर लिखकर भविष्य का वखान कर रहा है।

शंघाई में चोर, उचक्के, गंठकतरे, गुण्डे तथा भिखारी देखने को नहीं मिले। शंघाई की मुक्ति के बाद, यहां की सड़कों से १ लाख ७० हज़ार आवारों को पकड़ा गया था। इनमें कुछ शरणार्थी भी शामिल थे, जो इधर-उधर से भागकर इकट्ठे होगये थे। इनमें से १ लाख ५० हज़ार स्त्री-पुरुषों को गांवों या शहरों में उनके रिश्तेदारों या दोस्तों के पास भेज दिया गया, बाक़ी २० हज़ार को शंघाई के बाहर कैम्पों में ट्रेनिंग के लिये रख दिया गया। इनमें ३०० स्त्रियां थीं, जो असहाय युवतियों को अपने चंगुल में फंसाकर उनसे वेश्यागृह चलाती थीं। भिखारी बालकों को शंघाई बालगृहों में रख दिया गया। जून सन् १९५० से दिसम्बर १९५१ तक २,४०० बालक शंघाई के बालगृहों में रखे गये और शिक्षा के लिये अन्यत्र भेजे गये थे।

थानों पर पुलिस कर्मचारियों द्वारा मारपीट या गाली-गलौज सुनने-देखने में नहीं आई। मामूली सी कुर्सियां और मेजें पड़ी हुई थीं। सब सादे लिबासों में अपना काम कर रहे थे, जिससे यह मालूम करना कठिन था कि कौन हवालदार है, कौन इन्स्पेक्टर या सुपरिण्टेण्डेण्ट। हम लोग जब दोपहर के समय थाने में अपना नाम दर्ज कराने पहुंचे, तो पुलिस कर्मचारी पठन-पाठन में व्यस्त थे और अध्यापक बोर्ड पर कुछ लिखकर उन्हें समझा रहा था।

शंघाई श्रमजीवियों का मुख्य केन्द्र है। मुक्ति के पूर्व देश की आर्थिक-व्यवस्था छिन्न-भिन्न होजाने से, कच्चे माल के अभाव में हज़ारों फैक्टरियां बन्द थीं। मजदूरों में भयंकर बेकारी फैली हुई थी। ६ फरवरी, १९५० को अमरीकी शह पाकर, च्यांग काई शेक ने इस नगर पर बमबारी करके नगरवासियों को आतंकित करना चाहा था, परन्तु वह सफल न हो सका। वस्तुतः मई सन् १९४९ में शंघाई की मुक्ति के बाद से ही, नगर की जनता संगठित होने लगी और तभी से श्रमजीवियों के लिये रोज़गार की व्यवस्था की जाने लगी थी। शनैः शनैः उनके लिये मकानों आदि का निर्माण होना आरंभ होगया और उनके मुहल्लों में बिजली और पानी का इन्तज़ाम किया जाने लगा। आजकल शंघाई के प्रसिद्ध पूर्वीय होटल को श्रमजीवियों का सांस्कृतिक भवन बना दिया गया है; हैंगचो आदि सुन्दर नगरों में उनके लिये विश्राम-गृह बनाये गये हैं; उनके और उनके बालकों के लिये स्कूल, अस्पताल और स्वास्थ-केन्द्र खोल दिये गये हैं।

रिक्शा चलानेवाले और फुटपाथों पर बैठ कर फुटकर सामान बेचनेवालों के विषय में भी सरकार ने अपनी नीति निर्धारित की है। रिक्शा-मजदूर जब तक कोई अन्य काम सीखकर करने नहीं लगते तथा, जब तक शहर में बसों की संख्या नहीं बढ़ जाती, तब तक उन्हें रिक्शे चलाने से नहीं रोका जायगा। फुटकर सामान-विक्रेताओं के विषय में भी यही बात है। दर असल, ट्रेनिंग-प्राप्त व्यक्ति को आजकल चीन में काम की कमी नहीं है। चर्खा चलाने आदि हाथ के कामों को भी तभी तक प्रोत्साहित किया जाता है, जब तक कि रोज़ी कमाने का कोई बेहतरीन साधन न मिल जाये। सिद्धांततः, चीनी सरकार औद्योगीकरण की समर्थक है और यथाशीघ्र आधुनिक मशीनों की सहायता लेना चाहती है।

गत तीन वर्षों में, चीन ने उद्योग-धंधों और व्यापार में आशातीत उन्नति की है। इसका सबसे बड़ा प्रमाण यही है कि शंघाई की कई-कई मंज़िलों की दूकानें माल से पटी पड़ी थीं। बहुसंख्यक दूकानें निजी थीं। सरकारी स्टोरों में चीन के हर प्रान्त की बनी हुई प्रसिद्ध वस्तुएँ बिक रही थीं। दूकानों पर ख़रीदारों की भीड़ लगी हुई थी। अमरीकी नाकेबन्दी के बावजूद, चीनी जनता की सभी आवश्यकतायें स्वदेशी वस्तुओं से पूरी होरही हैं! हज़ारों निजी कारख़ानों और कम्पनियों के सिवाय, अनेक विदेशी फर्में भी शंघाई में व्यापार कर रही हैं। कुछ विदेशी फर्में बन्द भी हुई हैं, परन्तु इसका कारण सरकारी क़ायदे-क़ानूनों पालन कर सकने की असमर्थता ही अधिक है।

एशिया का एक महान् नगर वर्षों तक अपने खाने-पीने और पहिनने-ओढ़ने की सामग्री के लिये विदेशी जहाज़ों का मुँह ताकता रहा, किन्तु साम्राज्यवाद व क्वो मिंतांग के भ्रष्ट शासन से मुक्त होकर, अब वह अपने गाँवों के लहलहाते हुए खेतों पर नज़र डालकर अपनी तृप्ति करता है! क्या यह विश्व की स्वर्ण अक्षरों में लिखी जानेवाली महानतम घटना नहीं है?

अल्पसंख्यक जातियां

था। क्वो मिंतांग के शासन-काल में, इन जातियों के अनेक लोगों को हान् जाति की अपेक्षा निम्न बताकर, अनेक प्रकार से कष्ट दिया गया और उनको अपने घरों को छोड़ करके अन्यत्र भाग जाने के लिये बाध्य किया गया था। च्यांग काई शेक की 'चीन का भाग्य' पुस्तक में तो अल्पसंख्यक जातियों का भिन्न अस्तित्व ही स्वीकार नहीं किया गया था। फलतः ये जातियां आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक विकास में पिछड़ गई और अनेक जातियां अपनी अर्द्ध-आदिम अवस्था से आगे न बढ़ सकीं थीं।

नई सरकार ने अनुभव किया कि जनवादी स्वायत्त शासन के विना राष्ट्रीय एकता होना असंभव है, इसलिये इन जातियों के विकास के लिए स्वायत्त शासन की घोषणा कर दी गई। कार्यक्रम में कहा गया है कि जनवादी चीन की सीमा में बसनेवाली समस्त अल्पसंख्यक जातियों के अधिकार बराबर हैं। उनके राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा शिक्षा सम्बंधी विकास में सहायता करना सरकार का कर्तव्य है। तदनुसार, जून सन् १९५२ तक इन प्रदेशों में अल्पसंख्यक जातियों के १३० राष्ट्रीय प्रादेशिक स्वायत्त शासन और २०० स्थानीय राष्ट्रवादी जनतांत्रिक संयुक्त सरकारें स्थापित की जा चुकी हैं।

चीन की मौजूदा सरकार शोषण और जातीय विभिन्नता के स्थान पर समस्त जातियों की एकता, भाईचारे और पारस्परिक सहायता को प्रोत्साहित करती है। ये जातियां जनमुक्ति सेना में भरती हो सकती हैं। राज्य की सम्मिलित फ़ौजी व्यवस्था के अनुसार, इन्हें स्थानीय जनता की सार्वजनिक सुरक्षा सेना बनाने का अधिकार दे दिया गया है। अब ये जातियां अपने इलाक़ों की व्यवस्था करने के लिये चुनाव करती हैं, अपनी सरकारें बनाती हैं, अपनी अदालतें क़ायम करती हैं और अपनी भाषा में ही सभी कारबार चलाती हैं। इन जातियों के लिये चुनाव-क़ानून में विशेष व्यवस्था रखी गई है जिसके अनुसार, आगामी चुनावों में ये जातियाँ भी भाग ले सकेंगी।

पहले, खेती-बारी और टैकनीक में पिछड़े रहने के कारण, बहुत सी जातियों को पर्याप्त भोजन और वस्त्र नहीं मिलता था। इस कारण, उन्हें हान् आदि व्यापारियों के शोषण का शिकार बनना पड़ता था। परन्तु, अब राज्य की व्यापारिक संस्थायें अल्पसंख्यक जातियों से उनका माल उचित भाव पर

ख़रीदती हैं उन्हें और कम क़ीमत पर खाद्य पदार्थ तथा वस्त्र आदि बेचती हैं। व्यक्तिगत व्यापारियों को अल्पसंख्यक जातियों के इलाक़े के साथ व्यापार करने की छूट दे दी गई है। अन्तर्मंगोलिया आदि क्षेत्रों में, सहकारी संस्थायें काम कर रही हैं। मेलों आदि के द्वारा, चीन के अन्य प्रदेशों और इन क्षेत्रों के बीच के व्यापारिक आदान-प्रदान में वृद्धि की जाती है।

व्यापार के अलावा, बेकार पड़ी हुई जमीन को कृषि के योग्य बनाकर, बाढ़ों को रोकने के लिये बाँध बनाकर, सिंचाई के लिये पानी संचित करके और खेतों को अधिक उत्पादन के योग्य बनाकर सरकार इन जातियों की आर्थिक स्थिति को उन्नत बनाने की चेष्टा कर रही है। कुछ इलाक़ों में राज्य की ओर से फॉर्म शुरू किये गये हैं, जिनसे किसानों को कृषि के उन्नत तरीक़ों को अपनाने में सहायता दी जाती है। सिंक्यांग आदि में इसी तरह के अनेक सरकारी फॉर्म खोले गये हैं।

अन्तर्मंगोलिया आदि में अधिक खेती-बारी न हो सकने के कारण, अधिकांश जनता पशु-पालन पर ही निर्भर रहती है। इसलिये, इन क्षेत्रों में सरकार ने चरागाह तथा शीत ऋतु के लिये घासचारे आदि की भी व्यवस्था की है। पशु-पालन के तरीक़ों को उन्नत बनाने और पशुओं की बीमारियों को कम करने के लिये अनेक प्रयत्न किये जारहे हैं। दस्तकारी आदि में भी पहले की अपेक्षा उन्नति हुई है। अन्तर्मंगोलिया और सिंक्यांग में आधुनिक उद्योग-धंधों को भी चालू किया गया है।

सरकार की नीति धार्मिक रीति-रिवाजों में हस्तक्षेप करने की नहीं है। इसलिये, इन जातियों में शादी-विवाह सम्बंधी सामाजिक सुधार धीरे-धीरे ही किये जारहे हैं। किसी जाति के बहुसंख्यक लोगों और उनके नेता की सम्मति-पूर्वक ही, ये सुधार किये जाते हैं। इसी नीति के आधार पर, कृषि से सम्बंध रखनेवाले कुछ क्षेत्रों में लगान कम किया गया है और किसानों द्वारा पेशगी दिये हुए रुपये को वापिस ले लिया गया है। कुछ स्थानों में भूमि-सुधार का कार्य भी हुआ है। कुछ ग्राम्य क्षेत्रों में मालिक और नौकर दोनों ही के लिये हितकर नीति अख़्तियार की गई है और ऐसी हालत में उत्पादन-वृद्धि को ही मुख्य माना गया है।

पहले, अल्पसंख्यक जातियां अनेक रोगों से पीड़ित रहती थीं। उदाहरण के लिये, अन्तर्मंगोलिया में प्लेग और उपदंश की बीमारियां बहुत

होती थीं। तिब्बत में बालकों की मृत्यु-संख्या अधिक थी। कुछ जातियां मलेरिया से पीड़ित रहने लगी थीं। इन बीमारियों को दूर करने के लिये सरकार ने लाखों रुपया खर्च करके इन क्षेत्रों में अनेक स्वास्थ-केन्द्र तथा क्लिनिक आदि खोले हैं। तिब्बत की मुक्ति के पश्चात, सरकार के स्वास्थ-मंडल की ओर से तिब्बत में कार्य करने के लिये डाक्टरों की टुकड़ियां भेजी गई हैं। संक्रामक रोगों को दूर करने के लिये भी इनके इलाक़ों में काम किया गया है।

इन जातियों के धार्मिक रीति-रिवाज तथा उनकी बोलियों के प्रति आदर-भाव रखने का उल्लेख सामान्य कार्यक्रम में किया गया है। ख़ासकर मुसलमानों के इलाक़ों को मुक्त करने के पूर्व जनमुक्ति सेना के सिपाहियों को निम्नलिखित नियम पालन करने का आदेश दिया गया था; इससे उक्त नीति का समर्थन होता है—

१. मसजिदों और मुल्लाओं की रक्षा करो। मसजिदों के अन्दर मत जाओ और उनकी दीवारों पर पोस्टर आदि न चिपकाओ।

२. मुसलमानों के घरों में सूअर, घोड़े और ख़च्चर का मांस न खाओ।

३. मुसलमान युवतियों की ओर मत देखो, उनके घरों में प्रवेश मत करो।

४. नमाज में विघ्न मत डालो।

५. उनके पेशावघरों का उपयोग मत करो।

६. उनके कुएं से पानी भरने के पहले हाथ धोओ; पानी फिर से कुए में मत डालो।

७. उनको आदर सूचक शब्दों से संबोधित करो।

८. उनके सामने सूअर का नाम मत लो। उनसे यह न पूछो कि वे सूअर का मांस क्यों नहीं खाते अथवा उनकी मसजिदों में क्या होता है।

९. उनके घर शराब या सिगरेट मत पीओ।

१०. अल्पसंख्यक जातियों के प्रति कम्युनिस्ट पार्टी की नीति हर किसी को समझा दो।

इन जातियों की बोलियों के विकास पर भी सरकार ध्यान दे रही है। इसके लिए अल्पसंख्यक जातियों द्वारा बोली और लिखी जानेवाली भाषाओं के

सम्बंध में खोज करने के लिये एक कमिटी नियुक्त की गई है। जिन जातियों की अपनी कोई लिपि नहीं है, उनके लिये यह कमिटी लिपि तैयार करने और जिनकी बोली अपर्याप्त है, उनकी बोली उन्नत करने की चेष्टा कर रही है। उदाहरण के लिये, युन् नान् प्रान्त की यि जाति के लिये एक लिखी जाने वाली बोली का आविष्कार किया गया है। युन् नान् में बोली जाने वाली ताय् भाषा के लिखने में भी सुधार किया गया है। सरकार की इस नीति के परिणाम स्वरूप, मंगोल, तिब्बती, वीवर आदि भाषाओं में लाखों पुस्तकों का प्रकाशन होरहा है, जिसके लिये पीकिंग में एक प्रकाशन-गृह खोला गया है। अल्पसंख्यक जातियों के लिये स्कूलों की संख्या भी लगातार बढ़ रही है।

इन जातियों के इलाक़ों में स्वायत्त शासन की स्थापना होने के कारण, इन क्षेत्रों में काम करनेवाले सरकारी केडरों की आवश्यकता बहुत बढ़ गई है। जून सन् १९५१ में, पीकिंग में अल्पसंख्यक जातियों की केन्द्रीय संस्था की स्थापना इसी आवश्यकता की पूर्ति के लिये की गई थी। यह संस्था शहर के बाहर नये पीकिंग विश्वविद्यालय के पास है और अपनी लाल दरवाज़ों वाली सुन्दर इमारत और विशाल मैदान के कारण, सबका ध्यान आकर्षित करती है। बोर्डिंग हाउस के कमरों में नीचे छात्रों और ऊपर की मंजिल में छात्राओं का वास है। कमरों में नीचे-ऊपर तख़्त लगे हैं और एक-एक कमरे में चार विद्यार्थी नीचे और चार ऊपर रह सकते हैं। वाचनालय में मंगोल, वीवर आदि भाषाओं की पत्रिकायें रखी हुई हैं और रेडियो पर विविध भाषाओं के गीत आदि का कार्यक्रम प्रसारित होता है। सबसे सुन्दर यहां का नाट्य-गृह है, जिसमें १,६०० दर्शक बैठ सकते हैं। नाट्य-गृह की दीवारों पर अल्पसंख्यक जातियों की भाषाओं में पोस्टर लगे हुए हैं। मुसलमान विद्यार्थियों का भोजनालय अलग है।

विश्वविद्यालय में ३४ अल्पसंख्यक जातियों के ६०० से अधिक विद्यार्थी अध्ययन करते हैं। रिचर्स-विभाग के कार्यकर्त्ताओं को मिलाकर ५०० अध्यापक, दुभाषिये आदि काम करते हैं। यहां के अध्यक्ष एक मंगोल और उपाध्यक्ष एक मुसलमान सज्जन हैं। सभी विद्यार्थी एक-दूसरे के रीति-रिवाजों और खान-पान आदि का आदर करते हैं। परस्पर भाईचारे का बरताव रखते हैं। लान चौ, वू छांग, कैण्टन, नानकिंग, छांग तू क्वैयांग और खुनमिंग में इस विद्यालय की शाखायें हैं।

होती थीं। तिब्बत में बालकों की मृत्यु-संख्या अधिक थी। कुछ जातियां मलेरिया से पीड़ित रहने लगी थीं। इन बीमारियों को दूर करने के लिये सरकार ने लाखों रुपया खर्च करके इन क्षेत्रों में अनेक स्वास्थ-केन्द्र तथा क्लिनिक आदि खोले हैं। तिब्बत की मुक्ति के पश्चात, सरकार के स्वास्थ-मंडल की ओर से तिब्बत में कार्य करने के लिये डाक्टरों की टुकड़ियां भेजी गई हैं। संक्रामक रोगों को दूर करने के लिये भी इनके इलाक़ों में काम किया गया है।

इन जातियों के धार्मिक रीति-रिवाज तथा उनकी बोलियों के प्रति आदर-भाव रखने का उल्लेख सामान्य कार्यक्रम में किया गया है। खासकर मुसलमानों के इलाक़ों को मुक्त करने के पूर्व जनमुक्ति सेना के सिपाहियों को निम्नलिखित नियम पालन करने का आदेश दिया गया था; इससे उक्त नीति का समर्थन होता है—

१. मसजिदों और मुल्लाओं की रक्षा करो। मसजिदों के अन्दर मत जाओ और उनकी दीवारों पर पोस्टर आदि न चिपकाओ।

२. मुसलमानों के घरों में सूअर, घोड़े और खच्चर का मांस न खाओ।

३. मुसलमान युवतियों की ओर मत देखो, उनके घरों में प्रवेश मत करो।

४. नमाज में विघ्न मत डालो।

५. उनके पेशाबघरों का उपयोग मत करो।

६. उनके कुएं से पानी भरने के पहले हाथ धोओ; पानी फिर से कुए में मत डालो।

७. उनको आदर सूचक शब्दों से संबोधित करो।

८. उनके सामने सूअर का नाम मत लो। उनसे यह न पूछो कि वे सूअर का मांस क्यों नहीं खाते अथवा उनकी मसजिदों में क्या होता है।

९. उनके घर शराब या सिगरेट मत पीओ।

१०. अल्पसंख्यक जातियों के प्रति कम्युनिस्ट पार्टी की नीति हर किसी को समझा दो।

इन जातियों की बोलियों के विकास पर भी सरकार ध्यान दे रही है। इसके लिए अल्पसंख्यक जातियों द्वारा बोली और लिखी जानेवाली भाषाओं के

सम्बंध में खोज करने के लिये एक कमिटी नियुक्त की गई है। जिन जातियों की अपनी कोई लिपि नहीं है, उनके लिये यह कमिटी लिपि तैयार करने और जिनकी बोली अपर्याप्त है, उनकी बोली उन्नत करने की चेष्टा कर रही है। उदाहरण के लिये, युन् नान् प्रान्त की यि जाति के लिये एक लिखी जाने वाली बोली का आविष्कार किया गया है। युन् नान् में बोली जाने वाली ताय् भाषा के लिखने में भी सुधार किया गया है। सरकार की इस नीति के परिणाम स्वरूप, मंगोल, तिब्बती, वीवर आदि भाषाओं में लाखों पुस्तकों का प्रकाशन होरहा है, जिसके लिये पीकिंग में एक प्रकाशन-गृह खोला गया है। अल्पसंख्यक जातियों के लिये स्कूलों की संख्या भी लगातार बढ़ रही है।

इन जातियों के इलाक़ों में स्वायत्त शासन की स्थापना होने के कारण, इन क्षेत्रों में काम करनेवाले सरकारी केडरों की आवश्यकता बहुत बढ़ गई है। जून सन् १९५१ में, पीकिंग में अल्पसंख्यक जातियों की केन्द्रीय संस्था की स्थापना इसी आवश्यकता की पूर्ति के लिये की गई थी। यह संस्था शहर के बाहर नये पीकिंग विश्वविद्यालय के पास है और अपनी लाल दरवाज़ों वाली सुन्दर इमारत और विशाल मैदान के कारण, सबका ध्यान आकर्षित करती है। बोर्डिंग हाउस के कमरों में नीचे छात्रों और ऊपर की मंजिल में छात्राओं का वास है। कमरों में नीचे-ऊपर तख़्त लगे हैं और एक-एक कमरे में चार विद्यार्थी नीचे और चार ऊपर रह सकते हैं। वाचनालय में मंगोल, वीवर आदि भाषाओं की पत्रिकायें रखी हुई हैं और रेडियो पर विविध भाषाओं के गीत आदि का कार्यक्रम प्रसारित होता है। सबसे सुन्दर यहां का नाट्य-गृह है, जिसमें १,६०० दर्शक बैठ सकते हैं। नाट्य-गृह की दीवारों पर अल्पसंख्यक जातियों की भाषाओं में पोस्टर लगे हुए हैं। मुसलमान विद्यार्थियों का भोजनालय अलग है।

विश्वविद्यालय में ३४ अल्पसंख्यक जातियों के ६०० से अधिक विद्यार्थी अध्ययन करते हैं। रिचर्स-विभाग के कार्यकर्त्ताओं को मिलाकर ५०० अध्यापक, दुभाषिये आदि काम करते हैं। यहां के अध्यक्ष एक मंगोल और उपाध्यक्ष एक मुसलमान सज्जन हैं। सभी विद्यार्थी एक-दूसरे के रीति-रिवाजों और खान-पान आदि का आदर करते हैं। परस्पर भाईचारे का बरताव रखते हैं। लान चौ, त्रू छांग, कैण्टन, नानकिंग, छांग तू क्वैयांग और खुनसिंग में इस विद्यालय की शाखायें हैं।

विश्वविद्यालय की स्थापना के पश्चात, फ़ौजी और शासन सम्बंधी कार्यकर्त्ताओं के लिये ट्रेनिंग कक्षायें भी खोली गई थीं, जिनका कोर्स मार्च सन् १९५२ में समाप्त होगया। इन कक्षाओं में २४ अल्पसंख्यक जातियों के ३०० विद्यार्थी अध्ययन करते थे, जिनमें से अधिकांश ग्रेज्युएट विद्यार्थी स्वायत्त शासन क्षेत्रों में केडरों का कार्य कर रहे हैं। विद्यार्थियों को चीन का आधुनिक इतिहास, चीनी क्रान्ति का इतिहास, अल्पसंख्यक जातियों का इतिहास, सामान्य कार्यक्रम आदि विषय पढ़ाये जाते हैं। भाषा-विभाग में भाषाओं का अध्ययन तथा रिसर्च विभाग में भाषा आदि के सम्बंध में रिसर्च की जाती है।

अल्पसंख्यक जातियों के इलाक़ों में सरकारी नीति को समझने और नव निर्माण में सहायता पहुंचाने के लिये कार्यकर्त्ता तथा दुभाषिये तैयार करना इस विद्यालय का मुख्य उद्देश्य है। परन्तु, अल्पसंख्यक जातियों के अधिकांश विद्यार्थी हान् भाषा (चीनी भाषा) और अध्यापक विद्यार्थियों की विविध बोलियां नहीं समझते। भाषा की इस कठिनाई को दूर करने के लिये अनेक प्रयोग किये गये हैं। सामान्य कार्यक्रम में भी अल्पसंख्यक जातियों की बोलियों को प्रोत्साहित करने का उल्लेख है। इसलिये, इन जातियों के विद्यार्थियों की शिक्षा उन्हीं की बोलियों में होनी चाहिये। किन्तु इन बोलियों को जाननेवाले अध्यापकों के अभाव में, आरंभ में हान् भाषा के माध्यम से ही शिक्षा दी जाती है, जिससे अल्पसंख्यक जातियों के विद्यार्थियों को हान् भाषा का अध्ययन करना आवश्यक होजाता है। हान् भाषा सिखाने की नई पद्धति द्वारा, वे लगभग ६ महीनों में ही यह भाषा समझने और बोलने लगते हैं। किसान, गड़रिये, जीवितबुद्ध, मौलवी-मुल्ला आदि नये भरती होनेवाले विद्यार्थियों को दुभाषियों की सहायता से शिक्षा दी जाती है। इसके अतिरिक्त, जैसे अल्पसंख्यक जातियों के विद्यार्थी हान् भाषा का अध्ययन करते हैं उसी प्रकार, हान् भाषा के अध्यापक और दुभाषिये बननेवाले विद्यार्थी अल्पसंख्यक जातियों की विविध बोलियां सीखते हैं। इनबोलियों को सीखने के लिये भी नई पद्धति का उपयोग किया जाता है और लगभग आठ महीनों में एक बोली सीखी जा सकती है।

विश्वविद्यालय के डाइरेक्टर ने बताया कि राजनीतिक विचारधारा में परिवर्तन और अपने देश की विभिन्न जातियों के सम्बंध में ज्ञान सम्पादन

करने की तीव्र उत्कण्ठा जागृत करके, भाषा सम्बंधी समस्या को बहुत सरलता से हल किया जा सकता है। आपका विश्वास है कि भाषा को उसका उपयोग करते हुये पढ़ने और उस भाषा के बोलनेवालों के घनिष्ट सम्पर्क में रहने से कोई भी भाषा आसानी से सीखी जा सकती है।

चीन की अल्पसंख्यक जातियाँ अपने देश और अपने नेताओं से प्रेम करती हैं। अभी हाल में सब जातियों ने मिलकर अध्यक्ष माओ के प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिये उन्हें ध्वजा अर्पित की थी। सिक्यांग की वीवर जाति ने उनकी प्रशंसा में जो गीत बनाया है, उसे देखिये—

"तुमने हमारी भूमि को एक सुन्दर उद्यान बना दिया है, माओ त्से तुंग !

"तुमने हमारी जनता को आजादी दी है, माओ त्से तुंग !

"हम जानते हैं, तुम हमेशा हमारे ही हित की बात सोचते हो।

"तुम्हारी सहायता से हमने उन्नति की है और नव जीवन का निर्माण किया है।

"जबसे तुम आये हो, हमने अपने संघर्षों में सफलता पाई है।

"तुम हमें अन्धकार से निकाल कर आगे ले जाओगे।

"तुम्हारा अनुकरण करके, हम उन्नत और शक्तिशाली बनेंगे।

"हमारी भूमि में वसंत का आगमन होगया है,

"इसलिये हम खुशी से गान करते हैं—

"माओ त्से तुंग—जिन्दाबाद !

"माओ त्से तुंग—जिन्दाबाद ! !"
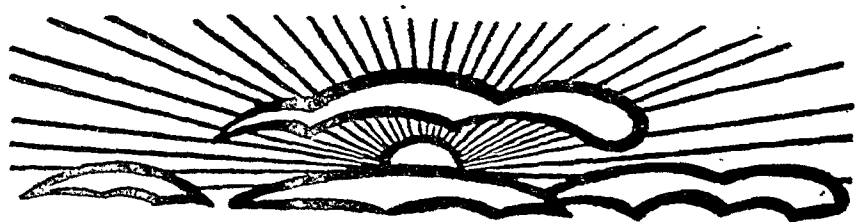
धार्मिक स्वतंत्रता

चीन के पुरातनकालीन-पितर-पूजा और पितृभक्ति आदि आचारप्रधान धार्मिक विश्वासों में भारतीय धर्मों के समान आत्मा और परमात्मा जैसी कोई शाश्वत सत्ता विद्यमान न थी, जिससे चीनी दर्शन में रहस्यवादी गूढ़ तत्वों का समावेश होता। भारत का बौद्ध धर्म चीनी विद्वानों के मस्तिष्क में लगभग १,८०० वर्षों तक रहकर भी क्षणिकवाद, निर्वाण, शून्यवाद और विज्ञानवाद (शुद्ध ज्ञानवाद) आदि दार्शनिक सिद्धान्तों के प्रति क्यों विशेष रस उत्पन्न न कर सका, यह एक विचारणीय प्रश्न है। चीनवासियों ने दीर्घकाय पर्वतों तथा जंगलों को काटकर, हजारों की संख्या में बौद्ध मन्दिर बनवाये, १५ मंजिलों से भी अधिक के हज़ारों पगोड़ों का निर्माण किया और तुन् ह्वांग तथा ता थुंग आदि गहन गुफ़ाओं में बुद्ध-जीवन के अनुपम चित्र आंके। शाक्यमुनि और अमिताभ की घर-घर पूजा होने लगी, फिर भी बौद्ध दर्शन के सूक्ष्म तत्व चीनी मस्तिष्क को आकर्षित न कर सके। इससे चीनी समाज की अत्यन्त यथार्थवादी इहलौकिक और व्यावहारिक परम्परा का ही समर्थन होता है। इतिहास के अध्ययन से पता लगता है कि चीन में धार्मिक कट्टरता प्रायः नहीं ही रही और इसीलिये वहां एक ही कुटुम्ब के व्यक्ति कनफ्यूशियस, ताव् और बौद्ध धर्म के आचार-विचारों को निर्विघ्नता से पालन करने में समर्थ होसके! थांग काल का सम्राट थांग थाय् चुंग् बौद्ध धर्म का महानतम प्रतिष्ठाता होने पर भी, स्वयं ताव् धर्म का अनुयायी था और लाओ त्स को अपना पितृदेव मानता था। चीनी समाज में किसी प्रकार का वर्ण या जातिभेद न होने के कारण, यह समाज पुरोहित वर्ग के उत्पीड़न से भी सुरक्षित ही रहा है।

जो लोग चीनी कम्युनिस्ट पार्टी या चीन की मौजूदा सरकार पर धार्मिक स्वतंत्रता में हस्तक्षेप करने का दोषारोपण करते हैं, वे चीनी समाज की उक्त परम्परा से अवगत नहीं हैं। वास्तव में, सन् १९११ की चीनी क्रांति और १९१७ की महान् रूसी क्रान्ति ने चीनी जनता के धार्मिक विश्वासों में उथल-पुथल मचा दी थी, जिससे सामंतों और धनिकों द्वारा प्रचुर द्रव्य के साथ किये जानेवाले धार्मिक क्रिया-कर्मों की परम्परा नष्ट होने लगी थी। इसी समय चीन के विद्यार्थियों में, विशेषकर विदेशों से शिक्षा प्राप्त कर लौटे हुए चीनी नवयुवकों में, राजनीतिक आन्दोलनों की लहर उठ रही थी। कनफ्यूशियस धर्म का विरोध किया जारहा था। धर्म सामन्तवाद का पोषक था, दकियानूसी आचार-विचारों का समर्थक था और अनुपयोगी शिक्षा-प्रणाली के साथ इसका सम्बंध था। ताव् धर्म में व्यक्तिवाद और अराजकता की प्रधानता थी और यह धर्म रहस्यवादी होने के कारण, जन-साधारण की बुद्धि के बाहर था। बौद्ध धर्म में जन-संघर्ष से दूर भागने का उपदेश था और तब तक वह धर्म एक प्रकार से सामंती परम्परा को सुरक्षित रखने का ही साधन था। ईसाई विदेशी साम्राज्यवादी और चीन के सामन्तों के शोषण का हथियार बना हुआ था। इस्लाम धर्म का क्षेत्र बहुत ही सीमित था और वह समाज की तत्कालीन आवश्यकताओं की पूर्ति करने में सर्वथा असमर्थ था। प्रकारान्तर से, कनफ्यूशियस धर्म के आचार-विचार को पुनरुज्जीवित करनेवाला और वैयक्तिक आत्मसुधार पर आधारित, च्यांग काई शेक का 'नव जीवन आन्दोलन' भी सुंग और खुंग परिवारों के शोषण का एक मात्र साधन होने के कारण, चीनी जनता का मार्ग-दर्शन करने में अत्यन्त निर्बल था। इसी समय समाज के सत्ताधारियों ने साम्राज्यवाद की शक्ति को रोकने के लिये, राष्ट्र के आर्थिक बोझ को समाज के निर्धन प्राणियों के कंधों पर पटक दिया था। समाज के जिम्मेदार कहे जानेवाले लोग दोनों हाथों धन बटोर कर, अपनी तिजोरियां भरने में लगे थे। ऐसी परिस्थिति में, देश की जनता को बरबाद कर देनेवाले साम्राज्यवाद का मुक़ाबिला करनेवाला सिद्धांत ही चीन में लोकप्रिय हो सकता था।

चीनी कम्युनिस्ट पार्टी को धार्मिक संस्थाओं पर प्रहार करने की आवश्यकता ही नहीं पड़ी। पश्चिम के ज्ञान-विज्ञान ने कनफ्यूशियस और ताव् धर्मों की मान्यताओं को ढहा दिया था। गत ५० वर्षों से बौद्ध धर्म, विशेषकर उत्तरी

चीन में जापानी युद्ध-काल में, अन्तिम सांसें ले रहा था। ऐसी परिस्थिति में सामान्य कार्यक्रम में धार्मिक रीति-रिवाज़ों के पालन करने की व्यक्तिगत स्वतंत्रता की घोषणा करके मौजूदा सरकार ने अपनी परम्परागत सहिष्णुता, समन्वयशीलता और व्यवहारिक मनोवृत्ति का ही परिचय दिया।

हम लोग हैंगचौ, शंघाई, नानकिंग और पीकिंग आदि के बौद्ध मंदिर और पगोड़े देखने गये थे और इनमें कोई ऐसी बात नहीं पाई गई, जिससे कहा जासके कि चीनी सरकार ने धर्म-स्थानों में किसी प्रकार का हस्तक्षेप किया है। सन् १९३०-३३ की गणना के अनुसार, केवल हैंगचौ में १,००० बौद्धों के धर्म-स्थान विद्यमान थे; आजकल भी यहां पहाड़ियों और जंगलों के सुरम्य स्थानों के बीच एक से एक सुन्दर अनगिनत बौद्ध मन्दिर और पगोड़े बने हुए हैं। यहां के लिंग यिन् नामक मंदिर में बहुत सा रुपया व्यय करके सरकार इसकी मरम्मत करा रही है। अन्य मंदिरों में भी मरम्मत का काम चल रहा है। कुछ मन्दिरों की मूर्तियों के हाथ-पांव खण्डित होगए हैं, फर्श ख़राब होगया है या जगह-जगह घास-फूस उग आई है, जिससे यही प्रतीत होता है कि मंदिरों में भक्त लोगों का आवागमन कम होगया है। कुछ मंदिरों में आसपास के लोगों को आराम करते तथा जनमुक्ति सेना के सिपाहियों को रहते हुए भी पाया गया, परन्तु इन मंदिरों की मूर्तियां आदि व्यवस्थित थीं।

शंघाई के जेड-बुद्ध के मंदिर में भी सरकार ने काफ़ी धन ख़र्च किया है। इस मंदिर में बुद्ध की एक विशाल मूर्ति हिम पर्वत पर ध्यानमग्न मुद्रा में है। जेड-निर्मित बुद्ध मूर्ति रजत-जटित काष्ठ की सुन्दर मंजूषा में प्रतिष्ठित है। चारों ओर काष्ठमय लोहान् (अर्हत) बने हैं। अनेक देवी-देवता तथा अवलोकितेश्वर और अमिताभ आदि की मूर्तियाँ हैं। मंदिर में भिक्षुशील आदि भारतीय विद्वानों द्वारा अनूदित चीनी त्रिपिटक के ५,७०० भाग सुरक्षित हैं। कुछ ग्रन्थ ताड़पत्रों के समान किन्हीं विशेष पत्रों पर लिखे हुए हैं, जो पत्रों के बीच में बंधे हुए डोरे की सहायता से पत्रों की भांति उलटे जाते हैं। भारतीय जन्मपत्री की तरह खुलनेवाले ग्रन्थ भी हैं। कुछ बौद्ध सूत्र स्वर्ण अक्षरों में अंकित हैं। मंदिरों में बौद्ध भिक्षु निवास करते हैं, जो भारतीय पद्धति से प्रणाम और चरण-स्पर्श आदि करते हैं। प्रधान भिक्षु बौद्ध धर्म का उपदेश देता है। हम लोग जब मंदिर में पहुँचे, कुछ लोग दर्शन के लिये आये

हुए थे। बुद्ध-जयंती आदि के अवसर पर यहां खासी भीड़ जमा होजाती है। बौद्ध धर्मानुयायी चाव्, जिन्होंने शरणार्थियों के लिये पहले बहुत काम किया था, यहीं रहते हैं। आप जनता की राजनीतिक सलाह-मशविरा देनेवाली परिषद के सदस्य हैं। आपने बौद्ध धर्म के प्रतिनिधि की हैसियत से पीकिंग की शान्ति परिषद में भाग लिया था। आपने बताया कि माओ त्से तुंग ने जनता के धर्म के लिये, बहुजन धर्म के लिये मंगलकामना व्यक्त की है।

पहले, पीकिंग का लामा मंदिर मंचु राजवंश के राजकुमार युंग का सुन्दर प्रासाद था। उसकी मृत्यु के बाद, छयेन् लुंग नामक सम्राट के समय इसे लामा मंदिर बना दिया गया। इस मंदिर में ५० फीट ऊंची मैत्रेय की खड्गासन की विशाल मूर्ति बनी हुई है, जो श्वेत चन्दन के एक समूचे काष्ठ से निर्मित की गई है। मूर्ति के चारों ओर वान् फू लो (दस हज़ार बुद्धों की बुर्जी) बनी हुई हैं। इस मंदिर में लामा धर्मानुयायी ८० लामा रहते हैं, जिनमें अधिकांश मंगोल हैं। बाक़ी तिब्बती, हान् या मंचु हैं। एक साधु की अवस्था केवल १६ वर्ष की थी। जब हम लोग मन्दिर में पहुंचे, तो पीली सिल्क से आच्छादित चौकियों पर आसीन कई साधु तिब्बती भाषा में ज़ोर-ज़ोर से बौद्ध सूत्रों का पाठ कर रहे थे। पूजा-पाठ करते समय, पूजा की सामग्री किसी यक्ष या पिशाच को अर्पित की जारही थी। बाद में, यह सामग्री बाहर सड़क पर रख दी गई। मंदिर में दो बड़े प्रार्थना-चक्र हैं, जिन पर संस्कृत में 'ओं मणि पद्मे हुम्' लिखा हुआ है। यदि कोई प्रार्थना करना चाहे तो काग़ज़ पर प्रार्थना लिख कर, इस चक्र के अन्दर डालकर घुमा देता है। मंदिर के वृहदाकार चित्रों में बुद्ध-जीवन के दृश्य अंकित हैं। एक स्थान पर तांत्रिकों तथा लामा धर्म के रक्त-पंथ द्वारा मान्य लाहमो (काली देवी) और उसके पास वृषभ-शिर वाले यम देवता के चित्र बने हैं। विशेष अवसरों पर सुन्दर वस्त्र धारण करके, भयानक चेहरे लगाकर यहां यक्ष नृत्य किया जाता है।

मंदिर के प्रधान लामा थाय् ने बताया कि क्वो मिंतांग के सिपाहियों ने यहां के बुद्धों के सिर तोड़ दिये थे और अनेक बौद्ध सूत्रों को फाड़कर फेंक दिया था। उस समय भिक्षु बाहर नहीं जा सकते थे, मंदिर के मकानों को वे किराये पर नहीं दे सकते थे और उन्हें खाने के लिये पर्याप्त भोजन नहीं मिलता था। आजकल मंदिर के ७०० मकानों से लगभग ८०० रुपये माहवार

किराया आता है। इसके अलावा, साबुन और बोरियां बनाने के अपने निजी कारखानों में भी ये लोग काम करते हैं। समस्त मण्डल प्रतिनिधि परिषद् आदि सरकारी संस्थाओं में लामाओं के प्रतिनिधि मौजूद हैं। तिब्बत के लामाओं से अब इनके सम्बंध स्थापित होगये हैं। पंचन अरतनी लामा इस मंदिर का दो बार निरीक्षण कर चुके हैं। गत २५० वर्षों से इस मंदिर की मरम्मत नहीं की गई थी, लेकिन अब सरकार ने इस काम के लिये प्रचुर द्रव्य दिया है। मंदिर की मरम्मत की जारही है।

चीन की अल्पसंख्यक जातियों में हुई, वीवर, कज़ाक, उज़बेक, खिरगीज़, ताज़िक आदि दस जातियाँ इस्लाम धर्म को माननेवाली हैं। इनकी संख्या १ करोड़ से अधिक है। ये जातियाँ ज़्यादातर सिंक्यांग, कान् सू, छिन् हाय् और निंगश्या प्रान्तों में ही निवास करती हैं। इनमें ६० लाख हुई हैं, जो सर्वत्र फैले हुए हैं। च्यांग काई शेक के शासन-काल में, इन जातियों के धार्मिक विश्वासों को अनेक प्रकार से आघात पहुँचाया जाता था, जिससे आपसी दंगों को उत्तेजना मिलती थी। सन् १९२८ में, इन्हीं कारणों से हो चौ और कान् सू के मुसलमान क्वो मिंतांग के विरुद्ध हथियार लेकर खड़े होगये थे। परन्तु, क्वो मिंतांग के सैनिकों ने उनको बहुत कष्ट दिया था। सन् १९३९ और १९४१ में भी हज़ारों हुई मारे गये थे। वीवरों पर भी इसी तरह के अत्याचार किये गये थे। परन्तु हुई, वीवर और कज़ाक आदि जातियों ने साहस-पूर्वक जापानी और क्वो मिंतांग सेना के विरुद्ध युद्ध में डटकर भाग लिया। जापानी युद्ध आरंभ होने के समय से ही च्यांगसु और निंगश्या के हुई लोग मुक्त क्षेत्रों में लगातार आते रहे। ये लोग आठवीं सेना में भी भरती हुए। आजकल जनमुक्ति सेना में अनेक मुसलमान सिपाही काम करते हैं।

पहले, पीकिंग और उसके आसपास की ४९ मसजिदों में ७० हज़ार मुसलमानों ने मिलकर रमज़ान का त्यौहार मनाया था। सरकारी दफ़्तरों आदि में काम करनेवाले मुसलमानों को उनके त्यौहारों की छुट्टियां दी जाती हैं। इन दिनों, उन्हें सरकारी दूकानों पर रियायत से माल मिलता है। पीकिंग में, मुसलमानों के बाज़ारों में सूअर का मांस बेचने की मनाई है। विश्वविद्यालयों में मुसलमान विद्यार्थियों के भोजनालयों की अलग व्यवस्था है। मुसलमानों के इलाक़ों को मुक्त करने के पूर्व जनमुक्ति सेना के सिपाहियों को जो आदेश दिये जाते थे, उनकी चर्चा पहले की जा चुकी है। धार्मिक विश्वासों के प्रति सरकार

की इस उदार नीति के परिणामस्वरूप, अगस्त सन् १९५७ में अपने धर्म और देश की उन्नति के लिये तथा विश्वशान्ति की सुरक्षा के लिये इस्लाम संघ और बौद्ध धर्म परिषद की स्थापना हुई है।

पै थांग पीकिंग शहर का एक अत्यन्त मनोरम गिरजाघर है। सभी जगह पच्चीकारी और जड़ाव का काम है और जगह-जगह ईसा के चित्र बने हुये हैं। विविध वर्णों से चित्रित विशाल खंभे शिल्पकला से सज्जित छत को साधे हैं। सामने विशाल वेदी पर ईसा मसीह की एक बृहदाकार मूर्ति है। बिजली की रोशनी से समस्त गिरजाघर जगमगाता है। प्रार्थना करनेवालों के लिये बेंचें बिछी हैं और खंभों पर लगी हुई, लाल ध्वजाओं पर ईसाई धर्म के सुधार-आन्दोलन से सम्बंध रखनेवाले 'स्वयं-शासन, स्वयं संरक्षण और स्वयं-संवर्द्धन' के नारे अंकित हैं। हर रविवार को गिरजे में प्रार्थना होती है और पादरी भाषण करता है।

गिरजाघर के सहायक विशप लि अत्यन्त सज्जन और विनम्र व्यक्ति हैं। आपसे जो प्रश्नोत्तर हुआ, वह यहां दिया जाता है—

"भारत के कुछ लोगों की धारणा है कि चीन में धार्मिक स्वतंत्रता नहीं है। चीन की सरकार ने ईसाई धर्म के पादरियों और साध्वियों के साथ अच्छा बरताव नहीं किया है। आपकी इस सम्बंध में क्या राय है?"

"पहले, हम लोगों से भी इसी तरह की बहुत सी बातें कही गई थीं। लेकिन, यह सब प्रचार चीन की सरकार के विरोधियों द्वारा किया हुआ है। मौजूदा सरकार के शासन में, हमारा धर्म सुरक्षित है और हमें पूजा-प्रार्थना की स्वतंत्रता है। समस्त मण्डल प्रतिनिधि परिषद तथा जनता की राजनीतिक सलाह मशविरा देनेवाली परिषद आदि—सरकारी संस्थाओं में हमारे प्रतिनिधि रहते हैं। विदेशियों को यह भले ही असंभव लगता हो, किन्तु सरकार ईसा के अनुयायियों की अवहेलना नहीं करती। शान्ति परिषद के अवसर पर, परिषद के अनेक प्रतिनिधि गिरजे में प्रार्थना करने आये थे और उन्होंने पीकिंग के गिरजाघरों की सब हालत अपनी आंखों से देखी थी।"

"क्या मौजूदा सरकार धर्म को प्रोत्साहित करती है ?"

"प्रोत्साहित नहीं करती, परन्तु वह किसी के धार्मिक विश्वासों में हस्तक्षेप भी नहीं करती। जो गिरजाघर अपना ख़र्च बर्दाश्त नहीं कर सकते, वह उनसे टैक्स नहीं लेती और उनकी सहायता करती है। पहले, गिरजाघरों को विदेशों से सहायता मिलती थी, अब वह बन्द कर दी गई है।"

"आप लोगों का ख़र्च कहां से चलता है ?"

"हम लोग आत्मनिर्भर हैं, इसलिये हमें सरकार से ख़र्च नहीं लेना पड़ता। पीकिंग, टीन्सटिन और हैन्को में गिरजाघर के मकान हैं, उनसे किराया आता है। हम लोग अपने छापेख़ाने में भी काम करते हैं।"

"आपके धर्म का क्या भविष्य है ?"

"मैं समझता हूं कि समाजवादी समाज में गिरजेघर क़ायम रहेंगे, जैसे कि सोवियत संघ में हैं। कैथोलिक पादरी चीनी जनता के अंग हैं। जब तक वे एक सच्चे चीनी की भांति बरताव करेंगे, चीनी सरकार उनकी देखभाल करेगी, उनकी रक्षा करेगी और उन्हें कभी नुक़सान न पहुँचायेगी।"

"पहली सरकार और मौजूदा सरकार में आपको क्या अन्तर मालूम होता है ?"

"पहले, हम लोगों को अपनी सरकार के बारे में कुछ भी मालूम न था, जबकि मौजूदा सरकार को हम अच्छी तरह जानते हैं। यह सरकार जनता का हित कर रही है, इसलिये हम उसका समर्थन करते हैं।"

"क्या रोम के पोप के साथ आपके सम्बंध क़ायम हैं।"

"हां, हम उन्हें एक साल में अपनी रिपोर्ट भेजते हैं।"

"क्या वे आपको 'रेड' नहीं समझते ?"

"(हंसकर) हम लोग तो काला चोगा पहिनते हैं, फिर 'रेड' कैसे हो सकते हैं।"

मंदिरों, गुरुद्वारों, मसजिदों और गिरजाघरों के अतिरिक्त, चीन में आज भी अनेक प्रकार के धार्मिक विश्वास प्रचलित हैं। कितने ही व्यक्ति पितरों के समक्ष कागज़ के घोड़े, गाय तथा धूप आदि जलाते हैं; कब्रों पर खाद्य चढ़ाते हैं और नूतन वर्ष के अवसर पर कुटुम्ब के प्रमुख तथा अन्य व्यक्ति मिलकर पितरों की उपासना करते हैं। बुद्ध धर्मानुयायी अगरबत्ती आदि जलाकर बुद्ध की पूजा करते हैं तथा शाकाहारी होने के कारण दूध, लहसुन और प्याज़ का स्पर्श तक नहीं करते। मुसलमान भी गाय, मुर्गी और मछली के सिवाय, अन्य प्रकार के मांस का भक्षण नहीं करते, इसलिए शाकाहारियों की कोटि में ही गिने जाते हैं। ये लोग हज के लिये मक्का जाते हैं और सफ़ेद टोपी आदि लगाते हैं। चीन में ईसाइयों की 'नार्थ चाइना एसेम्ब्लीज़ आफ़ गॉड', 'दि ट्रू जीसेस चर्च', 'येनचिंग स्कूल ऑफ रिलीजन', 'पीकिंग थियोलोजिकल सेमिनरी' आदि अनेक धार्मिक संस्थायें विद्यमान हैं, जिनमें बाइबिल वग़ैरह धार्मिक पुस्तकें पढ़ाई जाती हैं।

वस्तुतः, धार्मिक विश्वासों में हस्तक्षेप करने या धार्मिक स्वतंत्रता में बाधा डालने से धर्म सम्बंधी अंधविश्वासों को दूर नहीं किया जा सकता, उसके लिये तो वैज्ञानिक शिक्षण ही एक मात्र उपाय है। ऐसी दशा में, धार्मिक मनोवृत्ति के लोगों को यही समझाना उचित है कि पत्थर या काष्ठ की मूर्ति के समक्ष चन्दन आदि जलाकर द्रव्य का दुरुपयोग करने की अपेक्षा उसे किसी उपयोगी कार्य में लगाना चाहिये; कोई भी बिगाड़-सुधार करने में असमर्थ, निष्प्राण और निश्चेतन मूर्तियों की अपेक्षा, मनुष्य को मनुष्य के प्रति अधिक आदरशील होना चाहिये, तभी धार्मिक कट्टरता दूर हो सकती है और तभी मनुष्य जन-हित की ओर अग्रसर हो सकता है। चीन में इसी नीति का अनुसरण करके, एक नये समाज का निर्माण किया जारहा है।

'दया का भण्डार'

जब मैंने भारत से चीन के लिये प्रस्थान किया था, तब मित्रों की अनेक जिज्ञासाओं में एक जिज्ञासा यह भी थी कि कैथोलिक साध्वियों के प्रति चीनी सरकार द्वारा की गई ज़्यादतियों के सम्बंध में अवश्य पता लगाऊं। इसलिये, जब हम लोग फ्रांस की मिशनरी सोसायटी—'सिस्टर ऑफ चैरिटी'—द्वारा स्थापित, पै थांग गिरजाघर के 'दया के भण्डार' (हाल ऑफ मरसी) का निरीक्षण करने गये, तो मुझे बड़ी उत्सुकता हुई।

तू आजकल इस संस्था की डाइरेक्टर हैं। शहर में सरदी अधिक होने से, कृमिनाशक औषधियों से हमारे हाथ धोने तथा सफ़ेद कोट और मुंह-पट्टी बांध लेने के पश्चात अतिथि-गृह में प्रवेश करने पर, उन्होंने हमें अपनी संस्था का परिचय इस प्रकार दिया : "इस बाल-गृह (पहले इसे अनाथालय कहा जाता था) की स्थापना सन् १८६२ में फ्रांस की मिशनरी सोसायटी ने की थी। डाइरेक्टर रेमण्ड के ज़माने में यहां के शिशुओं की बहुत अधिक मृत्युएँ होती थीं। बालकों को ढंग का खाना मयस्सर न होता था—आटे में प्रायः कंकड़ मिले रहते और मकई

कीड़ों की खाई हुई होती थी। बच्चों से कठोर श्रम कराया जाता था और बीमार होजाने पर उनके डाक्टरी इलाज की कोई उचित व्यवस्था नहीं थी। बाल-गृह में नवजात अवांछित शिशुओं से लेकर २० वर्ष तक की लड़कियां रहती थीं। संस्था का ५०% व्यय लड़कियों से श्रम कराकर पूरा किया जाता था। यदि वे काम पूरा न कर पातीं थीं, तो साध्वियां उन्हें मुर्गी बनने की सज़ा देतीं, अंधेरे कमरे में बन्द कर देतीं, सरदी में घर के बाहर और गरमी में धूप में खड़ी करती थीं। इससे, अनेक लड़कियां बीमार रहने लगीं और अनेक क्षय रोग से पीड़ित होगई थीं। सीने-पिरोने और बेल-बूटे काढ़ने में अत्यधिक श्रम करने से, उनकी आँखें ख़राब होगई थीं।

"मुक्ति के बाद अड़ोस-पड़ोस के लोगों के लिखा-पढ़ी करने पर, दिसम्बर सन् १९५१ को सरकार ने इस बाल-गृह को अपने हाथों में ले लिया। डाक्टरी परीक्षा से पता चला कि ४४७ लड़कियों में से ८५ क्षय रोग से पीड़ित हैं, अनेकों को गठियाबाय होगई है और अधिकांश को आंखों की बीमारी है। पूरी खुराक न मिलने से, अनेक लड़कियों का वज़न कम होगया था और उनकी बाढ़ रुक गई थी। पीकिंग के मेयर ने बाल-गृह की सफ़ाई कराने और बीमार लड़कियों को अस्पताल भेजने की व्यवस्था की। पहले, वे बाल-गृह के बाहर नहीं जा सकती थीं, लेकिन अब वे घूमने-फिरने और सिनेमा आदि देखने जाती हैं।

"बाल-गृह का संक्षिप्त परिचय प्राप्त करने के पश्चात, हम लोग उस कमरे में गये जहां सज़ा पाई हुई लड़कियों और मृत शिशुओं के गढ़े आदि के चित्र लगे हुए थे। वहीं डायरेक्टर रेमण्ड द्वारा जेल में लिखे हुए पश्चाताप-सूचक पत्र का फोटो था। फ्रांस वापिस पहुंचकर रेमण्ड का लिखा हुआ एक दूसरा पत्र भी था, जिसमें जेल के केडरों के सद्व्यवहार के लिये कृतज्ञता प्रकट की गई थी।"

बाल-गृह में आजकल ६३४ बालक-बालिकायें हैं, जो सात महीने से लेकर २० वर्ष तक की अवस्था के हैं। अधिकांश बालक-बालिकाओं के माता-पिता नहीं हैं। छोटे शिशुओं का विभाग अलग है। इस विभाग में गत वर्ष एक अवांछित शिशु भी भरती किया गया था। नये चीन का यह स्वस्थ और सुन्दर शांति दूत हम लोगों को देखकर खुशी से मचल रहा था। बड़े बच्चों

की क्लास चल रही थी। तालियां वजाकर, हमारा स्वागत किया गया और फिर सब बालक अपनी अध्यापिकाओं के साथ मिलकर नृत्य करने लगे। बच्चों के वाचनालय में चित्रों की पुस्तकें तथा विविध प्रकार के खेल-खिलौने सजाकर रखे गये थे।

बाल-गृह की विशाल इमारत में ६०० से अधिक कमरे हैं और एक बड़ा गिरजाघर हैं, जिसमें प्रार्थना के लिये लोग इकट्ठे होते हैं। इसमें स्कूल के ईसाई बच्चे भी जाते हैं। अनेक स्थानों पर मरियम की मूर्तियां और क्रॉस के चिह्न बने हुए हैं, रहने के लिये अलग भवन हैं, जहां लगभग १९ साध्वियां रहती हैं, जिनमें कुछ वृद्ध होने के कारण काम करने लायक नहीं हैं। प्रार्थना-भवन ईसा-मसीह की मूर्ति तथा धार्मिक चित्रों से सुसज्जित है।

सिस्टर यू पिछले २८ वर्षों से 'सिस्टर ऑफ चैरिटी' में काम कर रही हैं। आप ४८ वर्ष की होने पर भी, बड़ी क्रियाशील और सौम्य स्वभाव की मालूम होती हैं। उनसे निम्नलिखित प्रश्नोत्तर हुआ–

"भारत के बहुत से लोग कहते हैं कि चीनी सरकार ने कैथोलिक धर्म की साध्वियों के साथ दुर्व्यवहार किया है और चीन में किसी प्रकार की धार्मिक स्वतंत्रता नहीं है? यदि आपको कोई ऐतराज न हो तो मैं आपका फोटो लेना चाहता हूं, ताकि मैं अपने देशवासियों को दिखा सकूं?"

"हमारे धर्म में फोटो खिंचवाना मना है, किन्तु आप हमारे देश की सच्ची हालत अपने देशवासियों को बतायेंगे इसलिये मुझे आपत्ति नहीं है। आप अपने देशवासियों से कहिये कि हम लोगों को पूजा-प्रार्थना आदि करने और धार्मिक रीति-रिवाज पालने की पूरी स्वतंत्रता है। हमारी सरकार वृद्धा साध्वियों की विशेष परवाह करती है। जबसे यह बाल-गृह नई सरकार के हाथों में आया है, इसकी हालत बहुत सुधर गई है। मैं आपकी सफलता के लिये ईश्वर से प्रार्थना करूंगी।"

"क्या आप बता सकती हैं कि विदेशों की साध्वियां बाल-गृह के

बच्चों के प्रति क्रूरता का बरताव क्यों करती थीं ? ईसाई धर्म में तो दया और क्षमा का उपदेश दिया गया है ?"

"ये साध्वियां चीनी लड़कियों को नफ़रत की निगाह से देखती थीं। फ्रांस की साध्वियां अक्सर कहा करती थीं कि चीनी बच्चे स्वभाव से ही कमज़ोर हैं, इसलिये वे जरा भी दुख-तकलीफ़ सहन नहीं कर सकते, फिर इसमें किसी का क्या दोष !"

"किन्तु, चीनी साध्वियों ने विदेशों की साध्वियों को रोका क्यों नहीं ?"

"यह ठीक है कि फ्रांस की साध्वियां संख्या में कम थीं, लेकिन शासन-व्यवस्था उन्हीं के हाथों में थी। इस सम्बंध में, मैंने प्रधान साध्वी रेमण्ड से बातचीत की थी। इसके अलावा, फ्रांस की साध्वियां इन बातों को स्वयं अच्छी तरह जानती थीं। इसलिये, चीनी साध्वियां इस सम्बंध में कुछ कर सकने की दशा में न थीं। मैं समझती हूँ कि फ्रांस की साध्वियां शरीर की अपेक्षा आत्मा पर अधिक जोर देती थीं और उनका ख़्याल था कि मरकर शिशु स्वर्ग जायेगा, तो वे उसकी आत्मा के लिये प्रार्थना करेंगी।"

"क्या इस दिशा में आपने स्वयं कोई प्रयत्न किया था ?"

"मैंने रेमण्ट से इस बारे में बातचीत की थी, किन्तु उन्होंने उत्तर दिया था कि ये शिशु अवांछित होने के कारण कमज़ोर हैं, इसमें किसी का भी क्या दोष ! मैंने शंघाई की 'मदर सोसायटी' को भी इस सम्बंध में एक पत्र लिखा था। मेरा अधिक समय एक स्थान पर नहीं बीता; कभी मुझे स्कूलों में काम करना पड़ता था, कभी अस्पतालों में, इसलिये मैं कुछ अधिक नहीं कर सकती थी। फ्रांस की साध्वियों का ख़्याल था कि यदि १०० शिशुओं में से एक शिशु की भी रक्षा की जा सके तो ग़नीमत है; क्योंकि उनके कथनानुसार, अनाथालयों के अभाव में एक शिशु की भी रक्षा होनी असंभव थी।"

इसके बाद डाइरेक्टर पू को लक्ष्य करके, मैंने प्रश्न किया :

"यदि रेमण्ड सचमुच निर्दयी थी और वह लड़कियों के साथ इतनी क्रूरता का बरताव करती थी, तो उसके अपराधों का पता लगाने में इतना समय क्यों लग गया ?"

"जनवरी सन् १९४९ में पीकिंग के मुक्त होने के पश्चात, सरकार को इस बारे में कुछ भी मालूम नहीं था। इस बाल-गृह को फ्रांस की साध्वियां वर्षों से चला रही थीं और सरकार ने अपने कार्यक्रम में धार्मिक स्वतंत्रता की घोषणा की थी, इसलिये वह एकदम कोई हस्तक्षेप न कर सकी थी। जनवरी सन् १९५१ में, जब सरकार के अधिकारियों का ध्यान इस ओर आकर्षित किया गया तो मार्च सन् १९५१ में तहक़ीकात के लिये यहां एक कमिटी भेजी गई। यह बाल-गृह साध्वियों के ही हाथों में था, इसलिये पहले कमिटी ने साध्वियों से सामने सुझाव रखे। जून सन् १९५१ में, लड़कियों ने रेमण्ड से बाल-गृह छोड़कर चली जाने को कहा। इस पर, वह पीकिंग में दूसरी जगह जाकर रहने लगी। इसी बीच में बेलज़ियम, आयरलैण्ड, स्पेन आदि की साध्वियां अपने-अपने देशों को चली गई थीं। इधर सरकारी कमिटी की तहक़ीकात पूरी होने के बाद ३० नवम्बर, १९५१ को इस बाल-गृह को सरकार ने अपने अधिकार में ले लिया। यहां अनेक सभायें हुई, जिनमें बाल-गृह की लड़कियों ने रेमण्ड की क्रूरता का भण्डाफोड़ किया। उसके बाद, रेमण्ड को गिरफ़्तार कर जेल में रख दिया गया। कुछ दिनों बाद, उसे जेल से रिहा करके फ्रांस भेज दिया गया था।"

"इतना गंभीर अपराध होने पर भी, रेमण्ड को छोड़ क्यों दिया गया?"

"एक तो उसकी अवस्था ८० वर्ष की थी, दूसरे मालूम होता है कि उसने अपने अपराधों को स्वीकार कर लिया था और अपने बरताव पर पश्चाताप प्रकट किया था। इसलिये, सरकार उसके प्रति सख़्ती से पेश नहीं आई। फ्रांस पहुंचकर भी, उसने इस सम्बंध में एक पत्र लिखा है।"

लिन् हुई चाय् ने बचपन से इसी बाल-गृह में शिक्षा पाई है। उसकी उम्र लगभग २०-२१ वर्ष की होगी। उसकी आंखों से तेज टपकता है और मुखाकृति से लगता है कि वह कुछ कहना चाहती है। कुछ अनुभव सुनाने के लिये हमारे अनुरोध करने पर, लिन् ने अपनी कहानी आरंभ की—"मैं एक ग़रीब कुटुम्ब में पैदा हुई थी। दरिद्रता के कारण, मेरे मां-बाप ने १२ वर्ष की

उम्र में ही बहिन के साथ मुझे इस बाल-गृह में भेज दिया था। ...जब मैं उन्नीस वर्ष की थी, तो साध्वियों ने कहा कि जब यहां कम्युनिस्ट आयेंगे तो वे लोग तुम्हें आपस में बाँट लेंगे और छोटी लड़कियों को उबलते हुए तेल के बरतनों में रखेंगे। ये साध्वियां १६ वर्ष से अधिक उम्र की लड़कियों की किसी बूढ़े या बेवकूफ़ आदमी से शादी कर देती थीं। १० फरवरी, १९४९ को मैं भी उनके इस अत्याचार का भाजन बनी थी। शादी होने के बाद, जब मैं ससुराल गई तो मैं सारे दिन रोती रहती थी। मेरी सास मुझे ताने मारती कि अच्छा है तुम रो-रो कर प्राण त्याग दो, अनाथालय से हम दूसरी लड़की ले आयेंगे। पीकिंग रहते हुए, मैं कभी अपने माता-पिता के पास रहने के लिए चली जाती थी, इसलिये उसने मुझे एक गांव में भेज दिया। वहां जाकर, मैं महिला-समाज में भरती होगई और भूमि-सुधार आन्दोलन में काम करने लगी। मेरी सास को यह बात अच्छी न लगी। उसने मुझे पीकिंग वापिस बुला लिया। उसके बाद, मैं अपने माता-पिता के पास चली गई और फिर कभी ससुराल नहीं गई। मैंने तलाक़ देना चाहा, परन्तु मेरे ससुरालवालों ने यह कहकर बाधा डाली कि वे लोग कैथोलिक धर्म के अनुयायी हैं। मेरा मामला जनता की अदालत में रखा गया और वहां मुझे सफलता मिली। इस घटना को मैं अपने जीवन में हरगिज़ नहीं भूल सकती। मैं अच्छी तरह जानती हूं कि मेरे जीवन को बरबाद करनेवाला व्यक्ति कौन है। रेमण्ड ऊपर से बहुत भोली मालूम होती थी, मानो कुछ जानती ही नहीं, लेकिन वह चीनी साध्वियों तक को लड़कियों के प्रति दुर्व्यवहार करने के लिये उकसाती थी।"

"यदि रेमण्ड यहां आजाये, तो तुम क्या करोगी?"

"गोली से उड़ा दूंगी!", इतना कहकर लिन् ने घृणा से मुंह फेर लिया। उसका हृदय भर आया और आगे कुछ न बोल सकी।

"लिन् मुझे दुख है कि मैंने तुम्हारी अन्तर्वेदना को उभारकर, कष्ट पहुंचाया है।"

"नहीं, यह बात नहीं है। मैं प्रत्येक शान्तिप्रिय व्यक्ति को अपने देश की पुरानी हालत सुनाना चाहती हूं कि हम लोगों ने कितनी यातनायें सहन की हैं। पहले, मैं अपने बारे में कुछ नहीं कह सकती

थी, लेकिन अब माओ त्से तुंग और कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में चीन की स्त्रियां अपने पैरों पर खड़ी हुई हैं और उन्हें मौक़ा मिला है अपनी आवाज़ बुलन्द करने का। मैं चाहती हूं कि भारत की स्त्रियों को आप मेरी कहानी अवश्य सुनायें।"

कुमारी हू इस बाल-गृह की दूसरी भुक्तभोगी लड़की है। बहुत छोटी और बड़ी भोली मालूम होती है। शकल-सूरत से मालूम नहीं होता कि इसके अन्तस्तल में इतनी अन्तर्ज्वाला छिपी हुई है। उसकी करुण कहानी उसी के शब्दों में सुनिये: "चार वर्ष की अवस्था में, मैं अनाथ होगई थी। यह बाल-गृह अच्छा समझा जाता था; क्योंकि यहां कोई फ़ीस नहीं थी। इसलिये जब मैं आठ वर्ष की हुई, मेरी मौसी ने मुझे यहां भरती कर दिया। लेकिन, यहां आने पर मुझसे कठिन श्रम कराया जाने लगा। शिक्षा का माध्यम फ्रेंच थी, इसलिये मैं केवल बाइबिल की क्लास में ही चीनी सीख सकती थी। 'यह जीवन दुखमय है। मनुष्य पाप की पोटली है। मनुष्य को बड़ी दृढ़ता से कष्टों को सहना चाहिये, जिससे वह मृत्यु के बाद स्वर्ग प्राप्त कर सके।'--यही उपदेश हम लोगों को दिया जाता था। लड़कियां बाहर नहीं जा सकती थीं। समाज और अपनी मातृभूमि के बारे में उनको कुछ भी ज्ञान नहीं था। उन्हें पढ़ाया जाता था कि फ्रांस और अमरीका आदि देश सभ्य और शक्तिशाली हैं। परन्तु चीनी होकर भी, चीन के बारे में हमें कुछ भी पता नहीं था। साध्वियों के कुत्ते-बिल्ली भी मांस पर पलते, लेकिन हम लोगों को पेट भर खाना भी नसीब नहीं होता था। सुबह ४॥ बजे उठकर, मैं अपने काम में लग जाती और आधी रात तक लगी रहती लेकिन फिर भी, काम खतम न होता था। मुझे अधिकतर बेल-बूटे काढ़ना और मोजे बुनने का काम करना पड़ता था। मुझे खूब याद है कि जब एक दिन मेरा काम खतम न होसका, तो साध्वियों ने मुझे इतनी बुरी तरह पीटा कि तीन लकड़ियां टूट गई थीं। मेरे सिर से खून बहने लगा और मैं अचेत होकर गिर पड़ी थी। एक नौकर ने मुझे उठाकर बिस्तर पर लिटाया था। जब मुझे होश आया तो नौकर ने मुझे साध्वी से क्षमा मांगने को कहा, मुझसे कहा गया था कि मैं भविष्य में नियम-भंग न करने का वादा करूं। परन्तु उस समय मैं बहुत छोटी थी, इसलिये इन बातों को अच्छी तरह न समझ सकती थी। यह घटना मेरे हृदय-पटल पर अभी भी ज्यों की

त्यों अंकित है। सरदी के दिनों में मुझे काफ़ी कपड़ा पहिनने को नहीं दिया जाता, जिससे मेरी उंगलियों से खून बहने लगता था। जब मैं बीमार रहने लगी, तो मुझे अस्पताल में रखा गया। लेकिन वहां ज़मीन पर सोने के कारण, मैं क्षय रोग से पीड़ित होगई। मुक्ति के बाद, सरकारी कमिटी को मेरी बीमारी का पता लगा तो मेरी चिकित्सा आदि की व्यवस्था की गई। अब मैं बिलकुल स्वस्थ होगई हूं।"

भावावेश के कारण, बीच-बीच में कुमारी हू का दिल भर-भर आता और बहुत देर तक ढूँढने पर भी, उसे अपनी कहानी के लिये शब्द न मिलते थे। वह बड़ी कठिनता से अपनी आप-बीती समाप्त कर सकी। भविष्य सम्बंधी प्रश्न के उत्तर में, उसने कहा : "मैं अत्यन्त परिश्रमपूर्वक अध्ययन कर रही हूं। इस स्कूल की पढ़ाई समाप्त करके, मैं शीघ्र ही मिडिल स्कूल में भरती होऊंगी। उसके बाद, मेरी अभिलाषा हवाई जहाज़ की चालिका बनने की है और मुझे आशा है कि मैं चालिका बन सकूंगी। मेरी भारत की बहिनों को आप मेरा यह संदेश कहियेगा कि वे भी परिश्रमपूर्वक अध्ययन करके, अपने देश की सेवा करें।"

कुमारी लिन् और कुमारी हू से भेंट किये अरसा गुज़र चुका है, लेकिन चीन की इन दो बहिनों की भोली और निर्दोष छवि अभी भी आंखों के सामने घूम रही है और ऐसा लगता है कि ये दो मूर्तियाँ आंखों के सामने से कभी भी ओझल न होंगी।

जनता की अदालत में

जनता की अदालत

किसी भी देश की सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियों का यथार्थ ज्ञान करने के लिये, वहां की कचहरियों को देखना आवश्यक है, विशेषकर चीन में। जनवादी सरकार की स्थापना होने के पश्चात, आपसी झगड़ों को स्वयं सुलझाने के लिये चीन की परिस्थितियों के अनुसार जो नये प्रयोग किये जारहे हैं, उनको बिना समझे-बूझे नये चीन की राजनीतिक गतिविधि समझनी कठिन है।

चीन की जनता की अदालतों का दृश्य कुछ इस प्रकार होता है। एक साधारण सी इमारत के एक छोटे कमरे में इजलास हो रहा है। एक ओर माओ त्से तुंग और स्तालिन की तस्वीरें लगी हैं और दूसरी ओर कुछ नारे लिखकर लगाये गये हैं। कोर्ट में जज साहब का कोई अर्दली, लाल पट्टेवाला सिपाही या हेड क्लर्क नहीं दिखाई देता। कोई रक्षक या कोर्ट में शान्ति रखनेवाली पुलिस भी नहीं है। वकीलों, सफ़ेदपोशों या प्रतिष्ठित समझे जानेवाले व्यक्तियों के बैठने के लिये अलग कुर्सियां नहीं हैं। पांच-सात अत्यन्त साधारण लकड़ी की तिपाईनुमा बैंचों पर लगभग २५-३० स्त्री-पुरुष बैठे हुए हैं, कुछ स्त्रियां गोद में बच्चे लिये हुए हैं। कोर्ट के केडर उन्हीं के पास बैठे हुये हैं। सामने की ओर जज साहब, अन्य स्त्री-पुरुषों के समान, नीले रंग की युनिफ़ार्म में एक कुर्सी पर बैठे हैं।

विवाह को प्रोत्साहित करती है। बहु-पत्नी विवाह और बाल-विवाहों में इन अधिकारों की रक्षा संभव नहीं है। नये विवाह-क़ानून के अनुसार, किसी विधवा के विवाह में बाधा उपस्थित करना या विवाह-शादी में रुपया-पैसा लेना-देना गुनाह है।

तलाक़ सम्बंधी मामलों का स्पष्टीकरण करते हुए, जज साहब ने बताया कि स्त्री पुरुष के पारिवारिक जीवन के बारे में तहक़ीकात करने के बाद ही, इस सम्बंध में अदालत कोई निर्णय दे सकती है। विवाह-क़ानून में विवाहित जीवन के सामंजस्य को प्रोत्साहित किया गया है, इसलिये पति-पत्नी का जीवन यदि पहले अच्छी तरह से व्यतीत हुआ है तो अदालत की यही कोशिश होगी कि दोनों पार्टियां पारस्परिक समझौते द्वारा ही अपने झगड़ों का निपटारा कर के एक साथ जीवन व्यतीत करें। हां, यदि दोनों में शुरू से ही प्रेम नहीं रहा है और भविष्य में भी अनबन रहने की संभावना है, तो ऐसी हालत में अदालत तलाक़ की इजाज़त देने पर विचार करेगी।

विवाह-क़ानून की बुनियाद को समझाते हुए, कहा गया कि दोनों पार्टियों को यह बात भली भांति समझ लेनी चाहिये कि उनके आपसी झगड़े सामंतवादी समाज की उपज हैं। उनमें उनका व्यक्तिगत दोष नहीं है। अतएव, उन्हें स्वयं मामलों का निपटारा करना चाहिये। इसके अतिरिक्त, कुछ स्त्रियां सामंतवादी आदर्शों में पली होने के कारण, कष्टमय जीवन व्यतीत करते रहने पर भी तलाक़ देने में लज्जा का अनुभव करती हैं। परतु, यह ठीक नहीं है। कुछ स्त्रियां ऐसी भी हैं, जो अपने परिवार की आर्थिक स्थिति संतोषजनक न होने के कारण, तलाक़ देना चाहती हैं। ऐसी स्त्रियों को अदालत द्वारा सलाह दी गई कि वे अधिक परिश्रम से अपनी आर्थिक स्थिति को उन्नत बनायें।

विवाह-क़ानून की २३ वीं धारा के अनुसार तलाक़ देने के बाद, स्त्री के पास जो अपनी निजी सम्पति है उसे वह अपने साथ ले जा सकती है। बाक़ी सम्पत्ति का निपटारा दोनों की सम्मति से होना चाहिये। यदि कोई भी निर्णय न होसके, तो अदालत की शरण लेनी चाहिये। विवाह-क़ानून में कहा गया है कि तलाक़ के बाद भी यदि एक पार्टी को कोई तकलीफ़ हो, तो दूसरी पार्टी को अपने साथी की मदद करनी चाहिये। इस सम्बंध में व्यवसायिक मनोवृत्ति नहीं अपनानी चाहिये। यदि पति की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं है, तो भी यह

सोचकर कि उसकी स्त्री बहुत दिनों तक उसके साथ रही है, और उसके लिये उसने श्रम किया है, उसे कर्तव्य भावना से एक मित्र की भांति उसकी सहायता करने के लिये उद्यत रहना चाहिये।

नये विवाह-क़ानून में स्त्री-पुरुष की पारस्परिक अनुमति को ही अधिक महत्व दिया गया है। सामंती समाज में माता-पिता द्वारा की हुई शादियों के सम्बंध में ही प्रायः रुपये-पैसे के झगड़े होते हैं; क्योंकि नये क़ानून में तो किसी भी प्रकार के लेन-देन को ग़ैरक़ानूनी माना गया है। ऐसी हालत में, माता-पिता के लिये एक ही मार्ग है कि वे इस प्रश्न को नौजवानों पर छोड़ दें अथवा पारस्परिक विचार-विनिमय से हल करें। इस सम्बंध में सबसे आवश्यक और महत्वपूर्ण बात है—विवाह-क़ानून के आशय को हृदयंगम करना। एक बार इस नये क़ानून को अच्छी तरह समझ लेने पर, मनुष्य की दूषित और ग़लत मनोवृत्ति दूर हो सकेगी और फिर दोनों पक्ष इन मामलों को सहूलियत के साथ निपटा सकेंगे।

अन्त में उपस्थित स्त्री-पुरुषों से अपील करते हुए, जज साहब ने कहा: "देखिये, आप स्वयं अपने जज हैं। हमारे देश में जनवादी राज्य है, इसलिये जनता को अपने जीवन सम्बंधी प्रश्नों को स्वयं हल करने का अधिकार है। जनता की समस्यायें स्वयं जनता द्वारा हल की जानी चाहिये। अदालत का काम केवल मार्ग-दर्शन करना है।"

भाषण समाप्त होजाने पर, अदालत के केडरों ने दोनों पार्टियों से अपने-अपने दलों में बैठ जाने को कहा। केडरों की उपस्थिति में दोनों पार्टियों में वाद-विवाद आरंभ होगया। जज साहब विभिन्न पार्टियों की समस्याओं को हल करने के लिये कमरे में घूमने लगे।

एक मुक़दमा तलाक़ के बाद स्त्री को आजीविका का ख़र्च दिलाने सम्बंध में था। पुरुष कुछ माहवार ख़र्च पहले से देता आरहा था, किन्तु वह काफ़ी न था। बहस होने के पश्चात पुरुष ने इस रक़म को बढ़ा दिया, उसकी स्त्री फिर भी सन्तुष्ट न थी। महिला केडर पुरुष को समझा रही थी कि उसकी स्त्री ने उसके साथ तीन वर्षों तक रहकर साथ दिया था; जितना रुपया वह देना चाहता था स्त्री और उसके शिशु के लिये पर्याप्त नहीं था; इसलिये उसे कर्तव्य भावना से उसकी सहायता करनी चाहिये, दान समझकर नहीं।

पुरुष का कहना था कि उसमें अधिक देने की सामर्थ्य नहीं थी। स्त्री के चेहरे से उसके मन की कड़वाहट का स्पष्ट आभास होरहा था। अन्त में, पुरुष स्त्री और बच्चे को पूरी रक़म देने के लिये राज़ी होगया।

दूसरा मुक़दमा एक पुरुष की दो स्त्रियों में सम्पत्ति के बँटवारे के सम्बंध में था। पुरुष की पहली स्त्री १० वर्षों से उसके साथ नहीं रहती थी। पति और दूसरी पत्नी के पास १२ कमरे थे; पहली स्त्री ५ कमरे चाहती थी। उसका पति उसे ४ कमरे देने को तैयार भी था, किन्तु वह नहीं मानती थी। केडर की उपस्थिति में तीनों में बहस होरही थी। अंत में, पति ने मकान को बेचकर उससे प्राप्त की हुई रक़म को दोनों स्त्रियों में आधी-आधी बांट देने की स्वीकृति दे दी।

तीसरा मुक़दमा तलाक़ के सम्बंध में था। क्वो मिंतांग के ज़माने में, सरकार ने गुप्त रूप से राजनीतिक कार्य करनेवाले दो स्त्री-पुरुषों को जेल में डाल दिया था। स्त्री जेल में गर्भवती होगई और प्रसूति के समय, उसने जेल अधिकारियों से रिहाई की दरख़्वास्त की थी। दरख़्वास्त मंजूर होगई और स्त्री को जेल से छोड़ दिया गया था। कुछ समय बाद, जब पुरुष जेल से छूट कर आया तो उसने कम्युनिस्ट पार्टी को पत्र लिखा था कि उसकी पत्नी ने जेल से मुक्ति पाने के लिये क्वो मिंतांग सरकार के सामने आत्मसमर्पण किया था, इसलिये उसकी पार्टी की सदस्यता रद्द की जानी चाहिये। इसके साथ ही, उसने अदालत से तलाक़ की इज़ाजत मांगी थी। लेकिन, स्त्री का कहना था कि उसने आत्मसमर्पण नहीं किया, बलिक वह अपने शिशु की रक्षार्थ जेल से छूटकर आई थी। वह तलाक़ के लिये सहमत थी, लेकिन पहले आत्मसमर्पण का मामला तय होजाना चाहिये। इस मामले की विशेष जांच-पड़ताल करने के बाद ही अदालत कुछ निर्णय करेगी।

दो घंटों से भी कम समय में, कोर्ट के अधिकांश स्त्री-पुरुष चलते बने और अदालत का कमरा खाली होगया!

नगर की आबादी बढ़ जाने से, पीकिंग में घरों की समस्या बढ़ गई है। इसलिये, आजकल अदालतों में सबसे अधिक मुक़दमे इसी के आते हैं। इन मुक़दमों को भी यथासंभव सामूहिक समझौतों द्वारा ही तय किया जाता है। विवाह सम्बंधी ज़्यादातर मुक़दमे तलाक़ के बारे में रहते हैं, जो अधिकांश

स्त्रियों की ओर से आते हैं। ये विवाह प्रायः मुक्ति के पूर्व हुए थे। इनमें धन-सम्पत्ति तथा बच्चों का बंटवारा भी एक कारण रहता है। पीकिंग की जनता की अदालत के प्रेसीडेण्ट वांग ने बताया कि तलाक़ के मामलों में बहुतसी बातों का विचार करना पड़ता है, इसलिये ऐसे मुक़दमों को तय करने में काफ़ी समय लग जाता है। स्त्री और बच्चों की सुरक्षा का ध्यान रखते हुए ही, इन मुक़दमों का फ़ैसला किया जाता है। नये विवाहों के भी तलाक़ सम्बंधी कुछ मुक़दमे आये हैं, लेकिन अत्यन्त कम। किसी दूकान या छोटी-मोटी कम्पनियों के दिवालिया होने के मुक़दमे भी अदालत में आते हैं। ये दूकानें या कम्पनियां प्रायः रोजमर्रा के काम में न आनेवाली ऐश-आराम की वस्तुयें बेचने का व्यापार करती रही हैं। कितनी ही वार इन मुक़दमों में पूंजीपति और श्रमजीवियों के झगड़ों से सम्बंध रखनेवाली बातें रहती हैं, जिनमें श्रमजीवी-ब्यूरो या ट्रेड यूनियनों आदि की सलाह लेनी पड़ती है। फ़र्मों के दिवालियेपन के भी कुछ मुक़दमे आते हैं, लेकिन कम।

मुक़दमों का फ़ैसला करने के लिये, सबसे पहले अदालत दोनों पार्टियों को सरकार की नीति—नये समाज की नयी मनोवृत्ति—को समझने में सहायता करती है, क्योंकि एक बार यह नीति समझ लेने के बाद दोनों पार्टियां अपना झगड़ा स्वयं निपटाने का प्रयत्न करती हैं। अदालत का काम दोनों पार्टियों को एक दूसरे के नज़दीक लाने का है, जिससे दोनों एक-दूसरे के दृष्टिकोण को समझकर स्वयं फ़ैसला कर सकें। अदालत जनता से अधिक निकट सम्पर्क रखने का प्रयत्न करती है, क्योंकि केवल केडरों के ऊपर निर्भर रहने से मुक़दमों का ठीक-ठीक फ़ैसला नहीं किया जा सकता।

फ़ौजदारी के मुक़दमे भी जनता की अदालतों में तय किये जाते हैं। प्रेसीडेण्ट वांग ने बताया कि चोरी के मुक़दमे अभी भी आते हैं, लेकिन पहले से बहुत कम। चोरों को अधिक समय के लिये जेलों में रखकर, श्रम द्वारा उनका सुधार किया जाता है। जब वे जेल में रहकर कोई काम सीख लेते हैं, तो उन्हें छोड़ दिया जाता है। बार-बार चोरी करनेवाले को अधिक से अधिक २ साल की सजा दी जाती है। मार्ग-दुर्घटनाओं के भी कुछ मामले अदालतों में आते हैं। विशेषकर गांवों से आनेवाले किसान सड़क पर चलने के नियम आदि न जानने के कारण, इन दुर्घटनाओं के शिकार होते हैं। डाक्टरों के ख़िलाफ़ भी कुछ मुक़दमे आये हैं। कारख़ानों आदि में काम सीखनेवाले युवक

कारखानों के मैनेजरों के दुर्व्यवहार के कारण भी अदालत की शरण लेते हैं। स्त्रियाँ पतियों के दुर्व्यवहार के कारण, मुक़दमे लेकर अदालतों में आती हैं। पहले जमाने में स्त्रियाँ इन दुर्व्यवहारों को चुपचाप सहन कर लिया करती थीं, लेकिन अब राजनीतिक चेतना आजाने से वे समानाधिकार प्राप्त करना चाहती हैं।

क्रान्ति-विरोधी व्यक्तियों के मुकदमे फ़ौजी अदालतों द्वारा तय किये जाते हैं। सन् १९५२ में इस प्रकार का कोई मुक़दमा अदालत में पेश नहीं हुआ था। सानूफ़ान् और वू फ़ान् सम्बंधी अधिकांश मुक़दमे जनता की स्पेशल अदालतों से तय किये गये थे। इन अदालतों के निर्णायक स्थानीय जनता की राजनीतिक सलाह मशविरा देनेवाली परिषद के जिम्मेदार सदस्य थे।

चीन में तीन प्रकार की अदालतें हैं—सबसे बड़ी सुप्रीम अदालत, जिसकी शाखायें सभी प्रान्तों में हैं; दूसरी प्रान्तीय अदालत और सबसे छोटी अदालत जनता की अदालत है। इस अदालत के जज गांवों, कारख़ानों आदि का दौरा करते हैं, जिससे समय और द्रव्य की काफ़ी बचत होती है। अधिकांश मुक़दमे छोटी अदालतों में ही तय होजाते हैं, नहीं तो बड़ी अदालत में अपील की जा सकती है। अधिक से अधिक दो बार अपील करने का अधिकार है। अदालतों में कोई फ़ीस नहीं ली जाती और अनावश्यक लिखा-पढ़ी आदि में समय नष्ट नहीं किया जाता। ज़रूरत पड़ने पर, मुँहज़बानी शिकायतें भी अदालतों में की जा सकती हैं। मुक़दमों का फ़ैसला करते समय एक ही क़ानून सबके लिये लागू न कर, हर मुक़दमे पर अलग-अलग दृष्टि से विचार किया जाता है।

नगर की जनता की अदालत प्रान्तीय अदालत के बराबर होती है। वैसे पीकिंग के हरएक वार्ड में छोटी-छोटी अदालतें हैं, जहां जनता को मुफ़्त में क़ानून सम्बंधी सलाह-मशविरा दिया जाता है। यदि किसी व्यक्ति को वार्ड की अदालत के निर्णय से संतोष न हो, तो वह जनता की अदालत में अपील कर सकता है। पहले, क़ानूनी मामलों का निर्णय पेशेवर वकीलों की सहायता से किया जाता था। उस समय जनता पर अदालत का बड़ा रोब रहता था, लेकिन अब जनता कोर्ट के अध्यक्ष को जजों और उनके निर्णयों तथा केडरों आदि की मनोवृत्ति के बारे में आलोचनात्मक पत्र लिखती है। प्रेसीडेण्ट वांग ने बताया कि इस प्रकार के कुछ पत्र नम्रतापूर्ण रहते हैं और

कुछ गुस्से से भरे हुए, लेकिन इन पत्रों से अदालत के काम में सहायता पहुंचती है।

मेरे एक दूसरे प्रश्न के उत्तर में, प्रेसीडेण्ड वांग ने कहा कि अदालतों की जांच-पड़ताल में कभी ग़लती भी हो जाती है और एक मामले में ग़लती से सज़ा भी दी गई थी। किन्तु सत्य घटना का पता लगने पर, अदालत ने अफ़सोस ज़ाहिर किया और दण्डित व्यक्ति को अदालत की ओर से हर्जाना दिया गया था। आपने बड़ी नम्रतापूर्वक बताया कि चीन की अदालतें अभी प्रयोग की दशा में ही हैं और उनकी निर्णय-व्यवस्था को अधिकाधिक जन हितकारी और न्यायपूर्ण बनाने का प्रयत्न किया जारहा है। ज्यों-ज्यों केडरों की योग्यता और उनके अनुभवों में वृद्धि और जजों की विश्लेषण-शक्ति उन्नत होती जायेगी, त्यों-त्यों अदालतें भी जनता की अधिकाधिक सेवा करने के योग्य होती जायेगीं।

नये चीन की क़ानून-व्यवस्था में, जनता के निकट सम्पर्क द्वारा जन सेवा की भावना मुख्य रहती है और जनता को अपने मामलों का फ़ैसला करने में स्वावलंबी बनने की शिक्षा दी जाती है। सामान्य कार्यक्रम, नया विवाह-क़ानून, किसान-सुधार-क़ानून और ट्रेड यूनियन-क़ानून आदि छोटी-छोटी पुस्तिकायें ही इस समय चीन के दण्ड-विधान की क़ानूनी पुस्तकें हैं और इन्हीं के आधार पर, जनतांत्रिक तरीक़ों से ४७ करोड़ जनता के मामलों के फ़ैसले किये जाते हैं। चीन की जन-अदालतों की कार्रवाइयाँ कुछ लोगों को भले ही अनोखी मालूम हों, लेकिन चीनी क़ानून-व्यवस्था आत्मालोचना द्वारा आत्मसुधार की आवश्यकता मानती है। यह व्यवस्था उसी समाज में चल सकती है, जहां नूतन रचना के कारण जनता की मनोवृत्ति में मौलिक परिवर्तन होरहे हों।

नई जेलें

पीकिंग के जेलख़ाने के दरवाज़े पर पहुंचते ही, जेल के लाउड स्पीकर से गीतों की ध्वनि सुनाई देने लगी। जेल के बाहर संगीनों का पहरा नहीं था। बड़े-बड़े तालोंवाले फाटक नहीं थे। ऊंची दीवारें भी कहीं दिखाई न देती थीं।

क़ैदियों के कमरों में भी ताले नहीं लगे थे और न लोहे की छड़ें ही थीं। एक लम्बे से कमरे में लकड़ी के तख़्तों पर कई क़ैदियों के बिस्तर बिछे हुए थे। संभवतः सभा होरही थी। एक क़ैदी खड़ा होकर, भाषण देरहा था और बाक़ी सब अपनी डायरियों में कुछ नोट कर रहे थे। बाहर दालान में, एक रस्सी पर मुंह-हाथ पोंछने के छोटे तौलिये सूख रहे थे। एक कोने में लकड़ी की अलमारी में मुंह धोने के बरतन और ब्रश आदि रखे हुए थे। वहीं क़ैदियों द्वारा हाथ से लिखे हुए अख़बार और दीवार-पत्र लगे हुए थे। सहसा विश्वास नहीं होता था कि हम लोग किसी जेल में आये हैं।

जेल के अन्दर काग़ज़, साबुन, कपड़े और लोहे के छोटे-छोटे कारख़ाने हैं, जिनमें क़ैदी काम करते हैं। काग़ज़ के कारख़ाने में हाथ की मशीन में लगे हुए लाल और हरे रंगों के तागों की सहायता से काग़ज़ों पर लाल और हरी लकीरें खींची जारही थीं। टाइप ढालने और पुस्तकें छापने आदि की मशीनों पर काम होरहा था। कपड़े की मशीनों से कपड़ा तैयार होरहा था। मोज़े बुने जा रहे थे और उन्हें विविध रंगों से रंगकर, उन पर लोहा किया जारहा था। क़ैदी अत्यन्त तन्मयता से अपना कार्य कर रहे थे। कपड़ा बुनने की कई मशीनों को वे एक साथ सम्हालते और तागा टूट जाने पर, बड़ी फुर्ती के साथ झपटकर जोड़ देते थे। क़ैदियों की यह क्रियाशीलता और उनकी जी-तोड़ मेहनत बड़ी प्रेरणादायक थी।

एक स्थान पर, बिजली की चक्की से मकई पीसी जारही थी। चावल, गेहूं, आटा, तेल, नमक आदि भोजन की सामग्री मिट्टी के बड़े-बड़े पात्रों में भरी थी। रसोईघर में लकड़ी की बड़ी डेगचियों में चावल और साग-भाजी पक रही थी। पास में खेल-तमाशे और नाटकों द्वारा मनोरंजन करने के लिये

रंगमंच वना हुआ था। खेल के मैदान में कुछ क़ैदी वास्केट बॉल खेल रहे थे। सामान ख़रीदने के लिये सहकारी संस्था और अध्ययन करने के लिये पुस्तकालय भी यहां मौजूद थे।

यह जेल सन् १९१२ में वनी थी, इसलिये यहां के मकान वग़ैरह काफ़ी पुराने ढंग के हैं। पहले, यहां क़ैदियों को लोहे की छड़ें लगे हुए कठघरों में रखा जाता था और अनेकों प्रकार के शारीरिक तथा मानसिक कष्ट दिये जाते थे। कमरे के वाहर जाने और अख़बार वग़ैरह पढ़ने की इजाज़त नहीं थी। पर्याप्त पौष्टिक भोजन न मिलने के कारण, क़ैदी अक्सर बीमार रहा करते और वहुत से अकाल मृत्यु के शिकार होजाते थे। क़ैदियों की पोशाक भी अलग थी। उस पर ख़ास चिह्न वने रहते या टिकट आदि लटके रहते थे। उनकी सख़्त निगरानी रखी जाती, लेकिन फिर भी जेल में दंगे-फ़साद होते और क़ैदी जेल तोड़कर भाग जाते थे। नये क़ैदी पुराने क़ैदियों के संपर्क में आकर प्रायः बुरी आदतें सीखते और जेल से छूट कर दूने उत्साह से अपना पुराना पेशा करने लगते थे।

किन्तु, आजकल चीन की जेलों में नये प्रयोग किये जारहे हैं। नियमानुसार, प्रत्येक व्यक्ति को जनतांत्रिक दृष्टि से बनाये हुए सरकारी क़ानूनों का पालन करना चाहिये। लेकिन यदि कोई ऐसा नहीं करता तो सरकार वलपूर्वक नहीं, वल्कि पुनर्शिक्षण द्वारा उसे आत्मसुधार का अवसर देती है। जेल के क़ानूनों में श्रम पर अधिक से अधिक ज़ोर दिया जाता है, जिसका तात्पर्य है कि क़ैदी को श्रम द्वारा शिक्षा प्राप्त कर, अपना सुधार करना चाहिये। जेल में रहकर कोई हुनर सीख लेने पर, जेल से छूटने के वाद उन्हें आसानी से काम मिल सकेगा। भविष्य में वे श्रम से घृणा करना छोड़ देंगे और इससे उनके जीवन का दृष्टिकोण ही वदल जायेगा—इसी दृष्टि से जेलों में आत्मसुधार किया जाता है। आरंभ में कुछ क़ैदी श्रम करने से जी चुराते हैं, परन्तु धीरे-धीरे वे मन लगाकर काम करने लगते हैं। अभ्यास न होने के कारण भी, उन्हें शुरु में कुछ कठिनाई का अनुभव होता है।

जेल के कारख़ानों में क़ैदियों से आठ घण्टों से अधिक काम नहीं लिया जाता। क़ैदी दो घण्टे प्रति दिन अध्ययन करते हैं। खेल-कूद के लिये उनका समय अलग है। वे दो सप्ताहों में एक वार अपने सम्वंधियों से मुलाक़ात

कर सकते हैं। उन्हें पौष्टिक भोजन मिलता है और उनके स्वास्थ का ध्यान रखा जाता है। जेल में क़ैदियों को मारने-पीटने या डांटने-डपटने की मनाई है। यदि जेल का कोई कर्मचारी ऐसा करता है, तो उसके ख़िलाफ़ कार्रवाई की जाती है। क़ैदियों की कोई अलग पोशाक नहीं रहती और प्रायः हथकड़ी का उपयोग नहीं किया जाता। कारख़ानों में परिश्रमपूर्वक काम करने पर, क़ैदियों को पुरस्कार देकर उत्साहित किया जाता है। संतोषजनक कार्य करने पर, उनकी क़ैद की अवधि कम कर दी जाती है। क़ैदियों को राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय गतिविधि का परिचय कराया जाता है और उनके लिये अख़बारों आदि की व्यवस्था है। इन लोगों को पुरातन समाज का विश्लेषण करना सिखाया जाता है, जिस समाज के कारण उन्हें प्रतिक्रियावादियों का एजेण्ट बनने या चोरी आदि करने के लिये बाध्य होना पड़ा था।

जेल के अधिकारी आन् ने हमें बताया कि आजकल क़ैदी जेल के कर्मचारियों को तकलीफ़ नहीं देते, लड़ाई-झगड़ा नहीं करते और जेल तोड़कर भागने की चेष्टा नहीं करते। सन् १९५१ में, केवल एक क़ैदी ने भागने का प्रयत्न किया था। आपका विश्वास है कि पुनर्शिक्षण द्वारा अधिकांश क़ैदियों का सुधार होना संभव है। यदि कोई क़ैदी जेल से छूटकर पुनः अपराध करने लगे, तो एक प्रकार से नैतिकता की दृष्टि से, इसमें जेल-अधिकारियों का ही दोष समझा जाना चाहिये। कुछ आजन्म सज़ावाले क़ैदी भी इस जेल में हैं, जिन्हें वास्तव में मृत्यु-दण्ड दे दिया जाना चाहिये था, किन्तु उनके साथ भी क्रूरता का बरताव करने की नीति सरकार की नहीं है, इसलिये ऐसे क़ैदियों को भी पुनर्शिक्षण का अवसर दिया जारहा है। अधिकांश क्वो मिंतांग के एजेण्ट क़ैदी इसी मनोवैज्ञानिक पद्धति से सुधर रहे हैं और कुछ बिलकुल सुधर गये हैं। कुछ आजन्म सज़ायाफ़्ता क़ैदियों की अवधि घटाकर १५ वर्ष कर दी गई है और १०० से अधिक क़ैदी नियत अवधि के पूर्व ही छोड़ दिये गये हैं।

क़ैदियों की कुल संख्या लगभग २ हज़ार है। इनमें अधिकांश क्वो मिंतांग के एजेण्ट रहे हैं, बाक़ी चोर और अवारागर्दों का जीवन बितानेवाले हैं। विवाह-क़ानून भंग करनेवाले भी कुछ क़ैदी इस जेल में हैं, जिन्होंने अपनी स्त्री या बच्चों के प्रति निर्दयता का व्यवहार किया था। अधिकांश क़ैदी ५ से

१० वर्षों की सज़ा वाले ही हैं। इनमें से कुछ ने गंभीर अपराध किये हैं, जिनसे देश के क्रान्तिकारियों को भीषण क्षति पहुंची है। एक स्त्री बचपन से लगाकर १८ वर्ष तक गुप्तचर का काम करती रही थी, जिसके कारण अनेक देशभक्तों को अपने जीवन से हाथ धोने पड़े थे। कुछ स्त्रियाँ अपनी पुत्र-वधुओं के प्रति क्रूरता का बरताव करने के कारण भी सज़ा भुगत रही हैं।

मेरे एक प्रश्न के उत्तर में, आन् ने कहा कि यद्यपि मुक्ति के बाद जेल में आनेवाले क़ैदियों की संख्या बराबर कम होती जारही है, किन्तु जब तक साम्राज्यवादी रहेंगे जेलें भी क़ायम रहेंगी; क्योंकि चीन के नवनिर्माण में बाधा उपस्थित करने के लिये वे कोई न कोई जाल ज़रूर रचते रहेंगे।

जेल से बाहर निकलने पर, आकाश से रुई के सफेद रेशों की भांति ज़ोर की बरफ़ गिरने लगी थी। ठंड के कारण, हाथों की उंगलियां सुन्न पड़ गई थीं। मैं चीन की नई जेलों के भविष्य के विषय में सोचता जारहा था, जहां श्रम द्वारा आत्मसुधार करने के अभिनव उद्योग किये जारहे हैं।

स्त्रियों की मुक्ति

कनफ्यूशियस धर्म के अनुसार, स्त्री पुरुष की बराबरी नहीं कर सकती । उसके चार आवश्यक गुण बताये गये हैं—उसका चरित्र अच्छा होना चाहिये अर्थात् उसे परिश्रमी, मितव्ययी, विनम्रा और त्यागी होना चाहिये, अपने सगे-सम्बंधियों के साथ सदा शांतिपूर्वक रहना चाहिये; उसे साफ़-सुथरी तथा क़ायदे में रहना चाहिये, आवाज़ बड़ी कोमल और धीमी होनी चाहिये; उसे इधर-उधर की गपशप नहीं करनी चाहिये तथा अपने पति, देवर और देवरानी की कभी शिकायत नहीं करनी चाहिये; पाक-शास्त्र, सीने-पिरोने तथा बेल-बूटे काढ़ने की कलाओं में कुशल होनी चाहिये । कनफ्यूशियस धर्म पर आधारित, च्यांग काई शेक के 'नव जीवन आन्दोलन' में भी स्त्री के लिये कोई स्थान

नहीं था। दर असल ज़मींदारी प्रथा का उन्मूलन किये बिना, स्त्री अपने गुलामी के घृणित जीवन से छुटकारा नहीं पा सकती। यह बात च्यांग के मस्तिष्क में आनी कठिन थी। 'श्वेत बालोंवाली कन्या' की कहानी से स्पष्ट है कि स्त्रियों के प्रति ज़मींदारों के अत्याचार किस दर्जे तक पहुँच गये थे। भूमि-सुधार आन्दोलन के कुछ ही दिन पूर्व, आन् हुई प्रान्त के फू यांग ज़िले में एक ज़मींदार के ७० स्त्रियां थीं। यह ज़मींदार कहा करता था कि नौकरों की अपेक्षा स्त्रियां रखना अधिक लाभप्रद है, क्योंकि उन्हें किसी प्रकार की तनख़्वाह नहीं देनी पड़ती पर उनसे इच्छानुसार काम लिया जा सकता है। चीन में एक पुरानी कहावत है—'जब स्त्री को गुस्सा आता है, तो पति उसे मारता है और जब पति को गुस्सा आता है तब भी वही उसे मारता है।' इससे चीनी महिलाओं के कष्टमय घृणित जीवन का अन्दाज़ा लगाया जा सकता है।

परन्तु चीन में १ मई, १९५० को विवाह-क़ानून पास होने के पश्चात, चीन की स्त्रियों के जीवन में एक अद्भुत क्रान्ति पैदा होगई है। इस क़ानून का उद्देश्य है—मनमानी और अनिवार्य सामंती विवाह-प्रथा का उन्मूलन करना; जो स्त्री के मुक़ाबिले पुरुष की उच्चता पर ही आधारित है और जिसमें संतान के हितों की उपेक्षा की गई है। नई जनवादी विवाह-प्रथा में अपने साथी की स्वतंत्र पसंदगी, एकविवाह, स्त्री-पुरुष के समानाधिकार और स्त्री तथा संतान के क़ानूनी अधिकारों का उल्लेख है। इस क़ानून के अनुसार, संतान का पालन-पोषण करना और उसे शिक्षित बनाना माता-पिता का कर्त्तव्य है। संतान का भी फ़र्ज है कि वह अपने माता-पिता को सहारा दे और उनकी सहायता करे। तलाक़ के सम्बंध में कहा गया है कि दोनों की इच्छापूर्वक ही तलाक़ दिया जा सकेगा। यदि केवल एक तलाक़ देना चाहे, तो उस ज़िले की सरकार दोनों पार्टियों में समझौता कराने की चेष्टा करेगी। तलाक़ के बाद यदि स्त्री ने फिर से विवाह नहीं किया और उसे जीवन-निर्वाह में कठिनाई होती है, तो पुरुष को उसकी सहायता करनी लाज़िमी है।

सामंती विवाह-प्रथा को नष्ट करना और नये जनवाद के आधार पर नयी विवाह-प्रथा को जारी करना—यही विवाह-क़ानून का बुनियादी सिद्धान्त है। क़ानून में विवाह करने और तलाक़ देने की स्वतंत्रता सुरक्षित रखी गई है। सामंती ज़माने में तलाक़ के विशेषाधिकार केवल पुरुषों को ही प्राप्त थे, जिससे

स्त्रियों के शोषण में वृद्धि ही होती थी। क्वो मिंतांग शासन-काल में स्त्रियों को क़ानून द्वारा तलाक़ देने की इजाजत मिल गई थी, लेकिन विरली ही स्त्रियाँ तलाक़ की दरख़्वास्त देती थीं। अदालतें भी तलाक़ मंजूर करने में अनेक रोड़े अटकाती थीं, जिससे तलाक़ कोई वास्तविक चीज़ नहीं बन पाई थी। तलाक़ के सम्बंध में सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि चीन के विवाह-क़ानून में पति-पत्नी को यथासंभव मेल-मिलाप और प्रेम से रहने का आदेश है। इसीलिये पहले, न्यायालय द्वारा दोनों में समझौता कराने का भरसक प्रयत्न किया जाता है, परन्तु यदि पति-पत्नी का किसी भी हालत में एक साथ रह सकना संभव न हो तभी तलाक़ की इजाजत दी जाती है। सरकारी आंकड़ों से पता चलता है कि मनमानी अनिवार्य विवाह-प्रथा, स्त्रियों की विक्री, उनके प्रति दुर्व्यवहार, वाल-विवाह, वहु-विवाह, व्यभिचार तथा स्त्री का परित्याग—यही वातें तलाक़ में मुख्य कारण रही हैं। तलाक़ की दरख़्वास्त करनेवाली प्रायः स्त्रियां ही होती हैं और खासकर ऐसी स्त्रियां जो भूमि-सुधार के पश्चात् अपने हिस्से की भूमि प्राप्त कर, आर्थिक दृष्टि से स्वतंत्र होगई हैं।

वेश्यावृत्ति का उन्मूलन करने में, इस क़ानून से खास तौर पर सहायता मिली है। २१ नवम्बर, १९४९ को समस्त मण्डल प्रतिनिधि परिषद द्वारा पीकिंग में वेश्यावृत्ति समाप्त करने का प्रस्ताव स्वीकृत किये जाने पर, उसी रात को २३७ वेश्यागृहों के मालिकों को गिरफ़्तार करके, १,२९० महिलाओं को उनके चंगुल से मुक्त किया गया था। इन महिलाओं की उम्रें १३ वर्ष से लगाकर ५३ वर्ष तक की थीं; जिनमें १८ से २५ वर्ष तक की युवतियां ही अधिक थीं। केवल वेश्यागृहों को वन्द करने से ही काम समाप्त नहीं होजाता, इसलिये इन महिलाओं को वेश्यागृहों से लाकर पीकिंग की 'महिलाओं की उत्पादन और शिक्षण संस्था' में रखा गया, जहां वे स्वस्थ होकर कोई काम सीख सकें और भविष्य में सम्मान का जीवन व्यतीत कर सकें।

वेश्यावृत्ति पर निर्भर रहनेवाली, ये महिलायें अनेक वर्षों से कुत्सित और घृणित जीवन विता रही थीं। इनमें से अधिकांश दरिद्रता के कारण अपने परिवारों द्वारा वेश्यालयों के मालिकों को वेच दी गई थीं, जो उनके साथ अत्यन्त निर्दयता का वरताव करते थे। क्वो मिंतांग अधिकारियों के दुर्व्यहार के कारण, ये महिलायें उनसे भयभीत रहतीं और मन ही मन उनसे घृणा करती थीं। उनसे कहा गया था कि कम्युनिस्ट उन्हें पकड़कर भूमि-सुधार

के लिये गांवों में भेज देंगे और वहां ग़रीब मज़दूरों के साथ उनका विवाह कर देंगे। इन सब कारणों से, इन महिलाओं को नई सरकार पर विश्वास नहीं होता था। आरंभ में उक्त संस्था के नये वातावरण को अनुकूल बनाने में काफ़ी परेशानी हुई, किंतु धीरे-धीरे उन्होंने इस संस्था में अक्षर-ज्ञान प्राप्त करके राजनीतिक चर्चाओं में भाग लेना शुरू किया; आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिये दस्तकारी, नर्सिंग आदि की ट्रेनिंग प्राप्त की। उन्हें अपनी आप-बीती सुनाने और अभियोग-सभाओं में सम्मिलित होने के लिये, प्रोत्साहित किया गया। उन्होंने इन सभाओं में पुलिस अधिकारियों के समक्ष वेश्यालयों के मालिकों के जघन्य कृत्यों का पर्दाफ़ाश किया।

सामन्ती समाज की शिकार बनी हुई, इन 'अबलाओं' की करुण कहानी अत्यंत हृदयद्रावक है। इसे एक युवती के शब्दों में ही सुनिये: "जब मैं लगभग १४ वर्ष की थी, महावट पड़ने के कारण हमारी सब फ़सल नष्ट होगई थी। उसी समय घोर दुष्काल पड़ा और टिड्डियों ने सारे खेत नष्ट कर दिये थे। वृक्षों की छाल और घास-पात खाने के सिवाय, हमारे लिये कोई चारा न था। उस इलाक़े में ज़मींदार ही एक ऐसा व्यक्ति था, जिसके पास खाने के लिये काफ़ी अनाज था। ज़मींदार हम लोगों से दो वर्षों का लगान मांगता था। हम लोगों को खाने के भी लाले पड़ रहे थे। एक वर्ष के लगान के एवज़ में, उसने मुझे चाहा और अगली फ़सल में बीज बोने के लिये कर्ज़ भी देना मंजूर किया। मेरे माता-पिता अत्यंत असहाय दशा का अनुभव कर रहे थे।

"एक रात हम चुपके से अपने गांव से भाग निकले। मेरे और मेरी मां के पैर बचपन से ही बंधे हुए थे, इसलिये हमें चलने में बहुत कष्ट होता था। हमें गुफ़ाओं में रहकर रात्रि बितानी पड़ती थी। अस्वस्थता के कारण, मेरे पिता चलने में असमर्थ थे। इसलिये, हमें उन्हें प्रायः अपनी पीठ पर बैठाकर चलना पड़ता था।

"शी आन् पहुंचकर, हमने अपने सम्बंधियों की खोज करनी आरंभ की। जब किसी का भी कोई पता न लगा, तो हम रेलवे स्टेशन के पास एक सराय में ठहर गये। यहां मेरे पिता की मृत्यु होगई। एक सरकारी अफ़सर ने शव को तीन दिनों के अन्दर दफ़नाने का हुक्म दिया, किन्तु हमारे

पास एक फूटी कौड़ी भी न थी। सराय का किराया तक देने के लिये हमारे पास कुछ न था। सराय का मालिक रोज़ पैसों के लिये तक़ाज़ा किया करता था।

"एक दिन शाम को, जब मेरी मां पिता के शव के नज़दीक बैठी हुई रोरही थी, सराय के मालिक ने मुझे अपने कमरे में बुलाकर, पहले तो बिना पैसे के सराय में ठहरने के कारण डांटा और फिर धीरे से कहने लगा कि यदि मैं अभिनेत्री बनने को राज़ी होऊं, तो वह हमारी कुछ सहायता कर सकता है। जब मैंने अपनी मां के सामने सराय के मलिक का यह प्रस्ताव रखा, तो वह निराशा से पिता के शव को पीटकर और ज़ोरों से रोकर कहने लगी कि उसके जीते जी वैसा कभी न होगा।

"तीन दिन होने को आये थे और हम पिता के लिये तावूत का प्रबन्ध न कर सके थे। इस समय सराय का मालिक हमारे कमरे में आया और आहिस्ता से अपना हाथ मेरे कंधे पर रखकर कहने लगा : 'यदि तुम सचमुच एक पितृभक्त लड़की हो, तो तुम अपने पिता के शव को जंगली कुत्तों द्वारा चींथे जाने के लिये कूड़े के ढेर पर फेंकना कभी भी पसंद न करोगी और मेरा प्रस्ताव स्वीकार कर लोगी।'

"इस विषय पर मैंने कुछ सोचना चाहा, किन्तु मेरी आंखों के सामने अंधकार ही अंधकार दिखाई देने लगा। मुझे समस्या का कोई हल न सूझ पड़ता था। उस दिन दोपहर को, मैं अपनी मां से बिना पूछे ही सराय के मालिक के कमरे में गई और अभिनेत्री बनना स्वीकार करने के लिये, मैंने उसके दिये हुए काग़ज़ पर अंगूठा लगा दिया। सराय के मालिक से पैसा प्राप्त कर, मैं बड़ी प्रसन्न हुई। हम लोगों ने एक मामूली सा तावूत ख़रीद कर पिता को दफ़ना दिया।

"पिता का क्रिया-कर्म सम्पन्न होने के पश्चात, उसी रात को सराय के मालिक ने मुझे अपने कमरे में बुलाया और मेरे मुंह में कपड़ा ठूंसकर मेरे साथ बलात्कार किया। दूसरे दिन, उसने मुझे एक आदमी के हाथ बेच दिया।

"मैंने बहुत चाहा कि उस आदमी के चंगुल से निकलकर, किसी तरह अपनी मां के पास पहुंच जाऊं। परन्तु, उस दुष्ट ने मुझे एक कमरे में बन्द करके तीन दिनों तक भूखी रखा। चौथे दिन, वह मेरे पास आकर एक संसी से मेरी खाल नोचने लगा। जब मैं दर्द के मारे चीख़ मारती, वह कहकहा मारकर हंसता और अधिक ज़ोर से नोचता था।

" कुछ दिनों बाद, इस आदमी ने मुझे अन्यत्र ले जाकर वेश्यालय के एक मालिक को बेच दिया। यहां मेरे जैसी सात लड़कियां और थीं। हम लोगों को सरायों और होटलों में घूम-घूम कर ग्राहकों को ढूंढकर लाना पड़ता और यदि कभी कोई ग्राहक न मिला, तो उस दिन गेहूं का भूसा खाकर कमरे के बाहर सोना पड़ता था। चार वर्षों तक कुत्सित जीवन व्यतीत करने के कारण, मैं यौन रोग से पीड़ित रहने लगी थी। जब ग्राहकों को मेरी बीमारी का पता चलता, तो वे मालिक पर बहुत गुस्सा होते और अपना पैसा वापिस लेने के लिये झगड़ा करते थे। मेरे मालिक ने हुक्म दिया कि ग्राहकों के आने पर मैं बत्ती बुझा दिया करूं, किन्तु इससे भी विशेष अन्तर नहीं पड़ा।

" आखिर जब मेरी हालत ख़राब होगई और मैं मालिक के लिये पैसा कमाने में असमर्थ हो चली, तो उसने दूसरी लड़कियों के कपड़े धोने और उनका खाना बनाने का काम मेरे सुपुर्द कर दिया। इसके बाद इलाज करने पर भी जब मैं अच्छी नहीं हुई, तो उसने मुझे पीकिंग वेश्यालय के एक मालिक को बेच दिया था। २१ नवम्बर, १९४९ को जब सरकार वेश्यालयों के मालिकों को पकड़कर गिरफ़्तार कर रही थी, तो मैं एक वेश्यालय में पाई गई थी। "

पहले, अत्यंत दारुण यातनायें सहन करने के कारण ही, संभवतः चीन की महिलायें आज कोरिया-युद्ध के मोरचे पर काम करने तथा हवाई जहाज़, इंजिन, ट्रैक्टर, ट्रॉम, बस आदि चलाने के साहसपूर्ण कामों में हाथ बंटाने के लिये अत्यधिक उत्सुक हैं। रेल का इंजिन चलानेवाली थ्येन् क्वैयिंग आदि महिलायें चीन में काफ़ी प्रसिद्धि प्राप्त कर चुकी हैं। छ्येन् चन् यिंग हाई नदी पर काम करनेवाली इंजीनियर महिला हैं, जिनके निरीक्षण में बाढ़ें रोकने के लिये बांध-निर्माण का कार्य सम्पन्न हुआ है। चीन की महिलाओं ने 'अमरीकी आक्रमण को रोको', 'कोरिया की सहायता करो,' भूमि-सुधार तथा क्रान्ति-विरोधियों के दमन सम्बंधी राष्ट्रीय आन्दोलनों में हिस्सा लेकर, राष्ट्र-निर्माण के कार्यों को आगे बढ़ाया है। महिला श्रमजीवियों की संख्या भी आजकल काफ़ी बढ़ रही है। कपड़े के कारख़ानों में ७०%, पोर्ट ऑर्थर के भारी उद्योग-धंधों में ३५% और हलके उद्योग-धंधों में ३७% महिलायें काम करती हैं। बहुत सी महिलायें 'आदर्श श्रमजीवी' कहलाती हैं। वे बड़ी-बड़ी मशीनें चलाती हैं और कारख़ानों की मैनेजर तथा डाइरेक्टर आदि के पदों पर भी नियुक्त हैं।

अनेक महिलायें जनता की प्रतिनिधि परिषदों की सदस्या हैं और केन्द्रीय सरकार में उपाध्यक्ष, मंत्री, उपमंत्री, डाइरेक्टर तथा जज आदि के उत्तरदायित्वपूर्ण पदों पर कार्य करती हैं। 'समस्त चीन महिला संघ' महिलाओं के हितों का ध्यान रखता है और उनकी सुविधाओं के लिये सदा प्रयत्नशील रहता है।

आजकल चीन की महिलाओं को अपने राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक अधिकार प्राप्त होगये हैं, जिससे अब वे पुरुष के हाथ की कठपुतलियां नहीं रह गई हैं। इस सम्बंध में विशेष ध्यान रखने की बात यह है कि पुरुष के समान अधिकार प्राप्त होजाने पर भी, पूंजीवादी प्रणाली का अनुकरण करनेवाले देशों की भांति, उनमें पुरुषों से गला-काटू प्रतियोगिता करने की भावना पैदा नहीं हुई है। नये चीन में राष्ट्र-निर्माण का कार्य इतना अधिक बढ़ गया है कि कार्य-क्षेत्र में स्त्रियों के बढ़ जाने से पुरुषों के बेकार होजाने का प्रश्न ही नहीं उठता। चीन की महिलायें पुरुषों के साथ राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में कार्य करती हैं, फिर भी उनका नैतिक स्तर उन्नत है। इसमें सन्देह की गुंजायश नहीं है।

नये चीन की महिलायें सामन्ती बन्धनों से मुक्त होकर, उन्मुक्त कंठ से गाती हैं :

"प्राचीन समाज एक सूखे हुए कूप के समान था—
"काला, कड़वा और दस हजार फीट गहरा।
"इसकी तली में सभी शोषित प्राणी रहते थे; सबसे नीचे थीं स्त्रियां !
"हम सब दिनों और महीनों की गिनती नहीं कर सकतीं।
"हम अनन्त कटु जीवन के सभी वर्षों को नहीं गिन सकतीं।
"हम घोड़ों और बैलों की भांति श्रम किया करती थीं।
"लेकिन, किसने हमारा उद्धार किया ?
"अध्यक्ष माओ और महान् चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने।
"जिन्होंने जीवन की कटुता के फल चखे, उन्होंने सुखों के दर्शन किये,
"उन्होंने सामंतवाद के पुराने लोहे के द्वार को तोड़ डाला !
"किसको विश्वास था कि कभी लोहे के वृक्ष पर भी फूल खिलेंगे !"

चीन के भावी निर्माता

पेहाई के शिशुगृह में प्रवेश करते ही, 'शुशु नि हाव्' (चाचा जी, आप कैसे हैं ?) की मधुर ध्वनि सुनाई देने लगी। प्रसन्न-वदन, गुलाबी गालोंवाले शिशु उछलते-कूदते हुए हमारे पास आकर लिपट गये। मेरी लड़की चक्रेश

से उन्होंने प्रश्नों की झड़ी लगा दी—'कौनसे देश की रहनेवाली हो? तुम्हारे माथे पर लाल बिन्दी क्यों लगी है? तुम्हारे नाखून लाल क्यों हैं? तुमने इतने बिल्ले क्यों लगा रखे हैं?'—आदि। कैमरा देखकर कहने लगे: 'हमारा फोटो खींचो' और कमरे के बाहर रखे हुए लकड़ी के घोड़े तथा अपने अन्य वाहनों पर चढ़कर फोटो खिंचवाने बैठ गये। फिर, हम लोगों के साथ खेलने-कूदने लगे और कुछ समय बाद 'चाय् च्येन्' (फिर मिलेंगे!) कहकर, उन्होंने हमें बिदा किया।

एक कमरे में बालकों की क्लास चल रही थी। अध्यापिका के सामने पौधे का एक गमला रखा था और वह बड़े स्नेहपूर्वक बच्चों को फूलों के रंगों का ज्ञान करा रही थी। बालक उत्सुकता से उसके प्रश्नों का उत्तर देने के लिये हाथ उठा रहे थे। दूसरे कमरे के नन्हें-नन्हें शिशुओं ने तालियां बजाकर, हमारा स्वागत किया और फिर अपनी संरक्षिकाओं के साथ मिलकर नृत्य करने लगे। नृत्य के बोल का अर्थ था: हम आपका स्वागत करते हैं। आपके आने से हमें बहुत खुशी हुई है। हममें त्रुटियाँ हैं। आप हमारी त्रुटियों को बताइये, जिससे हम अपने कामों में सुधार कर सकें।

नृत्य समाप्त होने के बाद, सभी बालक अपने-अपने स्थानों पर बैठ गये और एक शिशु खड़ा होकर कहानी सुनाने लगा: "लिन् एक लड़का था। उसके माता-पिता बाहर काम पर गये हुए थे। लिन् को कुछ खास काम न था। उसने फावड़ा उठाया और अपने घर के पीछे की ज़मीन खोद कर, वहां अनाज बो दिया। जब उसके माता-पिता लौटकर आये, तो उन्होंने पूछा: 'यह अनाज किसने बोया है?' लिन् ने उत्तर दिया: 'मेरे दस छोटे मित्रों ने!' मित्रों का नाम पूछने पर, लिन् ने अपनी दस उंगलियां दिखा दीं!"

पीकिंग के पे हाई स्थित शिशुगृह की स्थापना सन् १९४९ में हुई थी। आरंभ में बालक पुराने घरों में रहते थे, किन्तु अब उनके लिये एक आलीशान इमारत बना दी गई है। इस शिशुगृह में अधिकतर उन महिला कार्यकर्त्ताओं के ही बच्चे रहते हैं, जो केडरों आदि के काम करती हैं। मातायें अपने बच्चों को शनिवार के दिन घर ले जाती हैं और इतवार को वापिस छोड़ने आती हैं। इससे माताओं को अपने कार्य करने में बड़ी सहूलियत रहती है। सब मिलाकर २५० बच्चे हैं, जो ११ कक्षाओं में बंटे हुए हैं। कम से कम आठ महीने के

और अधिक से अधिक ७½ वर्ष तक के बालक यहां रहते हैं। बच्चों के कपड़े-जूते और खेल-खिलौने व्यवस्थित रूप में छोटी-छोटी अलमारियों में रखे हुए थे। गुसलखाने और रसोईघर साफ़-सुथरे और स्वच्छ थे। कुछ बच्चों की संरक्षिकायें कपड़े पहिना रही थीं। कक्षा में ही एक रंगमंच बनी हुई थी, जहां शिशु नाटक आदि करते हैं। जिन लोगों का सारा व्यय सरकार उठाती है, उन्हें शिशुगृह में कुछ नहीं देना पड़ता। वेतन-भोगियों से लगभग ४० रुपये माहवार के हिसाब से लिये जाते हैं।

शिशुगृह में प्रवेश करते समय बालक अपने मां-बाप को याद करते हैं, बाद में उन्हें यहां का सामाजिक जीवन प्रिय लगने लगता है। इतवार के दिन अपने घर से वापिस आने पर, वे अपनी संरक्षिका और अपने साथियों को घर की सब बातें सुनाते हैं। धीरे-धीरे शिशुगृह उन्हें इतना अच्छा लगने लगता है कि बड़े होकर भी वे उसे छोड़ कर जाना पसंद नहीं करते। शिशुगृह छोड़ कर जाने के कुछ दिनों पहले से ही, संरक्षिका बालकों को समझाने लगती है कि अब उसे बड़ी कक्षा में जाना होगा। प्राइमरी स्कूलों के अध्यापक भी शिशुगृह में आकर बालकों से सम्पर्क स्थापित करते हैं।

सामान्य कार्यक्रम में अपनी मातृभूमि, जनता, विज्ञान, सार्वजनिक सम्पत्ति और श्रम से प्रेम करने का उल्लेख है। तदनुसार बच्चों को अपनी संरक्षिका, अध्यापिका, नौकरानी और रसोइयों आदि से प्रेम करना सिखाया जाता है। बालक मुर्गी के बच्चे, ख़रगोश, कबूतर, मछली वग़ैरह पालते हैं, पौधे लगाते हैं, अनाज बोते हैं, फ़सल काटते हैं; उसे अपने साथियों और अध्यापिकाओं को बांटते हैं, अपने प्रिय नेता माओ को भेजते हैं। वे पे हाई पार्क की सैर करने जाते हैं, जहां फूल-पौधों को उगता हुआ देखकर उनकी सृजनात्मक शक्ति विकसित होती है। वे तसवीरें और मिट्टी के खेल-खिलौने बनाते हैं तथा लकड़ी के टुकड़ों द्वारा रेलगाड़ी और मोटर आदि बनाकर खेलते हैं। बड़े होने पर, वे अध्यापिकाओं के साथ कारखानों, खेतों, ईंटों के भट्ठों, रेलवे स्टेशनों, डाकखानों, लाइब्रेरियों आदि को देखने जाते हैं और इन स्थानों में काम करनेवाले जनता के सेवकों का आदर करना सीखते हैं। उन्हें आदर्श श्रमजीवियों से परिचित कराया जाता है। उन्हें बताया जाता है कि चीनी के बरतन और चाय वग़ैरह कहां से और कैसे उनके पास तक पहुंचते हैं। और फिल्मों द्वारा भी उनके ज्ञान को यथासंभव विस्तृत बनाने का

प्रयत्न किया जाता है। शिशुगृह में बच्चों के स्वास्थ का विशेष ध्यान रखा जाता है। वे सुबह उठकर कसरत करते हैं। डाक्टर प्रतिदिन उनकी परीक्षा करता है और खुराक के विशेषज्ञ की सलाह से, उन्हें पुष्टिकारक भोजन दिया जाता है।

पीकिंग में और भी शिशुगृह हैं, जिनमें 'बालकों की सुरक्षा और शिक्षा का स्कूल' बहुत प्रसिद्ध है। इसका पुराना नाम 'लास एन्जिलीस नर्सरी' है। यह शिशुगृह सन् १९४० में येनान में स्थापित किया गया था। जापानियों की बमबारी के कारण, यह शिशुगृह एक स्थान से दूसरे स्थान पर बदलता रहा, जिससे शिशुओं को अनेक पर्वतों और नदियों आदि को लांघना पड़ा था। इस शिशुगृह में क्रान्तिकारियों के शिशु शिक्षा पाते थे, इसलिये हर कोई इसकी रक्षा के लिये प्रयत्नशील रहता था। मार्च सन् १९४९ में यह शिशुगृह घूमता-फिरता पीकिंग आया और तबसे एक पुराना बौद्ध मन्दिर ही इसका स्थान होगया है।

शिशुओं के लिये चीन में एक से एक बढ़कर सुन्दर और सचित्र पुस्तकें प्रकाशित होती रहती हैं। श्रम, सामूहिकता, पारस्परिक सहायता, कृतज्ञता और प्राकृतिक विज्ञान आदि के महत्व को छोटी-छोटी सरल कहानियों द्वारा समझाया जाता है। चीनी बाल-पुस्तकों के निम्न पाठों से इसका अन्दाज़ा लग सकता है—

१. एक लड़का अपनी भेड़ की ऊन लेकर, एक बुढ़िया के पास पहुंचा। बुढ़िया ने उसकी ऊन साफ़ कर दी; इसके बदले में लड़के ने उसकी घास खोद दिया। फिर, वह अपनी मौसी के पास पहुंचा। मौसी ने उसकी ऊन कात दी और लड़का उसकी गायें चराता रहा। फिर, वह अपनी बुआ के घर गया। बुआ ने उसकी ऊन रंग दी और लड़के ने उसके सूअर चरा दिये। उसके बाद, वह अपनी मां के पास पहुंचा। मां ने उसका स्वेटर बुन दिया। स्वेटर होजाने पर, लड़के ने अपनी मां और भेड़ को बहुत धन्यवाद दिया।

२. किसी लड़के ने अपनी मां से एक झण्डा बनवाया। झण्डे को लेकर, वह बाहर गया। किसी आदमी ने उससे झण्डा मांगा और झण्डे के बदले में नाटक दिखाने को कहा। परन्तु, लड़के ने झण्डा नहीं दिया। आगे चलकर उसे एक किसान मिला, उसने लड़के को सेव का लालच दिया, बुढ़िया ने उसे

मिठाई का लालच दिया, उसके एक सहपाठी ने गेंद का लालच दिया; किन्तु लड़के ने किसी को भी झण्डा नहीं दिया। वह सीधा अपने स्कूल में पहुंचा। उसकी अध्यापिका ने पूछा: "तुम इस झण्डे को किसको दोगे?" लड़के ने उत्तर दिया: "इसे मैं अपने स्कूल में लगाऊंगा, जिससे सब लोग देखकर प्रसन्न हों।" लड़के ने झण्डा स्कूल में लगा दिया। झण्डा देखकर, सब बालक बहुत ही प्रसन्न हुए और कहने लगे: "यह झण्डा कितना सुन्दर है, हम इसकी शान न जाने देंगे!"

३. किसी जंगल में बहुत से कबूतर रहते थे। वे सब एक साथ काम करते और एक ही साथ खेलते थे। इन कबूतरों में एक सफ़ेद पंख और लाल चोंच वाला कबूतर भी था। वह अपनी सुंदरता का बहुत घमण्ड करता और दूसरे कबूतरों से नफ़रत करता था। एक दिन, सब कबूतर अपना घोंसला साफ़ कर रहे थे, परन्तु सफ़ेद कबूतर अपने नाच-गान में मस्त था। कबूतरों के पूछने पर उसने जवाब दिया कि वह काम करने से थक जायेगा और उसके पंख मैले हो जायेंगे। कबूतरों ने तिनकों से अपने घोंसले बनाने शुरू किये, परन्तु सफ़ेद कबूतर सोता ही रहा। दूसरे दिन, उसके साथियों ने उससे काम करने के लिये कहा। इस बार सफ़ेद कबूतर को अपने साथियों की बात समझ में आगई। उसने अपना घर साफ़ किया और उस दिन से वह सबके साथ अच्छा बरताव करने लगा। उसके साथी बहुत खुश हुए और कहने लगे: "सफ़ेद कबूतर हमारा कितना अच्छा साथी है!"

४. किसी पेड़ की टहनी पर मकड़ी का जाला लटक रहा था, जिसे मकड़ी ने बड़े परिश्रमपूर्वक तैयार किया था। एक तितली ने उससे पूछा: "मकड़ी! क्या तुम मुझे पकड़ने के लिये जाला बुन रही हो?" मकड़ी ने उत्तर दिया: "मैं केवल उसे पकड़ूंगी जो काम न करेगा और खेलता रहेगा।" उसके बाद, एक कीड़ा आया; एक मक्खी आई; एक मच्छर आया। सबने मकड़ी से वही सवाल पूछा। मकड़ी ने वही जवाब दिया कि जो काम न करेगा और दूसरों को नुक़सान पहुंचायेगा उसे ही वह पकड़ेगी। इतने में अचानक हवा का एक झोंका आया और मकड़ी का जाला टूट गया। यह देखकर तितली, कीड़ा, मक्खी और मच्छर सब ज़ोर-ज़ोर से हंसने लगे। मकड़ी कुछ न बोली। वह चुपचाप दिन भर अपना जाला बुनती रही। एक दिन वर्षा में उसका जाला फिर टूट गया। फिर, सब मकड़ी का मज़ाक उड़ाने लगे और हंसते-हंसते लोटपोट हो

गये। मकड़ी कुछ न बोली। उसने फिर से जाला बुनना शुरू किया। इस बार तितली, कीड़ा, मक्खी और मच्छर चारों उसके जाले में फंस गये।

चीन में शिशुओं के विकास के लिये उन्हें शिक्षाप्रद नाटक, सिनेमा आदि दिखाने का भी प्रबन्ध है। उन्होंने अपने नाटक-गृह बनाये हैं, जिनमें वे स्वयं नाटक और नृत्य करते हैं। पीकिंग का शिशु-नाट्यगृह सांस्कृतिक मंत्रिमण्डल की देखरेख में चलता है। इस नाट्यगृह में बच्चों ने अभी कुछ नाटक खेले थे। 'छोटा सफ़ेद खरगोश' नामक नाटक में सफ़ेद खरगोश एक शिकारी की बंदूक उठाकर एक दुष्ट लोमड़ी को मारना चाहता है। किन्तु बन्दूक के खाली होने से, लोमड़ी बच जाती है। बाद में, एक दूसरा खरगोश वहां पहुंचकर सफ़ेद खरगोश की मदद करता है। 'आड़ू पक गये हैं' नामक नाटक में बच्चों का एक झुण्ड तूफ़ान से किसी बुढ़िया के आड़ू के पेड़ की रक्षा करने के लिये आता है। बुढ़िया समझती है कि बच्चे उसके आड़ू खाने आये हैं, लेकिन बाद में उसे यथार्थ परिस्थिति का ज्ञान होजाता है और वह बच्चों से प्रेम करने लगती है।

नये चीन में शिशुओं का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है, इसलिये चीन की सरकार अपने राष्ट्र के भावी निर्माताओं का भविष्य उज्ज्वल बनाने के लिये भरसक प्रयत्न कर रही है।

सार्वजनिक जीवन

उत्तरी चीन में चार महीने भयंकर सरदी पड़ती है। लोग घ में आग जला कर रहते हैं और रुई आदि के गरम पायजामे, कोट, टोपे और जूते पहिन कर ही बाहर निकल सकते हैं। इन दिनों खेती-बारी नहीं होती। फूल और पत्तियों के अभाव में, वृक्षों और झाड़ियों के सूखे ठूंठ खड़े रह जाते हैं। हरियाली कहीं भी नहीं दिखाई देती। नदी-नालों का पानी बर्फ़ बन जाता है। पीकिंग का तापमान २३ डिग्री फैरेनहाइट तक पहुंच जाता है। ऐसी भयंकर शीत में, शीत ऋतु के पक्षी ही यहां ठहर पाते हैं, बाक़ी उष्ण प्रदेशों में उड़ जाते हैं।

जिस दिन हम लोगों ने पहली बार पीकिंग में हिमपात देखा, हमारे उल्लास का ठिकाना न था। मैदान, सड़कें, मकान, दीवारें, वृक्ष, शाखायें और पक्षियों के घोंसले—सभी शुभ्र हिमराशि से आच्छादित होगये थे। जिधर भी ि ५ात करो, ज्योत्स्ना की भांति, हिम ही हिम दिखाई पड़ता था।

पटाखों की आवाज़ों के साथ, 'माव चूशी वान् स्वै' की ध्वनि गुंजित होने लगी थी।

भोजनालय के विशाल भवन में क्रिसमस का वृक्ष सजाया गया था, जो बिजली की बत्तियों से प्रकाशित होरहा था। वृक्ष पर छोटी-छोटी गुड़ियां टंगी थीं। बिजली के बार-बार खुलने-बन्द होने से, आंखें चकाचौंध होरही थीं। भवन में लाल रंग के कंदील टंगे थे, जिन पर 'कोरिया की मदद करो!', 'शान्ति अमर हो!' आदि नारे लिखकर लगाये गये थे। विद्यार्थियों का आनन्दोल्लास सीमा को पार कर गया था। वे जगह-जगह दल बनाकर विविध प्रकार के नृत्य कर रहे थे।

चीन के लोग आदर्शवादी, भावुक और दार्शनिक मनोवृत्ति के न होकर वस्तुवादी, व्यवहारिक और समन्वयशील ही अधिक होते हैं। वे कोई मतभेद होने पर, शान्तिपूर्वक वादविवाद करके उसे सुलझाने के लिये उद्यत रहते हैं। राजनीतिक और सामाजिक क्षेत्रों में सार्वजनिक आलोचना का सिद्धान्त उनकी इसी असाधारण विशेषता पर आधारित है। अपने सवा वर्ष के आवास में, हमने पीकिंग में आदमियों को प्रायः लड़ते-झगड़ते, मारपीट करते या उत्तेजित होते हुए नहीं देखा। भाई-बहिनें आदि भी चीन में कभी ही आपस में लड़ते-झगड़ते हैं। चीन के लोग सरल, विनम्र और आतिथ्य-सत्कार प्रिय होते हैं। उनमें अनुशासन और संयम की भावना रहती है। चीन की महिलायें अपने नैतिक चरित्र के लिये विशेष रूप से प्रसिद्ध हैं।

चीनी जाति का दूसरा असाधारण गुण है—उसकी अद्भुत क्षमता और श्रमशीलता। अपने इन गुणों के कारण ही वह अमरीकी मशीनरी, कल-पुरज़े और औषधियों आदि के अभाव में भी, अपने देश की साधारण और टूटी-फूटी चीज़ों को जोड़-तोड़ और ठोक-पीट कर उनसे काम चला रही है। नये चीन में केवल श्रमजीवी ही नहीं, वल्कि विद्यार्थी, अध्यापक, स्त्री, पुरुष, बूढ़े, जवान —सभी अपने ऐश-आराम की परवा न करके राष्ट्र-निर्माण के कार्यों में अपनी पूरी शक्ति से जुट गये हैं। सरकारी विभागों और रेल के स्टेशनों आदि पर नौजवान लड़के और लड़कियां बड़ी मुस्तैदी से काम करते हुए दिखाई देते हैं। मालूम होता है कि व्यक्ति मात्र ने इस तथ्य को हृदयंगम कर लिया है कि बिना कठोर परिश्रम के राष्ट्र कभी सुखी नहीं बन सकता।

राजनीतिक चेतना में वृद्धि होने के कारण, चीनी जनता में ईमानदारी और सचाई की भावना बढ़ गई है। चोरियों की संख्या बहुत कम होगई है। बैंकों में बन्दूकधारी पुलिस के पहरे की ज़रूरत नहीं रही है। आप कहीं भी खुले आम नोटों की गड्डियां ले जा सकते हैं। दूकानदारों और रिक्शेवालों से मोलतोल करने की आवश्यकता नहीं रह गई है। होटलों के बैरों और नौकरों को 'टिप्स' देना, उनका अपमान करना समझा जाने लगा है।

चीन की पुलिस पहले भ्रष्टाचार और रिश्वतों के लिये विख्यात थी, लेकिन अब उसका मुख्य उद्देश्य जनता की सेवा करना होगया है। सड़क के नियमों को भंग करने के कारण, अब वह रिक्शे या साइकिलवालों को परेशान नहीं करती, न उन पर कोई मुक़दमा ही दायर करती है। वह उन्हें समझा-बुझाकर, बार-बार उनकी गलतियों की ओर उनका ध्यान आकर्षित कर, उन्हें योग्य नागरिक बनाने का प्रयत्न करती है। रात के समय रिक्शे या साइकिल में बत्ती न रहने या बत्ती बुझ जाने के कारण उनका चालान न करके, उनके मालिकों को बत्ती जलाने की सूचना देते हुए सड़क-पुलिस को हमने कितनी ही बार देखा है। साइकिल और रिक्शे की भिड़न्त होजाने पर भी, दोनों पार्टियों को अक्सर उनकी गलती समझा कर छोड़ दिया जाता है।

चीनी पुलिस के दफ़्तर अत्यन्त साधारण और सादगी लिये होते हैं। मामूली सी कुरसी, क़लम-दावात, रजिस्टर और होसका तो एक टेलीफोन—बस यही आवश्यक सामान वहां रहता है। पुलिस के थानों पर भय, आतंक या रोब की जगह, जनता की दुख-तकलीफ़ों को समझने के लिये प्रयत्नशील, हंसते और मुस्कराते हुए पुलिस के अधिकारियों को हमने पहली बार चीन में ही देखा। उनका लिबास इतना सादा होता है कि उनमें बड़प्पन या अधिकार की बू नहीं आती। शीत ऋतु में हमने पुलिस को कितनी ही बार सड़कों पर झाड़ू से बर्फ़ साफ़ करते हुए और राहगीरों की मदद करते हुए देखा है।

नये चीन में अध्ययन की भूख बहुत बढ़ गई है। श्रमजीवी, किसान, सैनिक, पुलिस और नौकर-चाकर आदि सब नियमपूर्वक अध्ययन करते हैं। छुट्टी के दिन आप किसी पुस्तक-विक्रेता की दुकान पर चले जाइये, पैर रखने तक की जगह न मिलेगी और कितने ही बालक ज़मीन पर आसन जमाये अलमारियों में से पुस्तकें निकालकर पढ़ते हुए या उनके चित्रों को उलटते हुए

दिखाई देंगे। आज चीन में पुस्तकों की मांग इतनी बढ़ गई है कि पुस्तकें बाज़ार में आते ही खतम होजाती हैं। कितनी ही बार मासिक पत्र-पत्रिकायें न मिलने के कारण, ग्राहकों को निराश होकर लौटना पड़ता है।

मनोरंजन के लिये सार्वजनिक स्थानों में एकत्रित स्त्री-पुरुष और बालक-बालिकाओं के नाच-गान और आमोद-प्रमोद, 'स्विमिंग पूल' में तैरने के लिये आये हुए नर-नारियों का जमघट, अवकाश के दिन ग्रीष्म-महल आदि स्थानों में जनता की अपार भीड़ तथा विद्यार्थियों और जनमुक्ति सेना के सिपाहियों के विविध खेल—इन सबसे चीनी जनता के आनन्दोल्लास का अनुमान लगाया जा सकता है। चीन के श्रमजीवी वर्ग ने सच्चे मायनों में मुक्ति प्राप्त की है। बुद्धिजीवी वर्ग भी आत्मशिक्षण द्वारा अपनी मनोवृत्ति को बदल रहा है। जो लोग 'रेजीमेण्टेशन' की बातें करते हैं, उनसे हम केवल इतना ही निवेदन करेंगे कि राष्ट्र-विरोधी असामाजिक शक्तियों का दमन करके समाज में व्यवस्था क़ायम करने के लिये, अनुशासन और नियंत्रण की आवश्यकता अनिवार्य है और चीन की नई लोकशाही में जनता की डिक्टेटरशिप का यही अभिप्राय है।

ल्यू शाओ ची

चू तेह

चाओ षू लि
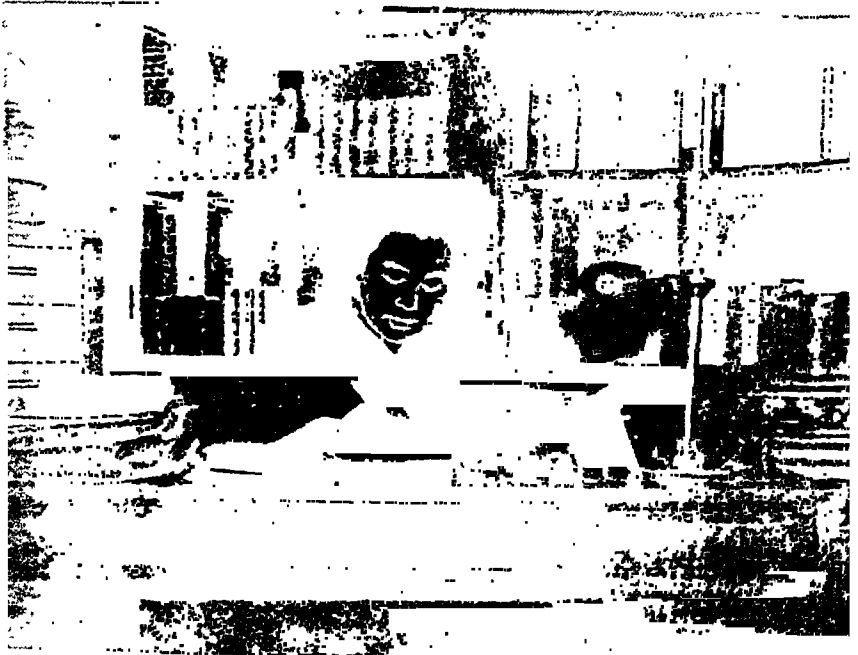
तिंग लिंग

कम्युनिस्ट पार्टी

चीन की परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, मार्क्सवाद के सिद्धान्तों के अनुसार, चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में नया जनवाद क़ायम करना—यही चीनी क्रान्ति की सबसे बड़ी विशेषता है। ल्यु शाओ ची ने इस सम्बंध में अपनी पुस्तक—**चीनी कम्युनिस्ट पार्टी**—में लिखा है: "चीन के सामाजिक और ऐतिहासिक विकास की अपनी निजी विशेषताओं और विज्ञान के क्षेत्र में चीन के पिछड़े रहने के कारण, मार्क्सवाद का व्यवस्थित ढंग से चीनी परिस्थितियों में प्रयोग करना बहुत कठिन और असाधारण काम है।... यहां चीन में जनता का मुख्य अंग मज़दूर नहीं, बल्कि किसान है। यहां हमारा संघर्ष अपने देश की पूंजी से नहीं, बल्कि विदेशी साम्राज्यशाही के दमन और मध्ययुगीन सामन्तवाद के विरुद्ध है।... मार्क्सवाद को चीन की परिस्थितियों में योग्यता और सफलतापूर्वक लागू कर सकने का श्रेय कामरेड माओ को ही है। यह मार्क्सवाद के संसारव्यापी आन्दोलन की सबसे बड़ी सफलताओं में से एक है।"

कम्युनिज़्म सामाजिक विकास की एक अनिवार्य अवस्था है। यह दूसरी बात है कि विभिन्न देशों की भिन्न-भिन्न परिस्थितियों के कारण, उसका रूप भिन्न-भिन्न होगा। साम्राज्यवादी, फासिस्ट, पूंजीपति और सामन्तवादी शक्तियों के घोर शोषण और दमन के विरुद्ध जनता का संगठित होना आवश्यक है। इसलिये, मानव जाति को हर प्रकार के शोषण से मुक्त करनेवाली कम्युनिस्ट व्यवस्था का सामाजिक विकास में एक अन्यतम स्थान है।

प्रथम महायुद्ध और रूस की अक्तूबर की समाजवादी क्रान्ति अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में और साम्राज्यवाद का बढ़ता हुआ दबाव, सामन्तों द्वारा जनता का दमन, जनता के क्रान्तिकारी संघर्ष तथा ४ मई, १९१९ के पश्चात होनेवाला मज़दूर आन्दोलन राष्ट्रीय क्षेत्र में वे परिस्थितियां हैं, जिन्होंने सन् १९२१ में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी को जन्म दिया था।

सन् १९२३ में, कम्युनिस्ट पार्टी और चीन के राष्ट्रपिता डा० सनयातसेन द्वारा स्थापित क्वो मिंतांग पार्टी—दोनों ने मिलकर साम्राज्यवाद और सामन्तवाद का विरोध किया था। किन्तु उनकी मृत्यु के बाद, च्यांग काई शेक ने क्वो मिंतांग पर अधिकार करके, अप्रैल सन् १९२७ में हज़ारों कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यकर्त्ताओं, नौजवान विद्यार्थियों तथा मज़दूरों और किसानों का क़त्ल कर, गृह-युद्ध आरंभ कर दिया था।

१ अगस्त, १९२७ को हा लुंग, चू. तेह आदि सेनापतियों के नेतृत्व में उत्तरी आक्रमणकारी सेना के ३० हज़ार सैनिकों ने नान् छांग में सशस्त्र विद्रोह कर दिया था। इसी समय माओ त्से तुंग ने मज़दूरों और किसानों की लाल सेना तैयार की और हनान-च्यांग शी सीमाप्रान्त पर शत्रु से युद्ध शुरू किया था। अक्तूबर सन् १९२७ में मज़दूर-किसानों की सरकार की स्थापना कर, उन्होंने भूमि-वितरण का कार्य आरंभ कर दिया था। कुछ समय बाद, अपनी सेना के साथ चू तेह भी वहां पहुंच गये थे। सन् १९२९ में दोनों सेनायें च्यांग शी के दक्षिण और फू च्येन् के पश्चिम की तरफ़ बढ़ीं और अपने विस्तृत क्षेत्र क़ायम कर, गुरिल्ला-युद्ध करने लगीं थीं।

सन् १९३० में, लाल सेना की संख्या में वृद्धि होने लगी और इसके क्षेत्र दूर-दूर तक फैल गये थे। इसी समय च्यांग काई शेक ने लाल सेना को चारों ओर से घेरने के लिये ज़बर्दस्त आक्रमण किया था, परन्तु उसे सफलता नहीं मिली। च्यांग की इस राष्ट्र-विरोधी नीति का परिणाम यह हुआ कि १८ सितम्बर, १९३१ को जापानी सेना ने उत्तर-पूर्वी चीन पर आक्रमण कर दिया और सन् १९३२ में शंघाई, १९३३ में जेहोल (रह अर् ल) और छहर (छा हा अर् ल) के उत्तरी हिस्से और १९३५ में हू पै के पूर्वी हिस्से पर उसका अधिकार होगया था।

जापानी आक्रमण का विरोध करने के लिये, कम्युनिस्ट पार्टी ने समस्त देश के मज़दूरों, किसानों और विद्यार्थियों का संगठन किया और सबने च्यांग काई शेक से अपनी युद्धनीति बदलने की मांग की। कम्युनिस्ट पार्टी की इस नीति के फलस्वरूप जनवरी सन् १९३३ में, जापानी सेना के विरुद्ध युद्ध करने के लिये, देश की अन्य सेनाओं के साथ संधि करने की घोषणा की गई; किन्तु च्यांग जापानी आक्रमण की विशेष चिन्ता न करके लाल सेना पर धावा

करता रहा। अक्तूबर सन् १९३३ में, उसने जर्मन फ़ौजी सलाहकारों के साथ १० लाख सैनिकों की सहायता से कम्युनिस्ट सेना पर आक्रमण किया, जिससे लाल सेना को भीषण क्षति उठानी पड़ी। इसी समय, अक्तूबर सन् १९३४ को लाल सेना को च्यांग शी के अड्डे को छोड़ने का हुक्म दिया गया। चारों ओर से घिरे हुये, एक लाख से अधिक सैनिकों ने युद्धों के इतिहास में अभूतपूर्व महा अभियान आरंभ किया।

गृह-युद्ध बन्द करके जापानी आक्रमण का प्रतिरोध करने की आवाज़ देश के हर कोने से उठ रही थी। माओ त्से तुंग ने विदेशी आक्रमण को रोकने के लिये राष्ट्रीय संयुक्त मोरचा बनाने की योजना पेश की, किन्तु च्यांग जनता की मांग ठुकराता हुआ, लाल सेना पर बराबर आक्रमण करता रहा। इसी समय १२ दिसम्बर, १९३६ को जब च्यांग काई शेक कम्युनिस्टों पर छठी बार आक्रमण करने की योजनायें बना रहा था, वह अपने एक सेनापति द्वारा नज़रबन्द कर लिया गया। जापानी आक्रमण के वीरतापूर्ण प्रतिरोध के कारण, इस समय तक कम्युनिस्ट पार्टी की प्रतिष्ठा काफ़ी बढ़ गई थी।

७ जुलाई, १९३७ को जापानी सेना ने पीकिंग के दक्षिण में मार्को पोलो पुल पर आक्रमण कर, युद्ध की घोषणा कर दी। इस समय तक लाल सेना 'आठवीं मार्ग सेना' और 'चौथी सेना' में संगठित की जाचुकी थी। इन सेनाओं ने जापानी सेना का डटकर मुक़ाबिला किया। च्यांग काई शेक ने जनता के दबाव के कारण जापानी आक्रमण का विरोध करना तो स्वीकार कर लिया और इसीलिये देश के हित का ख़्याल कर, कम्युनिस्टों ने उसे इसी शर्त पर रिहाकर दिया; किन्तु सामन्तों और पूंजीपतियों का हिमायती होने से, वह सदा जनवादी शक्तियों के दमन की ही बात सोचता रहता था। ऐसी स्थिति में माओ त्से तुंग ने जापानी युद्ध के प्रतिरोध को जनयुद्ध बनाने के लिये एक कार्यक्रम देश के सामने रखा और साथ ही च्यांग काई शेक की दो मुंही नीति का ज़ोरदार विरोध किया।

इधर जनमुक्ति सेना कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में जापानी सेना के विरुद्ध मोरचा लेती रही, जिससे तीन वर्षों के अन्दर ही इसके सैनिकों की संख्या ४० हज़ार से ५ लाख तक पहुंच गई, १५० क़स्बों पर उसका अधिकार होगया। इसी काल में कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्यों की संख्या में भी आशातीत वृद्धि हुई।

उधर च्यांग काई शेक सन् १९३९-४१ में कम्युनिस्टों के ख़िलाफ़ आक्रमण करता रहा और दूसरी ओर जापानी सेना के समक्ष आत्मसमर्पण करनेवाली क्वो मिंतांग की बहुसंख्यक सेनाओं की सहायता से मुक्त क्षेत्रों पर जापानियों का धावा जारी रहा। इसके सिवाय, च्यांग का गुप्त आदेश पाकर, उसके सैनिकों ने जापानी सेना के साथ मिलकर 'आठवीं मार्ग सेना' और 'चौथी सेना' पर भी आक्रमण जारी रखा।

इसी समय जापानी और क्वो मिंतांग सेनाओं से मुक्त क्षेत्रों का घेरा डाल देने के कारण, कम्युनिस्ट पार्टी को जापानियों के ख़िलाफ़ युद्ध करने तथा उत्पादन आदि में आत्मनिर्भर होने के लिये अनेक प्रयोग करने पड़े। मुक्त क्षेत्रों का केन्द्र, येनान एक महान् प्रयोगशाला बन गई थी। युद्ध कौशल, नई लोकशाही, नई अर्थ-व्यर्वस्था और भूमि-सुधार के सिद्धान्त तथा सब पार्टियों की सम्मिलित सरकार, सैनिकों द्वारा उत्पादन, मज़दूरों और किसानों के लिये साहित्य सृजन, जन कला की रचना तथा पार्टी का पुनर्संगठन आदि योजनायें काफ़ी अनुभवों के पश्चात, इसी काल में बनाई गई थीं; जो आगे चल कर जनवादी सरकार की स्थापना होने के पश्चात, समस्त देश में बड़े पैमाने पर कार्यान्वित की गई।

जून सन् १९४३ में क्वो मिंतांग ने शान्सी-कान्सू-निंगश्या सीमा प्रान्त के क्षेत्रों पर फिर से हमला किया, जिसका चीन की समस्त जनता ने विरोध किया था। उधर च्यांग की जन-विरोधी नीति के कारण, उसकी सेनायें शत्रु-सेना के समक्ष न टिक सकीं और मार्च सन् १९४४ में जापानी सेनाओं ने हूनान, हनान, क्वांगसी, क्वांग तुंग, फू च्येन् तथा क्वै चौ के कुछ हिस्सों पर कब्ज़ा कर लिया था। क्वो मिंतांग सरकार को पुनः संगठित करने और जन-तांत्रिक सम्मिलित सरकार स्थापित करने की मांग सर्वत्र सुनाई दे रही थी। परन्तु अमरीकी साम्राज्यवादियों का बल पाकर, च्यांग इस पर ध्यान देना ज़रूरी न समझता था।

सन् १९३७ से १९४५ तक, जापानी युद्ध के दौरान में जन मुक्तिसेना ने १ लाख १५ हज़ार से अधिक छोटी-बड़ी लड़ाइयाँ लड़ीं, ९ लाख ६० हज़ार जापानी और जापानियों के आधीन सैनिकों को हताहत किया, २ लाख ८० हज़ार को गिरफ़्तार किया और १ लाख को आत्मसमर्पण करने के लिये बाध्य

किया था। अनेक खास-खास शहरों और रेलवे लाइनों आदि पर भी जनमुक्ति सेना का अधिकार होगया था। इससे जनता की दृष्टि में इस सेना की प्रतिष्ठा बहुत बढ़ गई। सेना की शक्ति बढ़ जाने से २४ अप्रैल, १९४५ में होनेवाली ७ वीं पार्टी कांग्रेस के पश्चात, इसका प्रत्याक्रमण अधिक वेगपूर्वक होने लगा था।

९ अगस्त, १९४५ को सोवियत संघ ने जापान के विरुद्ध युद्ध की घोषणा की और जापानी सेना पर आक्रमण करके, उत्तर-पूर्वी चीन को मुक्त किया। इसी समय जनमुक्ति सेना ने छोटे-बड़े अनेक नगरों पर पुनः अधिकार कर लिया था। परन्तु जापान के आत्मसमर्पण के पश्चात युद्ध के प्रतिरोध की लड़ाई समाप्त होजाने पर भी, अमरीका की साम्राज्यवादी नीति के कारण, देश के बड़े-बड़े नगरों और यातायात पर च्यांग की सेना का ही अधिकार था। अमरीका ने च्यांग की सहायता के लिये पूर्वी तथा उत्तरी चीन में एयर क्राफ्ट, टैंक आदि युद्ध की सामग्री और लाखों सैनिक भेजकर, रेलों और कोयले की खानों आदि महत्वपूर्ण स्थानों पर अधिकार कर लिया था।

इस प्रकार, अमरीका की राजनीतिक, आर्थिक और सैनिक सहायता पाकर तथा आधुनिकतम अमरीकी अस्त्र-शस्त्रों से अपनी सेना को लैस करके, जुलाई सन् १९४६ में च्यांग ने फिर से मुक्त क्षेत्रों पर हमला करके गृह-युद्ध छेड़ दिया था। गृह-युद्ध शुरू होते ही, क्वो मिंतांग के नौकरशाह पूंजीपतियों ने अनाज वगैरह पर अपना नियंत्रण कर लिया। च्यांग, सुंग, खुंग और छन् इन 'चार बड़े परिवारों' की निजी सम्पत्ति २० अरब अमरीकी डॉलरों तक पहुंच गई थी! २५ वर्षों के लगातार संघर्ष के पश्चात भी, चीनी जनता सुख की सांस न ले सकी!

जनता में राष्ट्रीय स्वातंत्र्य और राजनीतिक अधिकारों की मांग बढ़ रही थी, जिसके फलस्वरूप २८ अगस्त, सन् १९४६ को स्वयं माओ त्से तुंग ने च्यांग काई शेक से मिलकर देश में शान्ति स्थापित करने के लिये प्रयत्न किया। परन्तु, गर्वोन्मत्त च्यांग तो अमरीकी सेनाओं और अमरीका के डॉलरों के वल पर जनमत को कुचलने पर तुला हुआ था!

जनमुक्ति सेना ने अब अपने क्षेत्रों की रक्षा करने के बजाय, शत्रु-सेना पर आक्रमण करने में ही सारी शक्ति लगा दी, जिससे आठ महीनों के भीतर च्यांग की सेना को भारी क्षति उठानी पड़ी। च्यांग ने अपने युद्ध का तरीका

वदला। जुलाई में जनमुक्ति सेना की शक्ति इतनी वढ़ गई थी कि उसने प्रत्याक्रमण की जगह, शत्रु पर आक्रमण करना आरंभ कर दिया। आधुनिक अमरीकी अस्त्र-शस्त्र बेकार सिद्ध हुए। अनेक क्षेत्रों पर जनमुक्ति सेना का अधिकार होगया।

१० अक्तूवर, १९४७ को जनमुक्ति सेना ने च्यांग काई शेक की सरकार को खतम करके, नये चीन का निर्माण करने के लिये जनता का आवाहन किया। इसी समय सामन्ती शोषण पर आधारित ज़मींदारी प्रथा नष्ट करके, भूमि-वितरण का कार्यक्रम ज़ाहिर किया गया और समस्त मुक्त क्षेत्रों में ज़मींदार वर्ग को समाप्त कर, ज़मींदारों की भूमि किसानों में वितरित कर दी गई।

सन् १९४८ के अन्त तक मुकदन आदि मुख्य-मुख्य नगरों पर जनसेना का अधिकार होगया। सन् १९४९ के आरंभ में टीन्सटिन, पीकिंग, नानकिंग, हैन्को, शी आन्, शंघाई, कैण्टन, चुंकिंग आदि नगर मुक्त होगये। जुलाई सन् १९४६ से जून १९५० तक, इस सेना ने ८० लाख से अधिक क्वो मिंतांग के सैनिकों को मारा तथा ५४ हज़ार से अधिक तोपों-गोलों, ३ लाख २० हज़ार मशीनगनों, १ हज़ार टैंकों और कवचयुक्त गाड़ियों, २० हज़ार मोटर-गाड़ियों तथा अस्त्र-शस्त्र सम्वंधी वहुत सी सामग्री पर अधिकार कर लिया।

१ अक्तूवर, १९४९ को चीन में जनवादी सरकार की घोषणा कर दी गई। जनवादी सरकार के अध्यक्ष माओ त्से तुंग ने अपने वक्तव्य में कहा :

> "हम समझते हैं कि हमारे कार्य के वारे में मानव जाति के इतिहास में इस प्रकार लिखा जायेगा कि मनुष्य जाति का एक-चौथाई भाग खड़ा होगया। चीन राष्ट्र उठ खड़ा हुआ! वह अव 'अपमानित राष्ट्र' वनकर न रहेगा।"

चीन के पिछले १०० वर्षों का इतिहास क्रांतिकारी संघर्षों का इतिहास है। अफ़ीम युद्ध, ताइपिंग विद्रोह, वॉक्सर क्रान्ति, गृह-युद्ध, जापानी युद्ध, कोरिया युद्ध—इन सब संघर्षों में चीनी जनता ने जीवन-मरण का संग्राम लड़कर, अपने लाखों नौनिहालों के रक्त से अपनी मातृभूमि को सींचा है। इन दीर्घकालीन भीषण संघर्षों की अग्नि-परीक्षा में तपकर, चीनी जनता दृढ़ होगई है। उसने अनेक मूल्यवान अनुभव प्राप्त किये हैं। इन्हीं अनुभवों के आधार पर, उसने अपनी वर्ग चेतना और सामूहिक भावना में वृद्धि कर, अपने देश की

परिस्थितियों के अनुकूल एक वैज्ञानिक और क्रान्तिकारी विचारधारा को रूप दिया है, जिससे उसका संगठन और अनुशासन फ़ौलादी बन गया है। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का विकास चीनी जनता के साम्राज्यवाद और सामन्तवाद-विरोधी संघर्षों में ही हुआ है। इस पार्टी का इतिहास जनता के संघर्षों का इतिहास है।

चीनी कम्युनिस्ट पार्टी मुख्यतया किसानों की पार्टी होने पर भी, मज़दूर वर्ग को ही चीनी क्रान्ति की बुनियादी शक्ति स्वीकार किया गया है। ल्यू शाओ ची ने इसका स्पष्टीकरण **चीनी कम्युनिस्ट पार्टी** में किया है:

> "हमारी पार्टी की स्थापना ऐसे युग में हुई थी, जब संसार मज़दूर क्रान्ति के मार्ग पर बढ़ रहा था। यह पार्टी सन् १९२७ के पूर्व की चीनी क्रान्ति और मज़दूर आन्दोलन के आधार पर पनपती आई है। इस पार्टी ने अन्तर्राष्ट्रीय मार्क्सवादी–लेनिनवादी आन्दोलनों की सर्वोत्तम परम्पराओं को अपनाया है और चीनी मज़दूर वर्ग के आन्दोलन से कभी अपना सम्बंध विच्छेद नहीं होने दिया।...हमारी पार्टी के अधिकांश सदस्य किसान और मध्यमवर्गीय बुद्धिजीवियों में से हैं। मज़दूर वर्ग में बहुत थोड़े ही सदस्य हैं। फिर भी, पार्टी में सर्वहारा और अर्द्ध-सर्वहारा वर्गों के लोगों को मिलाकर इनका बहुमत होजाता है।...हमारी पार्टी में मज़दूर वर्ग का बहुमत नहीं है। बरसों तक हमारी पार्टी के मुख्य हिस्से देहाती इलाक़ों में ही रहे हैं। इसका एक कारण यह है कि चीन एक अर्द्ध-सामन्ती और औपनिवेशिक देश है। इस देश में किसान जनता मौजूदा क्रान्ति की मुख्य शक्ति है। शहरों में पिसनेवाली मज़दूर श्रेणी अभी बहुत समय तक स्वतंत्रता से क्रान्ति के कार्यक्रम में भाग नहीं ले सकती। मज़दूर वर्ग देहातों में अपने हिरावल को भेजकर, अपनी सहायक विशाल जनता का संगठन करता रहा है, ताकि इस सहायक श्रेणी के साथ मिलकर वह समय आने पर शहरों को भी स्वतंत्र कर सके।"

चीनी क्रान्ति के विषय में दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि यह क्रान्ति अमरीका और योरुप आदि पूंजीवादी देशों की पूंजीवादी प्रजातांत्रिक क्रान्तियों से भिन्न है। मज़दूर वर्ग की समाजवादी क्रान्ति भी यह नहीं है, बल्कि यह

एक नये ढंग की जनवादी क्रान्ति है। इस क्रान्ति की चालक शक्तियां मुख्यतया मज़दूर वर्ग, किसान वर्ग और निम्न मध्यम वर्ग हैं, परंतु साथ ही, दूसरे वर्ग भी इसमें सहयोग देते हैं। नई जनवादी व्यवस्था में, पूंजीवादी डिक्टेटरशिप क़ायम करने के बजाय समस्त क्रान्तिकारी वर्गों के संयुक्त मोर्चे की डिक्टेटरशिप क़ायम की जाती है। दूसरे शब्दों में, इस व्यवस्था में जनता के लिये जनवाद और प्रतिक्रियावादियों पर डिक्टेटरशिप का विधान है। इस क्रान्ति के पूर्ण होने पर, जब चीन की अर्थ-व्यवस्था नई लोकशाही में एक खास मंज़िल तक पहुँच चुकेगी, तब मज़दूर वर्ग के नेतृत्व में समाजवादी और कम्युनिस्ट समाज की स्थापना होगी।

चीन में जनता की राजनीतिक सलाह-मशविरा देनेवाली मौजूदा परिषद कोई राज्य-संस्था या कम्युनिस्ट पार्टी की संस्था नहीं है, बल्कि वह जनवादी संयुक्त मोरचे की संस्था है। उसमें अल्पसंख्यक जातियों, जनवादी राजनीतिक पार्टियों, जन-संस्थाओं तथा समुद्र पार रहनेवाले चीनियों के प्रतिनिधियों का बहुमत है। इस वर्ष (सन् १९५३) में चीन में जो आम चुनाव होनेवाले हैं, उनके द्वारा शासन का कार्यभार चलानेवाली स्थानीय जन समितियों के आधार पर 'समस्त चीन जन समिति' का चुनाव होगा और इस समिति द्वारा जो नई सरकार बनेगी, वह भी संयुक्त मोरचे की सरकार होगी; जिसमें देश की विभिन्न राजनीतिक पार्टियों के चुने हुए प्रतिनिधि रहेंगे।

चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्यों की संख्या इस समय लगभग ५८ लाख है। पार्टी को अवसरवादियों से दूर रखने के लिये, सन् १९४९ से पार्टी की सदस्यता को सीमित कर दिया गया है। पार्टी के सदस्य को व्यक्तिगत ऐश-आराम की परवा न करके, सर्वसाधारण के समान जीवन व्यतीत करने और क्रान्तिजन्य कष्टों को झेलने के लिये सर्व प्रथम तथा क्रान्ति के फलों का आस्वादन करने के लिये सबसे अन्त में रहने का आदेश है। इस सम्बंध में ल्यू शाओ ची ने **हम अच्छे कम्युनिस्ट कैसे बनें** में लिखा है :

> "चाहे पार्टी के अन्दर हो या जनता के बीच, मुश्किलें झेलने के समय वह (कम्युनिस्ट पार्टी का सदस्य) सबसे आगे होगा और फल भोगने में सबसे पीछे। वह कभी इस बात की परवाह नहीं करता कि उसकी हालत दूसरों से अच्छी है या बुरी, लेकिन इस बात की जरूर परवाह करता है कि क्रान्तिकारी कार्य को उसने दूसरों से ज़्यादा किया

या नहीं और वह ज़्यादा सख़्ती से लड़ा है या नहीं। उसमें आत्म-सम्मान और निजी आदर की उच्चतम भावना होगी। पार्टी और क्रान्ति के हितों के लिये, वह अधिक से अधिक उदार और अधिक से अधिक सहनशील हो सकता है और हमेशा समझौता करने के लिये तैयार हो सकता है। जरूरत पड़ने पर बिना किसी प्रकार दुखी हुए या बिना किसी के ख़िलाफ़ शिक़ायत करते हुए, वह हर तरह के अपमान और अन्याय को भी सहन कर लेगा।..."

पार्टी के सदस्यों को अपनी आलोचना द्वारा आत्मसुधार करते रहने और नैतिक चरित्र को दृढ़ बनाने तथा मार्क्सवाद और लेनिनवाद के सिद्धान्तों को व्यवहार में लाना अत्यन्त आवश्यक है। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की सदस्यता केवल पार्टी तक ही सीमित नहीं रहती, बल्कि पार्टी के सदस्य को एक श्रेष्ठ उत्पादन-कर्त्ता भी होना जरूरी है; वह केवल शस्त्र लेकर शत्रु से युद्ध ही नहीं करता वल्कि खेतों में हल भी चलाता है, सिंचाई करता है, फ़सल बोता है, कुंए खोदता है, खेतों की रक्षा के लिये टिड्डी-दल का नाश करता है और कम राशन पर रहकर तथा साधारण वस्त्र पहिनकर गुज़ारा करता है। तात्पर्य यह है कि वह जनता के बड़े से बड़े अंश के अधिक से अधिक हितों को पूरा करने में अपनी पूरी ताक़त लगा देता है।

चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के लाखों सदस्यों ने पिछले ३२ वर्षों के संघर्षों में अपने सामाजिक जीवन और कारोबार को तिलांजलि देकर और अपनी मान-प्रतिष्ठा की तनिक भी परवाह न कर, जनता की ख़ातिर अपने-आपको मिटा दिया है, जिसका मधुर फल है—चीन की कम्युनिस्ट पार्टी के प्रति चीनी जनता का अगाध प्रेम और उसका हार्दिक समर्थन। इस कथन में अत्युक्ति नहीं कि यदि चीन में सुसंगठित, अनुशासनबद्ध कम्युनिस्ट पार्टी न होती और वह सही नीति अपनाकर समस्त जनता का एक राष्ट्रव्यापी संयुक्त मोरचे में संगठन न करती, तो संभवतः चीनी जनता को आज अपने वर्तमान जनतांत्रिक नवनिर्माण का सुअवसर प्राप्त ही न होता!

जनता की सेना

जनमुक्ति सेना (च्ये फ़ांग च्युन्) के सिपाही अपने संगठन और कठोर अनुशासन के लिये सुप्रसिद्ध हैं। कमाण्डर, ब्रिगेडियर, सैनिक आदि सब विना किसी पद आदि के भेद-भाव के एक ही तरह की ख़ाकी वरदी में रहते हैं। उनमें छोटे-बड़े की कोई श्रेणी दिखाई नहीं देती। जैसे अफ़सर आलोचना आदि के द्वारा अपने सैनिकों में अनुशासन की भावना पैदा करते हैं, वैसे ही सैनिकों को भी अपने अफ़सर की आलोचना करने का अधिकार प्राप्त है।

जन सेना के सिपाहियों को निम्नलिखित नियमों के पालन करने का आदेश है—

१. हर हालत में आज्ञा का पालन करो।

२. जनता का सुई-धागा तक स्वीकार मत करो।

नये क्षेत्र क़ायम करने के लिये १६ अक्तूबर, १९३४ को क्यांग शी से लगाकर उत्तर शेन्सी तक आठ हज़ार मील लम्बा महा अभियान किया। इस महा अभियान में हज़ारों किसानों, स्त्री-पुरुषों और बाल-वृद्धों ने स्वेच्छापूर्वक भाग लिया था। कारखानों की मशीनें तथा अन्य अनेक वस्तुओं को खच्चरों और गधों पर लाद दिया गया था। हिमाच्छादित पर्वत-श्रृंखलाओं, विस्तृत नदियों और निर्जन मैदानों को लांघती और पार करती हुई अपार जनराशि आगे बढ़ती रही। सैनिक दोपहर के समय विश्राम करते और शत्रु के आक्रमण से बचने के लिये रात को बांसों की मशालों से दुर्गम मार्गों को खोजते-ढूंढते हुए चलते थे। पहाड़ों के संकरे और टेढ़े-मेढ़े रास्तों पर चलते समय, आगे के सैनिकों को पीछे आनेवाले सैनिकों के लिये मोड़ पर खड़ा रहना पड़ता और इस बीच थकान से चूर हुए बहुत से सैनिक खड़े-खड़े ही ऊंघने लगते थे। वर्षा और हड्डियों को भेदनेवाली ठंडी तेज़ हवा के कारण भी सैनिकों को बहुत कष्ट होता था। अपनी थकान दूर करने के लिये, वे कभी कहानी सुनाते, कभी संगीत की तान छेड़ते या जोशीले नारे लगाते थे। परन्तु शत्रु-पंक्ति के पास आते ही, मशाल गुल कर दी जाती और सब लोग निःशब्द होकर ठोकरें खाते, गिरते-पड़ते चुपचाप आगे बढ़ते थे। शत्रु की बमबारी से अपनी रक्षा करने के लिये, अनेक बार सैनिकों को पहाड़ों की गुफ़ाओं में शरण लेनी पड़ती और भोजन आदि के अभाव में कई-कई दिनों तक निराहार बैठे रहना पड़ता था।

क्यांग शी का लाव षान् (प्राचीन पर्वत) पर्वत बहुत ऊंचा था, किन्तु लाल सेना जब अपने अदम्य और अटूट साहस से इसको लांघकर उस पार पहुंची, तो शत्रु की सेना उसका पीछा कर रही थी। क्यांग शी, क्वांग तुंग, क्वांग शी और हनान को लांघकर, जब लाल सेना ने क्वै चौ प्रान्त में क़दम रखा तो उसके सैनिकों की संख्या एक-तिहाई रह गई थी। छ नावों की सहायता से यांगत्से नदी को पार करने में इसे पूरे नौ दिन लग गये थे। 'सुवर्ण बालुका नदी' के पास ही, यि जाति का पहाड़ी मुल्क बसा हुआ है। सुवर्ण-बालुका और ता तू नदी के बीच २०० मील का फ़ासला है। इस प्रदेश में इधर-उधर ऊँची और दुर्गम पर्वत मालाओं में यि जाति निवास करती है। बमबारी का डर होने के कारण, यहां लाल सेना को रात्रि के समय में ही पहाड़ों के संकरे रास्तों से यात्रा करनी पड़ती और इस प्रकार अत्यन्त

कठिनाई से यह सेना दो दिनों में इस संकटाकीर्ण मार्ग को पार करने में सफल होसकी थी।

ता तू नदी को पार करना भी ख़तरे से खाली नहीं था। नदी का प्रवाह इतना तेज़ था कि नाव से उस पार पहुँचने के लिये २६ मल्लाहों की ज़रूरत पड़ती थी। नदी के उस पार शत्रु सेना ने पड़ाव डाल रखा था, परन्तु नदी को पार करना हर हालत में लाज़िमी था। कुछ सैनिक हथगोलों से लैस हो, एक नाव में बैठकर रवाना हुए और बाक़ी सेना ने पुल पार करने के लिये दुर्गम पहाड़ पर चढ़ना आरंभ किया। लेकिन, पहाड़ पर पहुंचने पर पता लगा कि पुल के तख़्तों को शत्रु ने पहले ही निकाल लिया था और केवल लौह-श्रृंखलायें बाक़ी बची थीं। दूसरी ओर से शत्रु की मशीनगनें आग उगलने लगीं थीं, लेकिन फिर भी कुछ सैनिकों ने अपनी जान हथेली पर रखकर पुल पार करने का निश्चय कर ही लिया। अपने अनेक वीर लड़ाकों को खोकर आख़िर लाल सेना नदी के उस पार पहुंच ही गई थी।

ता तू नदी के उत्तर में १६,००० फीट ऊंचे महान् हिम पर्वत को लांघते समय, मौसिम के जल्दी-जल्दी बदलने और पर्वत के शिखर पर हवा पतली होने से सैनिकों को घोर यातनाओं का सामना करना पड़ा और जंगल के बांसों को काटकर मार्ग बनाना पड़ा था। आगे चलकर तिब्बत का सीमाप्रान्त लांघते समय, लाल सेना को, ख़ासकर भोजन के बिना, बड़ा कष्ट हुआ था। जंगलों और निर्जन प्रदेशों में कई-कई दिनों तक मनुष्य के दर्शन नहीं होते थे। लाल सेना को भूखे पेट रहकर अथवा चुकन्दर, शलजम, गेहूं की हरी बालें या कच्चा साग खाकर ही निर्वाह करना पड़ता था। दलदलों और गड्ढोंवाले घास के प्रदेश को पार करना और भी कठिन था। इन गड्ढों में अनेक सैनिक और घोड़े डूबकर मर गये! सोने के लिये कहीं कोई स्थान नहीं था और भोजन पकाने के लिये गीली घास जलाना असंभव था। दुर्भाग्य से, बोझ के कारण इस समय महा अभियान सम्बंधी अनेक दस्तावेज़ों को नष्ट कर देना पड़ा था।

इस प्रकार लगभग १ वर्ष तक प्रयाण करने के पश्चात, २० अक्तूबर, १९३५ को लाल सेना ने ११ प्रान्तों से होकर, क्वो मिंतांग की ४११ सेना की टुकड़ियों को ध्वस्त करके, जब शेन्सी के उत्तर में प्रवेश किया तो कुल २० हज़ार सैनिक बाक़ी बचे थे! सेना प्रति दिन औसतन २४ मील के हिसाब से

यात्रा करती थी और सब मिला कर इसने १९ बड़ी-बड़ी पर्वत श्रृंखलायें और २४ नदियां पार की थीं।

लाल सेना के अधिनायक, कवि-हृदय माओ त्से तुंग ने इस क्रान्तिकारी अभियान में भाग लेनेवाले सैनिकों के प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए लिखा है :

"लाल सेना ने महाप्रयाण की परीक्षाओं में बड़े साहस से काम लिया है,

"इसने दस हज़ार नदियां और एक हज़ार पहाड़ियों का अतिक्रमण किया है,

"पांच पर्वत-श्रृंखलाओं के शिखर क्षुद्र लहरोंवाली नदियों के समान दिखाई दिये !

"स्थूलकाय हिमाच्छादित वू मौंग पर्वत पैर के नीचे एक ढेले के समान प्रतीत हुआ !

"सुवर्ण-बालुका नदी अपनी प्रिय चट्टानों को गोद में उठाये हुई थी,

"ता तू पुल की लौहमय ठंडी-ठंडी श्रृंखलायें...... ।

"किन्तु हमें अधिक आनन्द हुआ,

"जब हमने १ हज़ार लि (३ लि=१ मील) ऊंचे,

"हिमाच्छादित म्येन् षान् पर्वत को पार किया और सैनिकों के चेहरे मुस्कराहट से खिल उठे !"

जनवादी सरकार की स्थापना होने के बाद भी, जनमुक्ति सेना का कान् समाप्त नहीं हुआ था । अप्रैल-मई सन् १९५० को समुद्र पार करके सेना ने हाय् नान् और चाव् षान् द्वीपों को तथा मई सन् १९५१ में दीर्घकाय पर्वत श्रृंखलाओं को लांघकर तिब्बत को मुक्त किया था । तिब्बत की मुक्ति के समय, सैनिकों को बर्फ़ीले पहाड़, तेज़ बहनेवाली नदियां, दलदलों और रेगिस्तानों को पार करने के लिये सड़कों और पुलों आदि का निर्माण करना पड़ता था। कितनी ही बार उन्हें घास-पात खाकर भी रहना पड़ता, एस्किमो लोगों की भांति हिम के घर बनाकर भयंकर शीत में रहना और पहाड़ों में मार्ग बनाने के लिये हिमराशि को आग से पिघलाकर अपनी तीक्ष्ण कुदालियों से हटाना पड़ता था। साथ ही, तिब्बत के रीति-रिवाज और भाषा आदि की शिक्षा प्राप्त

करके वहां के कृषकों, श्रमिकों और सैनिकों में काम करना भी आवश्यक था। इन सैनिकों को जनता के धार्मिक विश्वासों और रीति-रिवाजों में किसी प्रकार के भी हस्तक्षेप करने की मनाही थी। आज जो शिन् च्यांग और ल्हासा आदि स्थानों में नहरें, फॉर्म, बाग़बग़ीचे, अस्पताल और स्कूल आदि दिखाई देते हैं, वह जनमुक्ति सेना के अथक परिश्रम का ही परिणाम है।

जनमुक्ति सेना पिछले २५ वर्षों से ४७ करोड़ चीनी जनता को साम्राज्यवादी शक्तियों के शोषण से मुक्त करने के लिये शत्रु से घोर युद्ध करती आई है। अनेक बार इसे हार भी खानी पड़ी, किन्तु उसनें हिम्मत नहीं हारी और अपनी कमज़ोरियों के दूर करके, फिर से मैदान में खड़ी होगई। अपने राष्ट्र की मुक्ति के लिये, इसने बरमा के सीमाप्रान्त से मंचूरिया तक और पीत समुद्र से तिब्बत तक हज़ारों मील की दुर्गम यात्रायें करके, शत्रु के दांत खट्टे किये हैं। अभी भी, कोरिया के संग्राम में अपने राष्ट्र की रक्षा के लिये चीनी जनता के स्वयंसेवक प्राणों की बाज़ी लगाकर लड़ रहे हैं।

जनमुक्ति सेना जनता की सेना है। इसीलिये, इस सेना का युद्ध जनता का युद्ध रहा है। जनता की स्वाधीनता और उसकी मुक्ति ही उसका एकमात्र उद्देश्य रहा है, किसी को पददलित या गुलाम बनाना नहीं। अपने उच्च नैतिक बल और चरित्र के कारण, जनमुक्ति सेना अजेय मानी जाती है और विध्वंसकारी आधुनिक अस्त्र-शस्त्रों तथा विषाक्त बमगोलों से लैस अमरीकी सैनिकों से भी लोहा लेने में समर्थ है।

इस सेना के सैनिक केवल देश के रक्षार्थ ही युद्ध नहीं करते, बल्कि राष्ट्र-निर्माण के कार्यों में हाथ भी बंटाते हैं। क्वो मिंतांग के सैनिक जब गाँवों को लूटकर, खेतों को जलाकर, सड़कों, पुलों तथा रेल-मार्गों को नष्ट-भ्रष्ट कर और देश को उजाड़कर भाग गये थे, उस समय जनमुक्ति सेना ने गांवों तथा शहरों की सफ़ाई, कृषि का उत्पादन, कारख़ानों में काम करके, सड़कों, पुलों तथा रेल-मार्गों को दुरुस्त कर और नदियों के बांध-निर्माण, कोआपरेटिव, शिक्षण तथा सांस्कृतिक संस्थाओं में सक्रिय सहयोग देकर और समाज में जनतांत्रिक भावना फैलाकर जनता की सेवा की है।

शान्ति-परिषद

१ अक्तूबर, १९५२ को प्रातःकाल से ही अपार जन समूह राष्ट्रीय दिवस की तृतीय वर्षगांठ मनाने के लिये, झण्डों और ध्वजाओं से सज्जित थ्येन आन् मन् मैदान में एकत्रित होने लगा था। सामने की ओर अध्यक्ष माओ त्से तुंग का पांच तारों की ध्वजा से सुशोभित चित्र टंगा था। एशियाई और प्रशान्त के देशों की शान्ति-परिषद में भाग लेने के लिये आये हुये, देश-विदेशों के प्रतिनिधियों और विशेष रूप से आमंत्रित माननीय अतिथियों से गैलरियाँ भरी हुई थीं। दस बजते ही माओ, चू तेह, सुंग चिंग लिंग, चाउ एन लाई, कुओ मो जो आदि नेता मंच पर उपस्थित हुए। तालियों की गड़गड़ाहट से मैदान गूंज उठा।

तोपों की सलामी के पश्चात, सर्वप्रथम सेनापति चू तेह ने फ़ौजी परेड का निरीक्षण किया और प्रयाण-संगीत के साथ जल, थल और वायु-सेना के सैनिक मार्च करने लगे। अश्वारोही सैनिक, वायुयान से छतरी द्वारा नीचे उतरने वाले सैनिक, वायुयान-चालक, महिला सैनिक, जन सुरक्षा पलटन के सैनिक—सभी तारों और १ अगस्त (जनमुक्ति सेना का जन्म-दिवस) के चिह्नों से सज्जित लाल झण्डा लिये जारहे थे। टैंकों की गड़गड़ाहट से मैदान कम्पित होरहा था। मोटर गाड़ियाँ भीमकाय तोपों को लिये जारही थीं। तारों की आकृति के समान वायुयानों और जेट यानों की पंक्तियां आकाश-मण्डल में उड़ रही थीं। अध्यक्ष माओ के समक्ष पहुंचते ही, सैनिक गण अपने झण्डे झुका देते और बड़े अदब के साथ सलामी देते। अपनी मातृभूमि की रक्षा करने पर कटिबद्ध, जनमुक्ति सेना की शक्ति का यह शानदार प्रदर्शन था। सैनिकों के पीछे मज़दूर, किसान, विद्यार्थी, अध्यापक, नवयुवक, अग्रदूत, बालक-बालिकायें, महिलायें, दफ़्तरों के कर्मचारी, व्यापारी, कलाकार, साहित्यकार, खिलाड़ी और धर्मगुरु आदि राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय नारे लगाते हुए मार्च कर रहे थे। ९० हज़ार श्रमिक उत्पादन के नक़्शों तथा आंकड़ों आदि के साथ बड़े गर्व से मार्च कर रहे थे। कारख़ानों में तैयार किये हुए माल के नमूने साथ में लिये थे। इनमें यांगत्से नदी की बाढ़ रोकने के लिये वृहत्काय बांध और ६ हज़ार श्रमिकों द्वारा केवल १७ सप्ताहों में बनाये हुए शान्ति होटल में निर्मित शिल्पकारी के नमूने भी मौजूद थे। ज़मींदारों के उत्पीड़न से मुक्त कृषक भी परेड में चल रहे थे। नवयुवक अग्रदूतों ने अपने नेता के समक्ष आते ही, शान्ति कपोतों और रंग-बिरंगे गुब्बारों को उड़ाना शुरू किया। कपोतों और गुब्बारों से आकाश छा गया। सर्वत्र शान्ति के नारों द्वारा शान्ति परिषद के अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिनिधियों का स्वागत किया जारहा था और 'माव् चू शी वान् स्वै' की ध्वनि सुनाई पड़ रही थी। सदियों बाद मुक्त और स्वतंत्र हुई, चीन की जनता आनन्दोल्लास से अपने में खोई हुई सी थी।

रात्रि के समय इस मैदान का दृश्य और भी अनुपम था। विद्युत-दीपों की पंक्तियों से मैदान जगमगा उठा था। नर-नारी आत्म-विस्मृत हो, नृत्य और गान में मस्त थे। शान्ति-परिषद के प्रतिनिधि भारतीय, कोरियायी, जापानी और अमरीकी अपने नृत्यों का प्रदर्शन कर रहे थे। वृद्ध-बालक और

स्त्री-पुरुष का कोई भेद नहीं रह गया था। चीनी जनता परिषद् के प्रतिनिधियों को कंधों पर उठाकर हर्ष से उन्मत्त हो उठी थी।

२ अक्तूबर को चीनी श्रमिकों द्वारा केवल १५ दिनों में निर्मित विशाल भवन में शान्ति-परिषद की बैठक आरंभ हुई। परिषद्-भवन चीनी चित्रों से सुसज्जित था। इसमें विविध राष्ट्रों के रंग-विरंगे झण्डे फहरा रहे थे और चीनी चित्रकारों द्वारा चित्रित वृहत् शान्ति-कपोत सजाये गये थे। वक्ताओं के भाषणों का एक साथ आठ भाषाओं में अनुवाद होता जाता था। ४६ देशों के ४२९ प्रतिनिधि, दर्शक तथा विशेष रूप से आमंत्रित अतिथियों ने परिषद् में भाग लिया था। सबसे बड़ा भारतीय प्रतिनिधियों का मण्डल था, जिसमें स्तालिन शान्ति-पुरस्कार से सम्मानित डा. सैफुद्दीन किचलू (नेता), डा. ज्ञानचन्द (उपनेता), रमेशचन्द्र (मंत्री), चतुर्नारायण मालवीय, ए. के. गोपालन, रवि शंकर महाराज, गोविन्द सहाय, डा. अब्दुल अलीम, मनोज बोस आदि थे। तीन-चौथाई दुनिया के विभिन्न भाषा-भाषी, विभिन्न विचार-धाराओं के अनुयायी श्रमजीवी-नेता, श्रमजीवी, व्यापारी, उद्योगपति, किसान, जमींदार, विज्ञानवेत्ता, धर्मगुरु, अध्यापक, डाक्टर, इंजीनियर, लेखक, कलाकार, संगीतज्ञ, वकील, पत्रकार आदि ने नये चीन की राजधानी को अन्तर्राष्ट्रीय नगर में परिवर्तित करके, शान्ति-रक्षा के लिये अपनी सुदृढ़ इच्छा व्यक्त की थी।

एशियाई और प्रशान्त के देशों की यह परिषद केवल कम्युनिस्टों का प्रचार मात्र नहीं था, जिसमें कि 'मोलोटोव की अध्यक्षता में सोवियत संघ और चीन द्वारा आक्रमण की संयुक्त योजना बनाई जारही थी' (हाँगकाँग स्टैण्डर्ड, २७ सितम्बर, १९५२ का समाचार), बल्कि यह परिषद कोरिया और सुदूरपूर्व में होने वाले भीषण युद्धों की ज्वाला से संत्रस्त जनता की आवाज़ थी, जो इन संहारक युद्धों को रोकने के उपायों की खोज में उठी थी। यह सम्मेलन विभिन्न देशों की सरकारों का नहीं, बल्कि जनता के प्रतिनिधियों का था, जो शान्ति की रक्षा के लिये संयुक्त रूप से दृढ़-प्रतिज्ञ थे।

द्वितीय युद्ध में जापान के फ़ौजी सैनिकों ने पूर्वीय देशों पर जो जुल्म ढाये हैं और जापान के हिरोशिमा तथा नागासाकी नगरों पर केवल दो अणु-बम गिराने से जापानी जनता को जो वर्णनातीत यातनायें भोगनी पड़ी हैं, उन्हें मानव जाति कभी भी न भूल सकेगी। उक्त घटनाओं को अभी बहुत दिन

नहीं बीते और फिर से युद्ध का वातावरण तैयार किया जाने लगा है। कुछ स्थानों पर तो भीषण युद्ध हो भी रहे हैं, यद्यपि उन्हें युद्ध का नाम नहीं दिया जाता। अमरीका जापान को उसकी सैन्यशक्ति बढ़ाने में लगातार मदद दे रहा है। ८ सितम्बर, १९५१ को भारत, सोवियत संघ, चीन, मंगोलिया और बरमा के चीखते-चिल्लाते रहने पर भी, चीन से बिना पूछे-गिने, सान फ्रांसिस्को में अमरीका और जापान के बीच 'शान्ति-संधि' और 'सुरक्षा समझौते' पर हस्ताक्षर होगये और अमरीका जापान पर हावी हो बैठा। २८ फरवरी, १९५२ को अमरीका ने जापान की योशीदा सरकार के साथ 'शासन सम्बंधी संधि' करके, इस नींव को और दृढ़ बना दिया है। फिर, योशीदा सरकार ने च्यांग काई शेक की फ़ारमोसा-स्थित सरकार के साथ शान्ति-संधि करके चीन की ४७ करोड़ जनता की अवहेलना की है। जापान के कारखाने धड़ाधड़ अस्त्र-शस्त्र, बमगोले, कीटाणु-बम और विषाक्त गैसें बनाने में लगे हुए हैं, जिससे चीन पर जापानी आक्रमण का खतरा बढ़ता जारहा है।

कहकर उन्हें मौत के घाट उतारा जारहा है और उनके कटे हुए सिर लाने वालों को बड़े-बड़े इनाम देने की घोषणायें की जारही हैं। जनरल टैम्पलर की सेनायें विषैली गैसों का प्रयोग करके, फ़सलें नष्ट कर रही हैं और समूचे गांवों को कन्सन्ट्रेशन कैम्प बनाकर, जनता को तबाह करने पर तुली हुई हैं। फ्रेंच सरकार भी वीतनाम की जनता का दमन करने की चेष्टा कर रही है और पश्चिमी जर्मनी के युवकों को अपनी सेना में भरती करके उन्हें युद्ध के मोर्चों पर भेज रही है। फिलिपाइन्स, श्याम, ईरान, टर्की, अफ्रीका आदि देशों की जनता भी पश्चिम के साम्राज्यवादी देशों की स्वार्थमय नीति से संत्रस्त होउठी है और सर्वत्र इस नीति का विरोध किया जारहा है।

इन्हीं अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियों को मद्देनज़र रखते हुए, पीकिंग में एशियाई और प्रशान्त के देशों की शान्ति-परिषद का उद्घाटन हुआ था।

परिषद का सबसे महत्वपूर्ण प्रस्ताव कोरिया के सम्बंध में था। कोरियायी प्रतिनिधि-मंडल के नेता हान सुल या ने कोरिया-युद्ध की भीषणता का दर्दनाक वर्णन करते हुए, बताया कि यदि युद्ध की शीघ्र ही समाप्ति नहीं होती तो एशियाई तथा प्रशांत के देशों का कोई भी देश युद्ध की अग्नि से सुरक्षित नहीं रह सकता। एक प्रस्ताव में कहा गया था कि कीटाणु-युद्ध, मानव जाति के संहारक बम गोलों और नैपाम-बमों के युद्ध को बन्द करके जिनेवा संधि के अनुसार दोनों पक्षों के युद्ध-बन्दियों को स्वदेश भेज देने और कोरिया से समस्त विदेशी सेनाओं—चीनी स्वयंसेवकों को भी—हटा लेने पर, कोरिया की जनता अन्दरूनी मामलों को स्वयं सुलझा सकती है और उसी समय कोरिया में शान्ति भी स्थापित हो सकती है।

दूसरे प्रस्ताव में, जापान के पुनः शस्त्रीकरण को एशिया की सुरक्षा के लिये घातक बताते हुए अमरीका द्वारा जापान को अपनी फ़ौजों का अड्डा बनाये जाने का विरोध किया गया था। एशियाई और प्रशान्त के देशों की शान्ति के रक्षार्थ, अन्तर्राष्ट्रीय समझौते के अनुसार चीन के साथ शान्ति-संधि करने तथा जापानी जनता को स्वाधीन और स्वतंत्र जीवन व्यतीत करने देने की आवश्यकता का समर्थन किया गया था।

राष्ट्रीय स्वाधीनता के सम्बंध में कहा गया था कि कोरिया, वीतनाम और ...या में तुरन्त युद्ध बन्द करने की घोषणा हो, कोई भी देश अपनी सेनाओं

या सैनिक अड्डों के लिये दूसरे देश की भूमि का उपयोग न करे और दूसरे देश के अधिकारों में हस्तक्षेप न करे, जिससे समस्त राष्ट्रों को अपनी जनता के जीवन-स्तर को उन्नत बनाने के लिये राष्ट्र की साधन-सम्पत्ति को उपयोग में लाने और उसे विकसित करने का अवसर प्राप्त हो।

अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक सम्बंधों के विकास के बारे में बताया गया था कि शान्तिपूर्ण और उचित आर्थिक सम्बंधों के आधार पर ही राष्ट्रों के पारस्परिक आर्थिक सम्बंध क़ायम किये जा सकते हैं और उसी समय अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार बढ़ सकता है, लेकिन यह तभी संभव है जबकि अमरीका चीन के विरुद्ध अपनी नाकेबंदी और नौकावरोध की नीति का परित्याग करे तथा एशियाई और प्रशान्त के देशों के कच्चे माल और उसकी क़ीमतों पर से अपना नियंत्रण हटा ले। प्रस्ताव में कहा गया था कि अपनी राजनीतिक और आर्थिक विचार-प्रणाली में मतभेद होते हुए भी, एशियाई और प्रशान्त के देशों की सरकारों और जनता को शान्तिपूर्ण अर्थ-व्यवस्था स्थापित करने के लिये संयुक्त प्रयत्न करना चाहिये, जिससे घनिष्ट अन्तर्राष्ट्रीय सम्बंध क़ायम होसकें।

सांस्कृतिक आदान-प्रदान की चर्चा करते हुए, भारतीय प्रतिनिधि-मण्डल के नेता डा. किचलू ने बताया कि एशिया और प्रशान्त के देशों में युद्ध से संस्कृति का भीषण संहार किया जारहा है, युद्ध-प्रचार और जातीय घृणा की वृद्धि होरही है। अन्तर्राष्ट्रीय सांस्कृतिक आदान-प्रदान बढ़ाने के लिये विभिन्न देशों के सांस्कृतिक प्रतिनिधि-मण्डलों के आदान-प्रदान, विश्वविद्यालयों में विदेशी भाषाओं के अध्ययन-अध्यापन, विदेशी पुस्तकों के अनुवाद और अन्तर्राष्ट्रीय महान् पुरुषों की वर्षगांठें मनाने आदि की आवश्यकता पर जोर दिया गया था।

अमरीका, सोवियत संघ, जनवादी चीन, ब्रिटेन और फ्रांस—इन पांच शक्तिशाली राष्ट्रों के बीच शान्ति के प्रश्न पर चर्चा करते हुए इस बात पर दृढ़ विश्वास प्रकट किया गया था कि उक्त पांचों राष्ट्रों के बीच शान्ति-समझौता होने पर ही, सारी दुनिया के लिये एक नया मार्ग खुल सकेगा और उसी समय दुनिया की वर्तमान संकटापन्न और भयावह स्थिति दूर हो सकेगी। ७० देशों की ६० करोड़ से अधिक जनता द्वारा उक्त शान्ति-मसविदे पर हस्ताक्षर किया जाना, इस बात को प्रमाणित करता है कि विश्व की जनता शान्ति की इच्छुक है और युद्ध नहीं चाहती।

शान्ति-परिषद की बैठक ११ दिनों तक चली थी। इस बैठक में बहसों का तरीका अत्यन्त जनतांत्रिक रहा। दूसरी संस्थाओं में प्रस्ताव बहुमत से पास होते हैं, परन्तु इस शान्ति-परिषद में जब तक एक भी सदस्य ने किसी भी प्रकार का विरोध व्यक्त किया, तब तक उस विषय पर वाद-विवाद होता रहा। आस्ट्रेलिया के प्रतिनिधि द्वारा किसी बात का विरोध किये जाने पर, इसी पद्धति से विचारों का आदान-प्रदान किया गया और अन्त में प्रस्ताव सर्वसम्मति से पास हुआ था। इस सम्बंध में शान्ति-परिषद के भारतीय सदस्य गुजरात के प्रसिद्ध कार्यकर्त्ता, गांधीवादी महाराज रविशंकर व्यास ने रेडियो पर जो वक्तव्य दिया है वह उल्लेखनीय है: "शान्ति सम्बंधी विचारणीय विषयों पर समस्त प्रतिनिधियों तथा दर्शकों में तब तक वाद-विवाद होता रहा, जब तक कि सर्वानुमति से कोई निर्णय न हुआ। यह बात मेरी दृष्टि में अत्यंत जनतांत्रिक है। परिषद में प्रत्येक वक्ता के कथन को सुना जाता था और जो बात निश्चित की जाती थी, उस पर प्रत्येक व्यक्ति अपनी स्वीकृति की मोहर लगाता था। अधिवेशन की बैठकों में समय को इतना मुख्य नहीं माना गया जितना कि भाषणकर्त्ता के वक्तव्य को, जिससे किसी महत्वपूर्ण बात पर प्रकाश पड़ने की संभावना है। प्रत्येक वक्ता का दृष्टिकोण शान्तिपूर्वक सुना गया, उसका आदर किया गया और यथासंभव उसे आम ढांचे में बैठाने का प्रयत्न किया गया। इस प्रकार, सर्वानुमतिक निर्णय की भूमिका तैयार की गई। विभिन्न संस्कृतियों और विभिन्न रुचियोंवाले, संसार के प्रायः सभी मुख्य-मुख्य भागों से आनेवाले प्रतिनिधियों द्वारा समस्त प्रस्तावों का सर्वानुमति से पास किया जाना स्वयं एक महान् घटना है, जिससे सिद्ध होता है कि शान्ति एक ऐसी संयोजक शक्ति है जो समस्त विभिन्नताओं को संयुक्त कर देती है।......"

अधिवेशन का सबसे हृदयस्पर्शी भाग था—भारत और पाकिस्तान, अमरीका और कोरिया, ब्रिटेन और मलाया के प्रतिनिधियों का पारस्परिक सम्मिलन। भारत और पाकिस्तान के प्रतिनिधियों ने जिस घोषणापत्र पर हस्ताक्षर किये हैं, वह यह है:

> "एशियाई और प्रशान्त के देशों की शान्ति-परिषद में आये हुए, हम भारत और पाकिस्तान के प्रतिनिधि दृढ़तापूर्वक घोषणा करते हैं कि भारत और पाकिस्तान के बीच, बिना किसी अपवाद के, जितने

भी महत्वपूर्ण विवादास्पद विषय हैं उन्हें शान्तिपूर्ण उपायों से हल किया जा सकता है और अवश्य हल करना चाहिये। हम समझते हैं कि दोनों देशों के बीच जो संघर्ष चल रहा है, वह एशिया तथा समस्त विश्व की शान्ति को खतरा पैदा करता है और साम्राज्यवादी शक्तियों को हमारे मामलों में हस्तक्षेप करने का अवसर देता है, जो दोनों ही देशों के लिये हानिकारक है।...जिस तरीके से कश्मीर के प्रश्न को सुलझाने के लिये संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा नियुक्त किये हुए कमीशन और प्रतिनिधियों ने प्रयत्न किये गये हैं, उस तरीके को हम दोनों देशों के प्रतिनिधि सतर्कता से देखते हैं। यह तरीक़ा हमारे दोनों देशों के बीच की खाई को बढ़ाने का कारण हुआ है। कश्मीर के मामले में एंग्लो-अमरीकी शक्तियों का वास्तविक उद्देश्य भारत और पाकिस्तान के संघर्ष को तीव्र करना ही है, जिससे दोनों ही देश उनके आधीन बने रहें। इस परिस्थिति से दोनों ही का एकाधिपत्य खतरे में पड़ता है। इससे दोनों देश युद्ध के अड्डे और गोलाबारी की खूराक के लिए साम्राज्यवादियों की मांगों का शिकार बनते हैं। हम मानते हैं कि केवल जम्मू और कश्मीर रियासत की समस्त जनता को ही यह हक़ है कि वह अपने भाग्य और भविष्य का निर्णय करे और उसे अपने हक़ को स्वतंत्रतापूर्वक कार्यान्वित करने के लिये अवसर दिया जाना चाहिये। हम भारत और पाकिस्तान की जनता से अपील करते हैं कि वह तुरंत ही इस बात के लिये व्यवहारिक क़दम उठाये, जिससे जम्मू और कश्मीर रियासत की समस्त जनता समान और उचित आधार पर बिना किसी रुकावट, भय या पक्षपात के स्वतंत्रतापूर्वक अपने भविष्य का निर्णय कर सकने में समर्थ हो।..."

जब भारत और पाकिस्तान के प्रतिनिधियों ने घोषणापत्र पर अपने हस्ताक्षरों की मोहर लगाई, तो सभा भवन करतल ध्वनि से गूंज उठा था। सभी जी भर-भरकर गले मिल रहे थे और भावोद्रेक के कारण,-उनकी आंखें आर्द्र हो उठी थीं। भारतीय प्रतिनिधि-मण्डल के नेता, डा. किचलू और पाकिस्तानी प्रतिनिधि-मण्डल के प्रमुख सदस्य पीर मनकी शरीफ़ ने चीनी प्रतिनिधि-मण्डल के उपनेता कुओ मो जो के गले में माला पहनाई, टोपी उड़ाई और उन्हें माओ त्से तुंग की ध्वजा अर्पित की। परिषद-भवन अपार हर्ष ध्वनि और तालियों की गड़गड़ाहट से गूंज रहा था।

शान्ति-परिषद के अमरीकी प्रतिनिधियों द्वारा कोरियायी प्रतिनिधियों को उपहार दिया गया था। उपहार के लघु वृक्ष पर संदेश अंकित था : "अमरीकी जनता के अंग हम लोग, जो वीरता के प्रशंसक और क्रूरता के निन्दक हैं, आपसे अनुरोध करते हैं कि आप यह लघु वृक्ष कोरिया की उस भूमि में रोप दें, जो भूमि वीर जनता के रक्त से सिंचित है। हमारी भावना है कि जैसे-जैसे हमारी जनता के सौहार्द में वृद्धि हो, वैसे-वैसे यह वृक्ष भी बढ़े और यह तब तक विकसित होता रहे जब तक कि इसकी हरी-भरी शाखाओं की छाया में आपकी संतान आराम, सुख और शान्ति से विश्राम न करने लगे।"

आतिथ्य-प्रिय चीनी जनता के स्निग्ध प्रेम में सिक्त होकर, मालूम होता था कि शान्ति-परिषद के प्रतिनिधि अपने-आप में खोगये हैं। चीनी सरकार द्वारा दिये गये भोज के अवसर पर, उसका हर्षोल्लास से वालकों के समान नृत्य करने लगना तथा थ्येन आन् मन् में "पिंग वान् स्वै!" (शान्ति अमर हो!) के नारे लगाते हुए वालक-वालिकाओं को प्रेमाश्रुपूर्ण नयनों से आलिंगन करना, इसी तथ्य की ओर इंगित कर रहा था कि विभिन्न रुचियों के नाना देशों के निवासी एक विस्तृत तथा विशाल कुटुम्ब के सदस्य हैं और उनकी हार्दिक उत्कण्ठा शान्तिपूर्वक जीवन व्यतीत करने की है।

參加人民志願軍個人光榮全家光榮　　石可　　Woodcut by Shih Ko

Joining the Chinese People's Volunteers in Korea Glory to the Man and His Family

कोरियायी युद्ध

अमरीका के नये प्रेसीडेण्ट आइसनहावर जबसे कोरिया की यात्रा करके लौटे हैं, तबसे अमरीका की युद्ध सम्बंधी नीति स्पष्ट होगई है। आइसनहावर ने अपने बयान में कहा था कि कोरियायी युद्ध का एक फ़ौजी समाधान ढूंढना होगा और उसका अनिवार्य रूप से वीतनाम, मलाया और फ़ारमोसा (थाय् वन्) पर असर होगा। उनके वक्तव्य के अनुसार, अमरीका केवल चीन के

फ़ारमोसा पर ही कब्ज़ा न किये रहेगा, बल्कि बची हुई क्वो मिंतांग सेनाओं को चीन में उतार कर भी युद्ध को व्यापक बनाकर और सुदूर पूर्व तथा समस्त विश्व में शान्ति के लिये खतरा उत्पन्न करके, इन सेनाओं को वाशिंगटन की मंत्रणा का साधन बनायेगा।

कोरिया के युद्ध-मोरचे का निरीक्षण करते समय, आइसनहावर ने फ़ारमोसा के अमरीकी फ़ौजी सलाह-मशविरा-दल के प्रधान विलियम चेज को खास तौर से आमंत्रित किया था। 'एशिया एशिया के खिलाफ़' नामक अपनी नई योजना को सफल बनाने के लिए फ़ारमोसा-स्थित क्वो मिंतांग की फ़ौजें ही तैयार नहीं की गई हैं, बल्कि कोरिया में हथियारबन्द कम्युनिस्टों पर अधिक से अधिक फ़ौजी दवाव डालने के लिए एशिया के कम्युनिस्ट-विरोधी दलों भी का पूर्ण उपयोग किया जायगा। खास तौर से युद्ध क्षेत्रों में अमरीकी सेनाओं के स्थान पर दक्षिण कोरियायी सेनाओं को भेजा जायगा और जापानी फिलिपाइनी तथा दक्षिण-पूर्वी एशिया के देशों की सेनाओं को भी काम में लिया जायेगा। इसके सिवाय, इस युद्ध में अणुबम आदि नये अस्त्रों का उपयोग भी होगा, चीन के उत्तर पूर्वी प्रदेशों पर बमबारी की जायेगी, चीन के समुद्री तटों पर नाकेबन्दी की जायेगी; चीन में गुप्तचरों और ध्वंसात्मक प्रवृत्तियों की वृद्धि की जायेगी!

कोरिया के युद्ध में अमरीकी सैनिकों को न कटने देने का विश्वास दिलाकर ही, आइसनहावर अपने चुनाव में विजयी हुए थे। इसलिये, उन्होंने जनरल मैकआर्थर के परामर्श से एक ऐसा नुस्खा निकाला है जिससे कोरियायी युद्ध का अन्त भी न हो और इस युद्ध में अमरीकी सैनिकों की जगह दूसरे राष्ट्रों के सैनिक ही मरें-खपें। कहा गया था कि एशिया के युद्ध में एशिया-वासियों का ही इस्तेमाल किया जाय और च्यांग काई शेक की फ़ौजों को चीन की मुख्य भूमि पर आक्रमण करने के लिये उतार दिया जाय। जापान की भी पीठ ठोकी जाय, जिससे समस्त पूर्वी और दक्षिण-पूर्वी एशिया में गृह-युद्ध छिड़ जाय और अमरीका एशिया को गोला-बारूद तथा अस्त्र-शस्त्र बेचकर अपनी तिजोरियां भरता रहे। आइसनहावर की यह योजना कहां तक सफल हो सकेगी, यह तो वे खुद ही जानें, लेकिन अमरीका के हाथ के कठपुतले देशद्रोही च्यांग योजना को पढ़कर बड़ी उछल कूद मचाई थी। अपने निर्लज्जतापूर्ण में, उसने कहा था : "आइसनहावर ने फ़ारमोसा के राष्ट्रीय चीनियों

को चीन की मुख्य भूमि पर आक्रमण करने का अवसर प्रदान कर, केवल सैनिक दृष्टि से ही बुद्धिमत्ता नहीं दिखाई वरन् नैतिक दृष्टि से भी उचित कार्य किया है।... हम अपने मित्रों को आश्वस्त करते हैं कि राष्ट्रीय चीनी प्रजातंत्र (!) की सेनायें स्थल-युद्ध में किसी की सहायता की अपेक्षा नहीं करतीं। राष्ट्रीय चीन ने ऐसी सहायता की न तो कभी याचना की है और न सहायता की आशा रखकर ही वह मैदान में कूद रहा है।..."

कोरिया के युद्ध को सुदूर पूर्व और समस्त विश्व में फैलाने के लिये, चीन की मुख्य भूमि पर आक्रमण करने की उक्त योजना और आइसनहावर के अपने-आपको 'स्वतंत्र दुनिया' (!) का नेता घोषित करने की डींग मारने के फलस्वरूप ही शायद २५ नवम्बर, १९५१ को कोरिया में दोनों पक्षों के प्रतिनिधियों के रक्षा-दल पर आक्रमण न करने की संधि को भी १५ जनवरी, १९५२ को अमरीका ने अपने कृत्यों द्वारा रद्द कर दिया था और पानमुनजोम में शान्ति-वार्ता-परिषद् के स्थान पर लगातार आक्रमण करके कोरिया युद्ध-विराम की शान्ति-वार्ता का द्वार सदा के लिये बन्द करने की कोशिश की थी। इतना ही क्यों, बमबारी तथा पर्यवेक्षण के लिये चीन की सीमा में बार-बार अपने एअरक्राफ्टों को उड़ा कीटाणु-युद्ध जारी रखकर और दक्षिणी चीन के समुद्र में अपने समुद्री वायुयान तथा युद्ध पोत भेजकर, उसने चीनी जनता को लड़ने के लिये खुल्लमखुल्ला चुनौती दी थी।

२५ जून, १९५० को अमरीका ने कोरिया के खिलाफ़ आक्रमणात्मक युद्ध की घोषणा की थी। तीन वर्षों से संयुक्त राष्ट्र के झण्डों के नीचे, यह युद्ध चलाया जा रहा है। इस युद्ध में अमरीका ने अंतर्राष्ट्रीय क़ानूनों और जिनेवा समझौते के नियमों के खिलाफ़ जनसंहारक कीटाणु-बम, नैपाम बम आदि हर प्रकार के क्रूरतम अस्त्रों का अधिक से अधिक परिमाण में उपयोग किया है। जुलाई सन १९५२ से, पांच महीनों में कोरिया के ७८ नगरों पर बमबारी की जा चुकी है। पीकिंग की शान्ति-परिषद् के कोरियाई प्रतिनिधि-मण्डल के नेता, हान सुल या ने अपनी आंखों में आंसू भर कर कोरियाई जनता पर अमरीकी सैनिकों द्वारा तोड़े जानेवाले अत्याचारों का वर्णन करते हुए, बताया था कि उनके गांवों में एक भी घर नहीं बचा और एक भी ऐसी औरत नहीं बची थी जिसकी अस्मत कायम हो और जिसके गुप्त अंगों में संगीनें न भोंकी गई हों! लेकिन मानना होगा कि इन सब

भीषण अत्याचारों के बावजूद, अपने देश की आज़ादी की रक्षा के लिये कोरिया के वीर लड़ाकुओं ने जो कुर्बानियां की हैं, वे इतिहास में सोने के अक्षरों में लिखी जायेंगी।

अमरीकी जनता को भी इस युद्ध में कम क्षति नहीं पहुंची। पिछले दो वर्षों में केवल फ़ौजी खर्च के लिये वह युद्ध में २० अरब डॉलर फूंक चुका है। कोरियायी और चीनी जनता के स्वयंसेवकों के सुप्रीम कमाण्डर के संयुक्त वक्तव्य के अनुसार ३५ अक्तूबर, १९५२ तक संयुक्त राष्ट्र संघ के कुल मिलाकर ६६,१०,१३४ सैनिक इस युद्ध में हताहत हुए, जिसमें लगभग ३ लाख सैनिक अमरीकी थे। इसके सिवाय, अनेक वायुयान, टैंक, कवच-गाड़ियाँ और मोटर गाड़ियां नष्ट की गई या तब तक उन पर कब्ज़ा कर लिया गया था। अमरीका के लोग इस युद्ध को बन्द करने की बराबर मांग कर रहे हैं; क्योंकि एक ओर जहां युद्ध में उनके बेटे कटते हैं और युद्ध का सारा खर्च उनसे बढ़े हुये टैक्सों के रूप में वसूला जाता है, वहीं दूसरी ओर युद्ध की सामग्री तैयार करने वाले एकाधिकारी पूंजीपतियों की तिजोरियां भरती जाती हैं! ब्रिटेन आदि राष्ट्र भी अपने सैनिकों को युद्ध में भेजने से संकोच कर रहे हैं।

२५ जून, १९५० को जब अमरीका अपने कठपुतले सिंगमन री की सहायता से कोरिया के युद्ध-क्षेत्र में उतर पड़ा और ३८ वीं अक्षांस को पार कर, यालू नदी के किनारे चीन की सीमा पर पहुंच गया था, तभी अपने देश के रक्षार्थ तथा सुदूर पूर्व और समस्त विश्व की शान्ति-रक्षा के लिये चीनी जनता के स्वयंसेवकों ने अमरीकी आक्रमण का विरोध कर, कोरियायी जनता का साथ दिया। जून सन् १९५० और मई सन् १९५१ के बीच, अमरीकी सेना की करारी हारें हुई और उसे ३८ वीं अक्षांस से वापिस भाग जाना पड़ा था। मैकआर्थर एक अयोग्य जनरल साबित हुआ और उसे बरखास्त कर दिया गया था।

दुनिया के जनमत और अमरीकी जनता के दबाव से १० जुलाई, १९५१ को कोरिया में युद्ध-विराम की बात छेड़ी गई थी। यद्यपि इस बीच में अमरीकी सैनिकों ने बेहयायी से अन्तर्राष्ट्रीय क़ानून का उल्लंघन कर कोरिया पर फ़ौजी आक्रमण किये, सन् १९२५ के जिनेवा संधि-पत्र को भंग कर कोरिया और उत्तरी चीन में कीटाणु-बम बरसाये, कोजे के युद्ध-बन्दियों की निर्दयतापूर्वक हत्या की, ""दी के बिजलीघरों पर बमबारी की, ११ जुलाई, १९५२ को प्योंगयांग

पर बमवर्षा की, उत्तर-पूर्वी चीन में अनेक नागरिकों को हताहत किया और चीनी सरकार के सख्त विरोध करने के बावजूद, फिर उत्तर-पूर्वी चीन के जिलों में गैरकानूनी तौर पर अपने हवाई जहाज उड़ाकर जान-माल को क्षति पहुँचाई थी।

किन्तु कोरिया और चीन के प्रतिनिधियों की तत्परता के परिणामस्वरूप, डेढ़ वर्ष से अधिक अनवरत प्रयत्नों के पश्चात युद्ध-विराम के संधि-मसविदे की सभी धारायें दोनों पक्षों द्वारा तय करली गई थीं। उक्त मसविदे की ५१ वीं धारा में कहा गया था: "दोनों पक्षों के युद्ध-बन्दी युद्ध-विराम संधि के कार्यान्वित होते ही मुक्त कर दिये जायेंगे और यथाशीघ्र स्वदेश वापिस भेज दिये जायेंगे।" इसी प्रकार, ५२ वीं धारा में कहा गया था: "दोनों ही पक्ष इस बात का विश्वास दिलाते हैं कि युद्ध विराम संधि के कार्यान्वित होने पर, इस प्रकार मुक्त किये हुए और स्वदेश भेजे हुए युद्ध-बन्दियों का कोरियाई युद्ध में किसी भी प्रकार से उपयोग न किया जा सकेगा।"

ऐसी इच्छा व्यक्त करने से इन्कार करता है, तो उसके साथ अमानुषिकता का बरताव कर उसकी हत्या कर दी जाती है। इस प्रकार, हज़ारों कोरियायी और चीनी क़ैदी अपने प्राणों से हाथ धोचुके हैं या घायल और विकलांग दशा में पड़े तड़प रहे हैं। युद्ध-बन्दियों के प्रति रोंगटे खड़े कर देनेवाले, इन अत्याचारों की अमरीकी कैम्पों के भूतपूर्व सेनापति ब्रिगेडियर जनरल कौल्सन और डौड ने ही नहीं, बल्कि अमरीका और ब्रिटेन के संवाद-दाताओं तथा अमरीका का पक्षपात करनेवाली अन्तर्राष्ट्रीय रेड क्रास सोसायटी और इन कैम्पों से भागे हुए क़ैदियों ने भी पुष्टि की है। इन सब बातों से यही सिद्ध होता है कि स्वेच्छापूर्वक स्वदेश भेजना, ज़बरन स्वदेश न भेजना, इस प्रकार स्वदेश न भेजा जाय जिससे ज़बर्दस्ती करनी पड़े आदि कूटनीतिपूर्ण शब्दजाल के प्रयोगों द्वारा, कोरिया और चीन के ३३,००० युद्ध बन्दियों को ज़बर्दस्ती रोक कर अमरीकी उन्हें च्यांग काई शेक तथा सिंगमन री की तोपों की खाद्य-सामग्री बना देना चाहते हैं, जिससे कोरिया में युद्ध करनेवाले कोरिया और चीन के सैनिकों का हौसला पस्त होजाय और अमरीका का युद्ध बदस्तूर जारी रहे।

युद्ध के क़ैदियों के प्रश्न को सुलझाने के लिये, संयुक्त राष्ट्र संघ की जनरल असेम्बली के ७ वें अधिवेशन पर भारत सरकार द्वारा एक प्रस्ताव पेश किया गया था। इस प्रस्ताव की विशेष समीक्षा में न पड़कर, इतना कह देना काफ़ी होगा कि यदि जनरल असेम्बली में कोरिया और चीन के प्रतिनिधियों को बैठने का क़ानूनी हक़ दे दिया जाता, जिस पर नेहरू सरकार शुरू से ही जोर देती आई है, तो यह विषम परिस्थिति पैदा ही न होती।

दिसम्बर, १९५२ को इस प्रस्ताव को स्वीकृत करने के बाद तो अमरीका ने अपने युद्ध को और तेज़ कर दिया था। प्रेसीडेण्ट आइसनहावर के उपर्युक्त वक्तव्य इसके साक्षी हैं। अमरीकी और ब्रिटिश एजेंसियों के संवाद दाताओं के अनुसार, १४ अक्तूबर, १९५२ से ४ दिसम्बर तक कोरिया और चीन के ३७१ क़ैदी मारे या घायल किये गये थे। अमरीकी सैनिकों ने कोरिया के नगरों की बमबारी में वृद्धि कर दी, शान्ति-वार्ता के प्रतिनिधियों की गाड़ियों पर आक्रमण कर शान्ति-संधि को हमेशा के लिये खतम कर दिया, १४ दिसम्बर को पोनगम के युद्ध-बन्दियों की हत्या कर तथा जनवरी–मार्च सन् १९५३ में पुनः अणु-बम बरसाकर, उन्होंने अपनी युद्ध नीति को स्पष्ट कर दिया था। अपने

आक्रमण को विस्तृत बनाने के लिये, अमरीकी सरकार ने २८ नवम्बर, ८ दिसम्बर और १३ दिसम्बर, १९५२ को चीन के आकाश में एयरक्राफ्ट ले जाकर, चीनी जनता को हताहत किया था। २० दिसम्बर को फिर से उत्तर-पूर्वी चीन में कीटाणुओं की वर्षा की, १२ जनवरी, १९५३ को युद्ध सम्बंधी, जासूसी और ध्वंसात्मक प्रवृत्तियों को संगठित करने के लिये, वायुयानों द्वारा स्पेशल एजेंट भेजे और चीन की शान्ति भंग करने के लिये वह च्यांग काई शेक की सेनाओं को बढ़ावा देती रही है।

दरअसल, युद्ध के पीछे साम्राज्यवादी शक्तियाँ काम रही हैं। सन् १९३७-३८ में अमरीका ने इस मद में १ अरब डॉलर खर्च किये थे, जो उसके कुल बजट का १४% होता है। लेकिन, सन् १९५२-५३ में यह व्यय ५८ अरब डॉलर तक पहुँच गया, जो उसके कुल बजट का ७४% है! इसके अलावा, वह योरुप, अफ्रीका, एशिया, लैटिन अमरीका आदि में जगह-जगह अपने फ़ौजी अड्डे बना रहा है, अनेक फ़ौजी शर्तें और फ़ौजी संधियां कर रहा है, दुनिया के बाजारों पर अपना प्रभुत्व क़ायम करने के लिये नौकावरोध और नाकेबन्दी को मज़बूत बना रहा है और 'एशिया को एशिया के खिलाफ़' भिड़ाकर सारे विश्व में अपने साम्राज्य को फैलाने के स्वप्न देख रहा है। राष्ट्र के धन को जनसंहारक युद्धों और अस्त्र-शस्त्रों के उत्पादन में लगाकर, संसार का सबसे बड़ा धनी कहलाकर, अमरीका एक तथाकथित 'स्वतंत्र दुनिया' का नेता बनने की असफल चेष्टा कर रहा है। सन् १९४९ में कोरियायी युद्ध आरंभ होने के पूर्व, अमरीकी कारपोरेशन को २७ अरब डॉलर का मुनाफ़ा था, लेकिन जून १९५० में कोरियायी युद्ध के पश्चात यह मुनाफ़ा ४१ अरब तक पहुंच गया, १९५१ में ४२ अरब डॉलर से भी अधिक बढ़ गया था और अमरीका के प्रेसीडेण्ट की अध्यक्षता में काम करनेवाली आर्थिक सलाह-मशविरा देनेवाली कमिटी के अनुसार, सन् १९५२ में यह मुनाफ़ा ४६ अरब डॉलर तक पहुंच जायेगा।

अन्तर्राष्ट्रीय घटनायें बताती हैं कि विभिन्न पूंजीवादी देशों और उपनिवेशों तथा अर्द्ध-उपनिवेशों के पारस्परिक आन्तरिक विरोध दिन पर दिन अधिकाधिक उभरते जारहे हैं। इसीलिये जापान से लेकर दक्षिण-पूर्वी एशिया, अफ्रीका, योरुप तथा लैटिन अमरीका आदि देशों तक दूसरे देशों को गुलाम बनाकर रखने की अमरीकी साम्राज्यवादी नीति का एक स्वर से सर्वत्र

घोर विरोध होरहा है। इससे अमरीका के नेतृत्व में चलनेवाले साम्राज्यवादी दल की अन्दरुनी कमज़ोरियां साफ़ ज़ाहिर होगई हैं। इन अन्तर्विरोधों का समाधान न होना साम्राज्यवादी राष्ट्रों को आपस ही में युद्ध के लिये बाध्य कर सकता है। इस सम्बंध में स्तालिन ने अपनी महान् अन्तिम रचना **सोवियत संघ में समाजवाद की आर्थिक समस्यायें** में पूंजीवादी देशों को लक्ष्य करते हुए, कहा है कि ऊपर-ऊपर से प्रत्येक कार्य अच्छी तरह चलता हुआ दिखाई देगा, लेकिन यह समझना ग़लत है कि हमेशा के लिये ही ये कार्य अच्छी तरह चलते रहेंगे और ये देश हमेशा ही अमरीका का प्रभुत्व और दमन सहते रहेंगे तथा अमरीका के बंधन से मुक्ति प्राप्त करने का प्रयत्न न कर, अपने स्वतंत्र विकास के मार्ग का अनुसरण न करेंगे। कहने की आवश्यकता नहीं कि आइसनहावर के युद्ध सम्बंधी नये क़दम का पश्चिमी योरुप में विरोध होने से जो अमरीका और उसकी मित्र-मण्डली के बीच की खाई चौड़ी होरही है, उससे इसी कथन का समर्थन होता है।

युद्ध से कोरिया और चीन के निर्माण-कार्य में बाधा पहुंचती है, इसलिये ये दोनों लड़ाई के पक्षपाती नहीं हैं। इस सम्बंध में अपनी नीति स्पष्ट करते हुए, माओ त्से तुंग ने ऐलान किया है: "हम शान्ति चाहते हैं, लेकिन यदि अमरीकी साम्राज्यवाद अपनी अहंकारपूर्ण तथा अन्यायपूर्ण मांगों और आक्रमण को विस्तृत करने की योजना का परित्याग नहीं करता तो चीनी जनता का एकमात्र संकल्प यही होगा कि वह कोरियायी जनता के साथ कंधे से कंधा मिलाकर युद्ध करती रहे। इसका मतलब यह नहीं है कि हम युद्ध चाहते हैं, हम तत्काल युद्ध बन्द कर देना चाहते हैं। बाक़ी प्रश्न बाद में तय होते रहेंगे। परन्तु, अमरीकी साम्राज्यवाद को यह पसंद नहीं है। अच्छी बात है, तो लड़ते चलो! जितने भी वर्षों अमरीकी साम्राज्यवाद लड़ने को तैयार हैं। हम उस क्षण तक लड़ते रहेंगे जब तक कि वह अपना बोरिया-बिस्तर न बांध ले और जब तक चीनी तथा कोरियायी जनता को पूर्ण विजय हासिल न होजाये।"

अभी हाल में २२ फरवरी, १९५३ को संयुक्त राष्ट्र संघ कमाण्ड के सेनापति, जनरल क्लार्क ने कोरिया की जनसेना के सुप्रीम कमाण्डर किम इल सुंग और चीनी जनता के स्वयंसेवकों के कमाण्डर पेंग त ह्वाई को एक पत्र लिखा था सिमें दोनों ओर के बीमार तथा घायल युद्ध-बन्दियों की अदला-बदली का

मैडम सनयात सेन

चाउ एन लाई

मायिन हू

सुझाव पेश किया गया था। जनरल क्लार्क के इस प्रस्ताव को स्वीकार करते हुए, जनवादी चीनी सरकार के प्रधानमंत्री चाउ एन लाई ने कोरियायी युद्ध को बिलकुल ही समाप्त करने के लिये, एक अत्यन्त महत्वपूर्ण वक्तव्य प्रकाशित किया था। उसमें कहा गया था कि फ़ौरन ही युद्ध बन्द करके, जो क़ैदी स्वदेश लौटना चाहें उन्हें शीघ्र ही अपने देश वापिस भेज दिया जाये जो वापिस न जाना चाहें उन्हें निष्पक्ष देशों के हवाले कर दिया जाय। इस-वक्तव्य में यह भी कहा गया था कि जिनेवा संधि-पत्र की ११८ वीं धारा में जो कहा गया है कि युद्ध-विराम के पश्चात तत्काल ही युद्ध-बन्दियों को उनके देशों में वापिस भेज देना चाहिये—उस सिद्धान्त को वे अमान्य नहीं करते और साथ ही, संयुक्त राष्ट्र संघ-कमाण्ड का यह वक्तव्य भी स्वीकार करने को तैयार नहीं कि कोरिया और चीन के कुछ क़ैदी स्वदेश लौटने से इन्कार करते हैं; लेकिन फिर भी कोरिया में खूनी युद्ध का अन्त करने के लिये तथा कोरियायी-युद्ध से सम्बंधित सुदूर पूर्व और विश्व में शान्ति के हेतु ही, उन्होंने वह नया क़दम उठाया था।

कोरिया की जन सेना के सुप्रीम कमाण्डर किम इल सुंग और सोवियत संघ के विदेश-मंत्री मोलोटोव ने भी इस प्रस्ताव का समर्थन किया है। सारी दुनिया की जनता द्वारा इस प्रस्ताव का खूब स्वागत हुआ है। इस प्रस्ताव से कोरियायी और चीनी जनता की विश्वशांति की रक्षा की उत्कट भावना साफ़ व्यक्त होती है।

आशा है, संयुक्त राष्ट्र संघ आज युद्ध-विराम के लिये चलनेवाली वार्ता में अमरीका द्वारा अपनाई जानेवाली अड़ंगेबाजी की नीति को खतम करने के लिये शीघ्र ही कोई निश्चयात्मक क़दम उठायेगा।

चीन-सोवियत मित्रता

सोवियत संघ और चीन के पारस्परिक सम्बंध, पूंजीवादी देशों के समान, किसी कमज़ोर देश के आर्थिक या राजनीतिक स्वत्वों पर अधिकार प्राप्त कर उसे अपना उपनिवेश आदि बनाने के सिद्धान्त पर आधारित नहीं हैं। राजनीतिक व्यवस्था की समानता ही दोनों की मित्रता का प्रधान कारण है। सोवियत संघ की समाजवादी व्यवस्था में सर्वहारा वर्ग की डिक्टेटरशिप है, जबकि नये चीन की नई जनवादी व्यवस्था मज़दूर वर्ग के नेतृत्व में मज़दूरों और किसानों के पारस्परिक सहयोग तथा निम्न पूंजीपति वर्ग, राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग तथा देशभक्त जनवादी व्यक्तियों के संयुक्त मोर्चे पर आधारित है। दोनों जगह मज़दूर वर्ग नेता है। दोनों ही साम्राज्यवाद के विरोधी हैं। दोनों का चरम लक्ष्य कम्युनिज़्म की स्थापना है।

अन्तर्राष्ट्रीय पर्यवेक्षण से पता चलता है कि एशिया में जापान ही एक ऐसा राष्ट्र है जो सुदूर पूर्व में युद्ध छेड़ने में समर्थ है। इसलिये अमरीका अथवा अन्य किसी साम्राज्यवादी देश के लिए बिना जापान को युद्ध का आधार बनाये और जापानी सेना का सहयोग प्राप्त किये सुदूर पूर्व में युद्ध आरंभ करना संभव नहीं है। किन्तु, अमरीका और जापान के बीच हुई 'शान्ति-संधि' और 'सुरक्षा-समझौतों' से मालूम होता है कि अमरीका जापान में अपनी सैन्यशक्ति बढ़ा रहा है और जापान का पुनः शस्त्रीकरण कर रहा है। अमरीका के आदेशानुसार, जापान की योशीदा सरकार ने फ़ारमोसा-स्थित च्यांग काई शेक की सरकार के साथ भी संधि करली है और उन मित्र-राष्ट्रों के साथ 'शान्ति-संधि' करने से इन्कार कर दिया है जो द्वितीय विश्व युद्ध में उसके ख़िलाफ़ लड़े थे। इन सब कारणों से, चीन पर जापानी आक्रमण की आशंका तीव्र होउठी है। इस सम्बंध में जापानी आक्रमण-विरोधी सोवियत संघ की सातवीं वर्षगांठ के अवसर पर, माओ ने स्तालिन को जो संदेश भेजा था, वह उल्लेखनीय है: "इस समय, जब जापान की सैन्यशक्ति पुनः जीवित होरही है और जापान की आक्रमणात्मक शक्तियां अपना सिर उठा रही हैं, चीन और सोवियत संघ की अखण्ड मित्रता तथा दोनों के पारस्परिक

मेल-मिलाप द्वारा जापान अथवा जापान के साथ आक्रमणात्मक कार्य में सम्मिलित होनेवाले किसी भी राज्य के आक्रमण की पुनरावृत्ति अवश्य ही रुक सकेगी और सुदूर पूर्व तथा विश्व में शान्ति-रक्षा की यह निश्चित गारण्टी होगी।" इससे, चीन-सोवियत मित्रता का अन्तर्राष्ट्रीय मूल्य आंका जा सकता है।

चीनी सरकार द्वारा पोर्ट आर्थर के नौ सैनिक अड्डों से सोवियत सेना हटाने की अवधि में वृद्धि करने की मांग करने के पीछे सुदूर पूर्व पर जापानी आक्रमण का यही खतरा मुख्य कारण है। चीन और सोवियत संघ के विदेश-मंत्रियों में १५ सितम्बर, १९५२ को जो पत्र-व्यवहार हुआ था, उसे फरवरी सन् १९५० की नौ सैनिक अड्डों के बारे में हुई संधि का ही एक अंग मानकर, सोवियत संघ ने चीनी सरकार की उक्त मांग को स्वीकार कर लिया है। 'चीन-सोवियत मित्रता तथा पारस्परिक सहायता संधि' में स्पष्ट शब्दों में स्वीकार किया गया है कि जापानी साम्राज्यवाद और जापानी आक्रमणकारी के पुनः क्रियाशील होने और जापान के आक्रमणात्मक कार्य में किसी भी रूप में सम्मिलित होनेवाले किसी भी राज्य के आक्रमण को रोकने के लिये दोनों राष्ट्र सम्मिलित रूप से उद्यत रहेंगे।

चीन में जनवादी राज्य की स्थापना के पश्चात, सर्व प्रथम सोवियत संघ ने ही चीन को एक स्वतंत्र राष्ट्र मान्य किया था, जबकि अब तक भी संयुक्त राष्ट्र संघ की बैठकों में सम्मिलित होने का क़ानूनी हक़ उसे प्राप्त नहीं हुआ है! फरवरी सन् १९५० में, माओ त्से तुंग ने मॉस्को पहुंचकर जब स्तालिन से भेंट की तो उस समय दोनों देशों की जनता के हितों पर आधारित अनेक महत्वपूर्ण संधियां और समझौते हुए, जिन पर दोनों देशों की पारस्परिक मित्रता की दृढ़ नींव रखी गई थी। 'चीन-सोवियत मित्रता तथा पारस्परिक सहायता संधि' में कहा गया है कि मित्रता और सहयोग की भावना से प्रेरित और समानता, पारस्परिक लाभ तथा राष्ट्रीय स्वाधिपत्य, प्रादेशिक अखण्डता तथा एक-दूसरे के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप न करने के सिद्धांतों के अनुसार, संधि करनेवाले दोनों देशों के बीच आर्थिक और सांस्कृतिक सम्बधों को विकसित और दृढ़ करने और अन्य सभी प्रकार की आर्थिक सहायता देने तथा आवश्यक आर्थिक सहयोग करने की प्रतिज्ञा करते हैं।

इस शर्तनामे के अनुसार, सोवियत संघ ने चीन को १% वार्षिक व्याज के

हिसाब से मशीनों तथा औद्योगिक सामग्री के रूप में ३० करोड़ अमरीकी डॉलर कर्ज़ दिये हैं। यह रक़म कच्चे माल, चाय, सोना और अमरीकी डॉलरों के रूप में १० वर्षों के अन्दर वापिस दी जायेगी। १५ सितम्बर, १९५२ को सोवियत संघ के विदेश-मंत्री विशिंस्की और जनवादी चीन के विदेश-मंत्री चाउ एन लाई के बीच हुए पत्र-व्यवहार के अनुसार, छांग छुन् रेलवे भी बिना किसी मुआविज़े के चीनी सरकार को सौंप दी गई है। गत दो वर्षों से सोवियत संघ के विशेषज्ञ उक्त रेलवे को सुसंगठित बनाने की चेष्टा कर रहे हैं, जिससे उत्पादन में वृद्धि और व्यय में कमी होने से राष्ट्र-निर्माण के कार्यों में बहुत सहायता मिली है।

फिर, अमरीका द्वारा चीन के विरुद्ध नाकेबन्दी और नौकावरोध कर देने पर, चीन को अनेक प्रकार से सोवियत संघ का सहयोग प्राप्त हुआ है। गत तीन वर्षों में सोवियत संघ के रचनात्मक कार्यों के सांस्कृतिक, वैज्ञानिक तथा टैकनीकल ज्ञान के अनेक कष्टसाध्य अमूल्य अनुभव चीन को अनायास ही उपलब्ध होगये हैं, जिससे चीन अत्यंत थोड़े समय में अपने उद्योग-धंधों और आर्थिक पुनर्निर्माण में बहुत कुछ अंशों तक सफल होसका है। इस दिशा में सोवियत संघ के विशेषज्ञों ने चीन में रहते हुए चीन के अनेक कारखानों के श्रमिकों को शिक्षित करके, अपने अनुभवों से लाभ पहुंचाया है। शीघ्रता से धातु काटनेवाले सोवियत के तरीक़े को अपनाने से, चीन के मशीन-उद्योग में काफ़ी उन्नति हुई है। सोवियत के विशेषज्ञ कोवलेव की पद्धति से उद्योग-धंधों की उत्पादक-शक्ति में वृद्धि हुई है। गत दो वर्षों में, छांग छुन् रेलवे में सोवियत विशेषज्ञों ने १६,००० कार्यकर्त्ताओं को शासन-व्यवस्था के उन्नत तरीक़ों की ट्रेनिंग दी है। सन् १९५१ के अन्त तक, इस लाइन पर सोवियत की अनेक समुन्नत पद्धतियों का प्रयोग होचुका है, जिससे उत्पादन में वृद्धि हुई और रेलवे को लाखों रुपयों का मुनाफ़ा हुआ है। छंग तू चुंग चिंग रेलवे पर भी अनेक पुलों, सुरंगों, रेल की पटरियों आदि के निर्माण में इन उपायों का सफल प्रयोग किया गया है। खेती-बारी के सम्बंध में भी सोवियत के तरीक़े बहुत कारगर सिद्ध हुए हैं, जिनसे चीन की पैदावार में आशातीत उन्नति हुई है। इसी प्रकार नदियों की बाढ़ रोकने, उनके जल को संचित करके सिंचाई करने तथा विद्युत-निर्माण आदि का काम लेने के कार्यों में सोवियत के समुन्नत विज्ञान के अनुभवों से चीन को बहुत लाभ पहुँचा है। संस्कृति, साहित्य, शिक्षा-

प्रणाली, विज्ञान तथा स्वास्थ सम्बंधी योजनाओं में भी चीन को सोवियत के विशेषज्ञों की अनुभूत योजनाओं से सहायता मिली है।

पंचवर्षीय योजना को पूर्ण करने के लिये अपने देशवासियों का आह्वान करते हुए, माओ त्से तुंग ने कहा है: "हमारे सामने मुश्किल काम है और हमारा अनुभव भी पर्याप्त नहीं है। इसलिये, हमें परिश्रमपूर्वक सोवियत संघ के उन्नत अनुभवों का अध्ययन करना चाहिये। चाहे कोई कम्युनिस्ट पार्टी में हो या पार्टी के बाहर, पुराना केडर हो या नया, टैकनीक का विशेषज्ञ हो या बुद्धिजीवी, मज़दूर हो या किसान, हम सबको सचाई के साथ सोवियत संघ से शिक्षा लेनी चाहिये। केवल मार्क्स, एंल्गेस, लेनिन और स्तालिन के सिद्धान्तों का ही नहीं, बल्कि हमें सोवियत संघ की उन्नत वैज्ञानिक टैकनीक का ज्ञान प्राप्त करना भी ज़रूरी है।..."

चीन में नई सरकार बनने के अनेक वर्षों पूर्व ही माओ त्से तुंग ने अन्तर्राष्ट्रीय संयुक्त मोरचा क़ायम करने के लिये सोवियत संघ तथा प्रत्येक जनवादी देश के साथ सहयोग करने के महत्व को इन शब्दों में स्वीकार किया था: "अन्तर्राष्ट्रीय सहायता के बिना विजय प्राप्त करना, एक ग़लत विचार है। जिस युग में साम्राज्यवाद मौजूद है, उस युग में किसी भी देश में जनता की सच्ची क्रान्ति तब तक विजयी नहीं हो सकती जब तक कि उसे अन्तर्राष्ट्रीय क्रान्तिकारी शक्तियों से विभिन्न रूपों में मदद न मिले। यदि किसी प्रकार विजय प्राप्त भी होजाय, तो बिना इस मदद के उसे सुरक्षित नहीं रखा जा सकता।"

६ मार्च, १९५३ की दोपहर के ढाई बजे विश्व शान्ति के सेनानी, सोवियत संघ के महान् निर्माता जोसेफ़ विस्सारिओनोविच स्तालिन की मृत्यु का समाचार पाते ही चीन वासियों की जो हालत हुई थी, उससे शान्ति और सोवियत संघ के प्रति चीनी जनता की शुभेच्छाओं का अनुमान किया जा सकता है। पीकिंग नगर के घरों और दफ़्तरों के राष्ट्रीय झण्डे आधे झुका दिये गये थे। सिनेमा और थियेटर बन्द होगये तथा मंदिरों, मसजिदों और गिरजाघरों में प्रार्थनायें की जाने लगीं थीं। समस्त जनता अथाह शोक-सागर में डूब गई थी और ऐसा मालूम हुआ कि मानो हर किसी का कोई निजी व्यक्ति खोगया हो!

९ मार्च, १९५३ को पीकिंग के थ्येन् आन् मन् में अपने परम आदरणीय, प्रिय मित्र और शिक्षक की स्मृति में शोक व्यक्त करने के लिये ५ लाख नर-

नारियों की भीड़ उपस्थित हुई थी। दोपहर के १२ बजे से ही मज़दूर, किसान, विद्यार्थी, कलाकार, लेखक, अध्यापक, नवयुवक, महिलायें तथा बालक-बालिकायें सभी चारों ओर से पंक्तिबद्ध होकर, गंभीर और शान्त भाव से अपने-अपने स्थानों पर आकर बैठ रहे थे। आज उनके हाथों में झण्डे, चित्र या उनकी सफलताओं के सूचक चिह्न नहीं थे। राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय दिवसों पर हर्ष और करतल ध्वनि से शब्दायमान होनेवाला, मूक मैदान अपनी अन्तर्व्यथा व्यक्त करता हुआ जान पड़ता था।

थ्येन् आन् मन् पर काली किनारवाले आठ लाल झण्डे थे। शाही महल के द्वार पर स्तालिन का एक बृहदाकार चित्र टंगा था, जिसके नीचे एक काली ध्वजा पर रजनाक्षरों में लिखा हुआ था: "साथी स्तालिन को चिर गौरव प्राप्त हो!" चित्र के पार्श्वभाग में, सोवियत संघ और जनवादी चीन के काली किनारवाले झण्डे लगे थे। चित्र के दोनों ओर दो गैलरियाँ थीं, जो सहस्त्रों मालाओं से भर गई थीं। लाखों स्त्री-पुरुषों का जमघट होने पर भी, मैदान बिलकुल निःशब्द था।

शोक सभा में कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय समिति के सदस्य, केन्द्रीय जन सरकार के मुख्य सदस्य, जनता की सलाह-मशविरा देनेवाली समिति की राष्ट्रीय कमिटी के सदस्य, जनमुक्ति सेना के सैनिक, चीन-सोवियत मित्र-मंडल के प्रमुख सदस्य, समस्त चीन श्रमिक संघ और अनेक जनवादी पार्टियों के प्रतिनिधि, सोवियत संघ के राजदूत, चीन के निर्माण में सहयोग देनेवाले सोवियत विशेषज्ञ तथा अन्तर्राष्ट्रीय अतिथि दिवंगत महापुरुष को अपनी-अपनी श्रद्धांजलियां समर्पित करने के लिये उपस्थित हुए थे। ४ बजकर ५० मिनट पर माओ त्से तुंग और चू तेह आदि के आने के पश्चात, पीकिंग के मेयर ने सभा के आरंभ की घोषणा की थी। ठीक ५ बजे (पीकिंग समय), जबकि मॉस्को परेड स्कायर में स्तालिन के शव को सैनिक-गाड़ी में ले जाया जारहा था, २८ तोपों की सलामी दी गई थी। उपस्थित नर-नारियों के मस्तक आदरपूर्वक नत होगये थे। भोंपू बजते ही, चीन भर के खेतों, कारखानों, मिलों, खानों, रेलगाड़ियों और सरकारी संस्थाओं में ५ मिनिटों के लिये सभी काम बन्द कर दिया गया, रास्ते बन्द होगये और चीनी जनता ने अपने 'गुरु और शिक्षक' की याद में मौन खड़े होकर, श्रद्धांजलि अर्पित की थी।

माओ त्से तुंग ने स्तालिन को माला अर्पित की थी। जनरल चू तेह तथा अन्य वक्ताओं के भाषणों के बाद, अन्तर्राष्ट्रीय गीत गाया गया था। सभा विसर्जन होने के बाद, अपार जनराशि अपने शिक्षक के बारे में मौन भाव से सोचती हुई और अपूर्ण कार्य को पूर्ण करने की प्रतिज्ञा मन ही मन दोहराती हुई गंभीर भाव से लौटी थी।

स्तालिन के सम्बंध में अपने **महान् मित्रता** नामक लेख में माओ त्से तुंग ने जो उद्गार व्यक्त किये हैं, वे उल्लेखनीय हैं: "लेनिन के गुजर जाने के पश्चात, साथी स्तालिन दुनिया के कम्युनिस्ट आन्दोलन में हमेशा एक केन्द्रीय व्यक्ति रहे हैं। हम लोग उनके चारों ओर जमा होजाते, निरन्तर उनकी सलाह लेते रहते और सदा उनकी कृतियों से विचारात्मक शक्ति ग्रहण करते थे। पूर्व की शोषित जनता के प्रति साथी स्तालिन का हृदय प्रेम से पूर्ण था। अक्तूबर क्रान्ति के पश्चात, "पूर्व को मत भूलो!"—यह उनका महान् नारा था। सभी लोग जानते हैं कि साथी स्तालिन चीनी जनता से अत्यन्त प्रेम करते थे और चीनी क्रान्ति की असीम शक्ति में विश्वास करते थे। चीनी क्रान्ति की समस्याओं को हल करने के लिये, उन्होंने अपनी उत्कृष्ट बुद्धि का उपयोग किया था। लेनिन और स्तालिन के सिद्धान्तों के अनुकरण से और महान् सोवियत संघ तथा अन्य समस्त देशों की समस्त क्रान्तिकारी शक्तियों की सहायता से चीनी कम्युनिस्ट पार्टी और चीनी जनता ने कुछ वर्षों पूर्व अपनी ऐतिहासिक विजय में सफलता प्राप्त की है।"
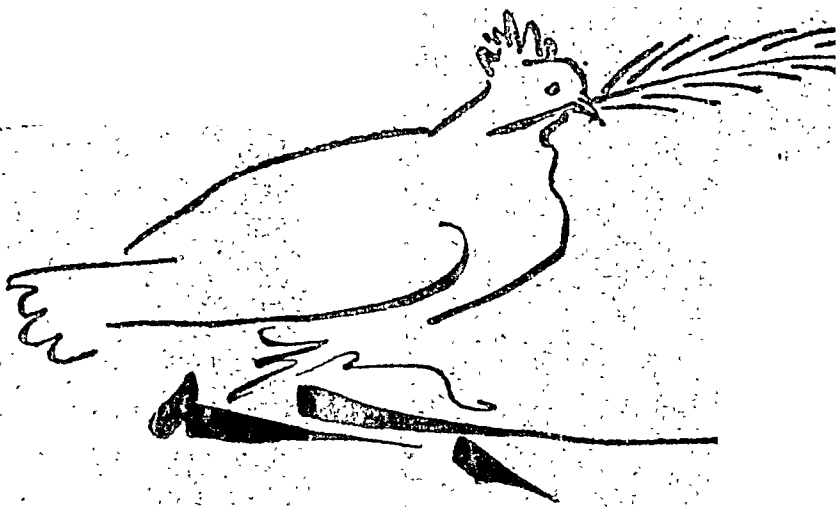
शान्ति की चाह

चीनी जाति सदा से अत्यंत श्रमशील और शान्तिप्रिय जाति रही है पिछले पांच हज़ार वर्षों के इतिहास में उसने अनेक विचारक, वैज्ञानिक आविष्कर्ता और राजनीतिज्ञों को जन्म दिया है। उसने हस्तकला आदि के क्षेत्र में जग-विख्यात आविष्कार किये हैं। किन्तु सदियों तक युद्धख़ोर सामन्तों के दमन का शिकार बने रहने के कारण, एशिया का यह भू-खण्ड आगे न बढ़ सका था। जब यह साम्राज्यवादी ताक़तों के पंजे में आया तो उसका खूब दोहन किया गया। जापान, ज़ारशाही रूस, ईंगलैण्ड, अमरीका, फ्रांस, जर्मनी, इटली आदि कोई भी नहीं है, जिसने चीन के किसी न किसी हिस्से को छीनकर उसे अपना अर्द्ध-उपनिवेश न बनाना चाहा हो। यह विस्तृत भूखण्ड विदेशियों के व्यापार की मण्डी बन गया था। इसके बन्दरगाहों पर उनका कब्ज़ा होगया और उन्हें अपनी फ़ौजें तथा जहाज़ी बेड़े रखने तक के अधिकार भी मिल गये थे।

साम्राज्यवादियों की इस स्वार्थमय नीति का परिणाम यह हुआ कि औद्योगीकरण के अभाव में, चीन की अर्थ-व्यवस्था एक पिछड़ी हुई ग्राम्य अर्थ-व्यवस्था से आगे न बढ सकी थी। सन् १९२५ में चीन में कपड़े की मिलों की संख्या कुल

मिलाकर ७७ और सन् १९३० में कुल ८१ थी। सन् १९३७ में उद्योग-धंधों में लगी हुई कुल पूंजी ⅙ से अधिक न थी। दरअसल चीन के जमींदार और नौकरशाह अपनी पूंजी को खेती में लगाना ही अधिक हितकर समझते थे, क्योंकि इससे उन्हें किसानों से मनमाना लगान मिल सकता था। यातायात के साधनों के विषय में भी यही बात थी। सन् १८९४ में समस्त चीन में कुल १९५ मील लम्बा रेलमार्ग था, १९०३ में २,७००, १९११ में ५,८०० और १९३७ में यह १०,००० मील से आगे न बढ़ सका था!

इस पिछड़ी हुई अर्थ-व्यवस्था का चीन के राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन पर प्रभाव पड़ना लाजिमी था। किन्तु, चीन के भाग्यविधाता अपने राष्ट्र की इस कमजोरी से परिचित थे। माओ त्से तुंग ने इसीलिये साफ़ शब्दों में कहा था कि शोषण की समस्त सामंती व्यवस्था को एक रात में खतम नहीं किया जा सकता। भूमि-सुधार के विषय में भी उन्होंने जल्दबाजी से काम नहीं लिया और परिस्थितियों के अनुकूल होजाने पर ही इस आन्दोलन को आगे बढ़ाया गया है।

ही के हितों का ध्यान रखते हुए, देश के औद्योगीकरण के लिये उत्पादन-वृद्धि को ही मुख्य माना गया है।

चीन की वर्तमान राजनीतिक गतिविधि का ज्ञान प्राप्त करने के लिये, अर्थ-व्यवस्था की यह पृष्ठभूमि समझना आवश्यक है। वस्तुतः, चीन अभी संक्रान्ति काल से गुज़र रहा है। च्यांग काई शेक के भ्रष्ट शासन से मुक्त हुए उसे केवल तीन ही वर्ष हुए हैं। वह कोरियायी युद्ध में संलग्न है। उसे अभी फ़ारमोसा को मुक्त करना बाक़ी है। फिर भी, वह कठिन परिश्रम द्वारा धीरे धीरे अपनी कमज़ोरियों को दूर करके खड़ा होरहा है। तीन हज़ार वर्षों के शोषण और उत्पीड़न से ग्रस्त कोई भी देश जो कुछ कर सकता था, चीन ने उससे अधिक ही तीन वर्षों के काल में पूरा किया है। एशिया का महान् देश, भारत का पड़ोसी मित्र चीन जाग उठा है और नव निर्माण के लिये एक अभिनव प्रयोग कर रहा है।

नये चीन में आलोचना और आत्मालोचना को बहुत महत्व दिया जाता है। इस सम्बंध में १९ अप्रैल, १९५० के 'रन मिन् र पाव्' नामक पीकिंग के दैनिक पत्र में प्रकाशित, चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमिटी के प्रस्ताव में कहा गया था कि जनता को कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्यों की खुलेआम आलोचना करने का पूर्ण अधिकार है। इस पत्र के सम्पादक के नाम प्रति दिन अनेकों आलोचनात्मक पत्र आते हैं। सम्पादक स्वयं इन आलोचनाओं की जांच-पड़ताल करके, आलोचकों को उत्तर देता है और खास पत्रों को प्रकाशित कर देता है। जिस सरकारी अफ़सर, सार्वजनिक संस्था या व्यक्ति विशेष की आलोचना की जाती है, उसका फ़र्ज होता है कि वह अपनी आलोचना का स्पष्टीकरण करे या उसे सार्वजनिक रूप से स्वीकार करले। अभी कुछ दिनों पूर्व विवाह-क़ानून की धाराओं का सोच-समझकर प्रयोग न करने के कारण, उक्त पत्र में सरकारी केडरों आदि की तीव्र आलोचना की गई थी। इसी प्रकार गांवों के किसानों से टैक्स आदि वसूल करते समय, अदालती काम करते समय और जिम्मेदारी के अन्य कामों में अनुभवशून्यता आदि कारणों से अपना कर्त्तव्य ठीक-ठीक पालन न करने पर, ये लोग सार्वजनिक आलोचना के भागी हुए हैं। कभी-कभी तो इस प्रकार के अपराध काफ़ी गंभीर होते हैं, जिनमें पारस्परिक द्वेष भी एक कारण रहता है। सरकार

को अनुकूल बनाकर आगे बढ़ने की तीव्र इच्छा पैदा होगई है। वयक्तिक दुख-सुख की परवाह न कर, जनता की उन्नति के लिये सामूहिक प्रयत्नों और नियोजित रूप से रचनात्मक उद्देश्य की सिद्धि के लिये श्रमशीलता में दिनों-दिन वृद्धि होने लगी है। पिछले १०० वर्षों में अपने राष्ट्र की आज़ादी की रक्षा के लिये चीनी जनता ने इतने भीषणतम संघर्षों का सामना किया है कि अब वह अपनी कष्टसाध्य आज़ादी और शान्ति की प्राणपण से रक्षा करना चाहती है; किसी भी कीमत पर उसे खोने को तैयार नहीं है।

चीन में बेकारी बिलकुल ख़तम होगई है—यह कहना जरा कठिन है। हां, इस समस्या को हल करने के लिये विशेष रूप से प्रयत्न किया जारहा है। श्रम कर सकनेवालों को प्रायः नौकरी प्राप्त करने में कठिनाई नहीं होती। अपनी देशव्यापी विविध योजनाओं को प्रसारित करके, सरकार ने इतना अधिक काम पैदा कर दिया है कि कितने ही विभागों के लिये तो उसे पूरे कार्यकर्त्ता भी नहीं मिल पाते। चीनी सरकार बेकारी दूर करने के लिये संतति-निरोध के उपायों को स्वीकार नहीं करती।

चीन में शिक्षा की उन्नति बहुत तेज़ी के साथ होरही है। भले ही शिक्षितों में पांडित्य न हो, लेकिन विनम्रता, श्रम-शीलता और राष्ट्र सेवा की अटूट लगन अवश्य है। चरित्र-गठन और राष्ट्र-निर्माण को मुख्य मानकर ही, चीन के स्कूल-कालिजों में शिक्षा दी जाती है। किसी भी विषय को कम से कम समय में कैसे सीखा जा सकता है, आजकल इसके अनेक प्रयोग चीन की शिक्षण-संस्थाओं में किये जारहे हैं। श्रमजीवियों के शिक्षा और संस्कृति के स्तर में वृद्धि करने के लिये भरसक प्रयत्न किया जाता है। मौजूदा सरकार की कोशिश यही रहती है कि कमज़ोर विद्यार्थियों को कैसे आगे बढ़ाया जाये। नये चीन में कुशलतापूर्वक कार्य न कर सकने के कारण किसी कारख़ाने के मज़दूर या किसी स्कूल-कालिज के अध्यापक को नौकरी से बरख़ास्त नहीं किया जाता, बल्कि सहानुभूतिपूर्ण उपायों द्वारा उसके कार्य को सुधारने की कोशिश की जाती है। स्कूल-कालिजों के कमज़ोर विद्यार्थियों को भी इसी तरह आगे ले जाया जाता है। इससे, चीन में दूसरों को हटाकर स्वयं आगे बढ़ने की गला-काटू प्रतियोगिता की भावना नहीं दिखाई देती।

नये चीन की स्त्रियों ने भी मुक्ति प्राप्त की है। वे अब केवल गृहिणी ही नहीं रह गई हैं, बल्कि कार्य का प्रत्येक क्षेत्र उनके लिये खुल गया है।

वे अब आर्थिक दृष्टि से स्वतंत्र हैं और स्वेच्छापूर्वक विवाह कर सकती हैं। उनका नैतिक स्तर बहुत ऊँचा है। पुरुषों के साथ प्रतियोगिता करने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। उनके बच्चों के पालन-पोषण के लिये शिशुगृह खुले हैं, जिससे कि वे निश्चिंत होकर राष्ट्र-निर्माण के कार्यों में हाथ बँटा सकें।

चीन के इतिहास में पहली बार, बालिग मताधिकार के आधार पर जनतांत्रिक चुनाव होने जारहे हैं। इन चुनावों में १८ वर्ष से अधिक उम्र का कोई भी व्यक्ति-- वह स्त्री हो या पुरुष, किसी भी जाति का हो, कोई भी पेशा करता हो, किसी भी धर्म को मानता हो, कितना ही पढ़ा-लिखा हो, सरकारी टैक्स भरता हो या नहीं--अपना मत दे सकेगा। इसमें अल्पसंख्यक जातियों और समुद्रपार रहनेवाले चीनियों की सीटें भी सुरक्षित रहेंगी। छोटे से छोटे गांव के व्यवस्थापक से लेकर केन्द्रीय सरकार तक, सभी सदस्यों का चुनाव होगा। चुनावों का सारा खर्च सरकारी खजाने से दिया जायेगा। जनता शासन का कार्यभार चलानेवाली सभी स्थानीय जनसमितियों का चुनाव करेगी। इनके आधार पर ही समस्त चीन की जनसमिति का चुनाव होगा।

यही समिति विधान की रचना करेगी, राष्ट्र-निर्माण की पंचवर्षीय योजना को स्वीकार करेगी और केन्द्रीय सरकार को चुनेगी। इन चुनावों के द्वारा नौकरशाहों और अनुशासन भंग करनेवालों का पर्दाफ़ाश होगा, जनवादी सरकार और जनता का सम्पर्क बढ़ेगा, जनवादी डिक्टेटरशिप को बल मिलेगा, अल्पसंख्यक जातियों के संगठन में वृद्धि होगी और एक सुदृढ़ जनवादी संयुक्त मोरचा स्थापित हो सकेगा।

पंचवर्षीय योजना के सफल होने पर, चीन अपनी कृषिप्रधान अर्थव्यवस्था से औद्योगीकरण की ओर अग्रसर होगा। तब चीन का श्रमजीवी और कृषक वर्ग अधिक आराम की ज़िन्दगी व्यतीत करेगा, जनता के रहनसहन के स्तर में उन्नति होगी, शासन और संगठन में कुशलता की वृद्धि होगी, शिक्षा और संस्कृति का स्तर उन्नत होगा, साहित्य और कला का अधिक विकास होगा, सर्वसाधारण का स्तर उन्नत होगा, जीवन सुखी बन सकेगा। किन्तु यह ऐतिहासिक और अभिनव प्रयोग उसी हालत में सम्भव है, जब चीन को शान्तिपूर्वक नव निर्माण का अवसर प्रदान किया जाये। इसीलिये, चीन शान्ति की रक्षा पर कटिबद्ध है।

चीनी शब्दों का उच्चारण

हमारी हिन्दी भाषा में चीनी शब्दों के उच्चारण की प्रचलित प्रणाली अंग्रेज़ी से ली गई है। चीन में इन शब्दों का उच्चारण प्रायः दूसरा ही होता है। सही यही होगा कि चीनी शब्दों का हमारा अपना उच्चारण क्रमशः चीनी उच्चारण के क़रीब पहुंचता जाये। इसीलिये, हम इस पुस्तक में आये चीनी शब्दों के चीनी उच्चारण भी दे रहे हैं। पुस्तक में अधिकतर प्रचलित उच्चारणों को ही स्थान देने की चेष्टा की गई है, जिससे पाठकों को दुरुहता का सामना न करना पड़े; मुख्य चीनी उच्चारण कोष्ठ में दे दिये गये हैं।

पृष्ट संख्या	प्रचलित उच्चारण	चीनी उच्चारण
५	नानकिंग	नान् चिङ्
८	ह्वांग ह्वा कांग	ह्वाङ् ह्वा काङ्
९	छिन्	छिङ्
	क्वो मिंतांग	क्वो मिङ् ताङ्
१०	च्यांग काई शेक	च्याङ् काई षेक
११	छांग शा	छाङ् षा
	ह्वांग हो	ह्वाङ् ह
१४	पीपिंग	पै फिङ्
१५	हूनान	हूनान् (Honan)
	शांग	षाङ्
१६	शि च्याव कुङ् ग्वाने	शि च्याव् कुङ् ग्वान्
२१	लाव हू	लाव् हू
२२	शंघाई	षाङ् हाय्
२३	ल्यू शाओ ची	लियू षाव् छी
२७	चू तेह	चू त

पृष्ठ संख्या	प्रचलित उच्चारण	चीनी उच्चारण
३१	तिंग सी लिंग	तिङ् शी लिन्
३३	चुंकिंग	चुङ् चिङ्
४४	फुरन	फु रन्
५८ और ६६	फ्झ्ट	फ्ट
६२	मि-लो	मि ल
६६	चंग चन् वो	चङ् चन् त्वो
७०	छेंग छेन टो	चङ् चन् त्वो
७२	शान्सी (शेन्सी)	षान्सि
७३	श्याव् र् है	श्याव् अर् है
७४	हान् फेंग	हान् फङ्
७५	लि यू पाय्	लियू पाय् यू
	वेइ वेइ	वै वै
	तू पिन्	तू यिन्
७७	युआन छु शुआन	श्वान् छ्यु श्वान्
	यांग चि	श्याङ् चि
	तांग मिंग ह्वांग	थाङ् मिङ् ह्वाङ्
	फ़ी या चि	फ़ी पा चि
७८	सान् छा खौ	सान् छ्या खौ
	जेन	रन्
	चिआओ चान्	च्याव् चान्
	सुंग वू कुंग	सुङ् वू खुङ्
७९	लिन् षाव् छुन्	लि षाव् छुन्
८०	चुआन शु	स्स् छ्वान्
	क्यांग सू	च्याङ् सू
	अन्हवेई	आन् हुई
	चेकियांग	च च्याङ्
८१	ल्यांग शान् पो	ल्याङ् षान् पो

पृष्ठ संख्या	प्रचलित उच्चारण	चीनी उच्चारण
८३	मंग च्यांग नू	मङ् च्याङ् न्यू
	चिन्	छिन्
	लि श्यांग श्यांग	वाङ् क्वे लि श्याङ् श्याङ्
८८	हो पेइ	हू पै (Hopei)
९२	न्येह अर्	न्ये अर्
९४	षन् यौ वेइ	षन् यौ वै
१००	चुंग पिन	चुङ् यिन
	सुइ	स्वै
	वांग वेइ	वाङ् वै
११३	थाय् फिंग छ्याओ	थाय् फिङ् छ्याव्
१२२	यि और पू	यि पू (एक ही शब्द है)
१२३	क्यांग सू	च्याङ् सू
१३२	हारविन	हार् विन्
१५१	क्यांग यिन्	च्याङ् यिन्
१५९	नानकिंग	नान् तिङ्
१६२	थांग थाय् चुंग	थाय् थाय् चुङ्
१६६	कान् सू	कान् सु
१७४	लिन् हुई चाय्	लिङ् हुई चाय्
१९६	छ्येन् चन् यिंग	छ्येन् यिङ्
२१२	हनान	हनान् (Hunan)
	क्वांग सी	क्वाङ् शी
२२०	क्यांग शी	च्याङ् शी

* **गं** के स्थान पर **ङ्** और **व** के स्थान पर **ओ** का उच्चारण चीनी उच्चारण के अधिक निकट है ।